

UNIVERSAL
LIBRARY

OU 186806

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 300.7
T 54 B

Accession No. H 3193

Author त्यागी , गुरुसरन दास

Title सामाजिक अध्ययन तथा नागरिक शास्त्र का

शिक्षण 196९

This book should be returned on or before the date
last marked below.

सामाजिक अध्ययन
तथा
नागरिक शास्त्र का शिक्षण

**सामाजिक अध्ययन
तथा
नागरिक शास्त्र का शिक्षण**
(Teaching of Social Studies and Civics)
For B. T., L. T., B. Ed. and Others

लेखक
श्री गुरुसरनदास त्यागी, एम० ए०, एम० एड०
लेक्चरर इन ऐजुकेशन
आर० ई० आई० ट्रेनिंग कॉलेज
दयालबाग, आगरा



विनोद पुस्तक मन्दिर
हॉस्पिटल रोड, आगरा

प्रकाशक—

राजकिशोर अग्रवाल
विनोद पुस्तक मन्दिर
हॉस्पिटल रोड, आगरा

प्रथम संस्करण

दिसम्बर १९६०

मूल्य ४.००

Checked 1965

मुद्रक—राजकिशोर अग्रवाल, कैलाश प्रिंटिंग प्रेस
बाग मुजफ्फरखाना, आगरा

DEDICATED

TO

My Learned Teacher

Mrs. S. P. SUKHIA

Principal

WOMEN'S TRAINING COLLEGE

DAYALBAGH, AGRA.

प्रस्तावना

समय ने करबट बदली । पूर्व में नया सूर्य उदय हुआ । जनमन में जागरण हुआ और सदियों की गुलामी के बाद देश को स्वतन्त्रता मिली । १५ अगस्त पुण्य राष्ट्र पर्व बन गया साथ ही नयी नयी समस्याओं और उत्तरदायित्वों को भी साथ लाया । उस दिन हमने सोचा मानो हम युगों की प्रगाढ़ निद्रा से जागकर अब कर्तव्य रत होने जा रहे हैं । अधिकार मिले, सभी नागरिक अधिकार—मूल अधिकार, राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक अधिकार और हमने स्वतन्त्रता, समानता तथा भाई चारे का पाठ पढ़ा । किन्तु इन अधिकारों के साथ हमें नागरिक के महान कर्तव्य का निर्वाह भी करना है उन गम्भीर उत्तरदायित्वों को भी सफलतापूर्वक निर्वाह करना है जो हमारी स्वाधीनता ने हमें दिये । अतः हम चल पड़े, विकास के लिये, जीवन के सर्वांगीण विकास के लिये उद्योग धन्धे, कुटीर उद्योग, शिक्षण, खेती बाड़ी आदि सभी दिशाओं में । हमारा यही प्रयास रहा कि हमारा प्रत्येक अगला कदम सार्थक कदम हो और प्रेरणादायक भी । इस क्षेत्र में शिक्षक-वर्ग का दायित्व अपेक्षाकृत कहीं अधिक गम्भीर और महत्वपूर्ण है । हमने मिलकर यही प्रयत्न किया विकास के साथ साथ गुलामी का कोई भी चिह्न अवशेष न रहे उसके दाग धब्बे उसकी गंदगी विकास और समृद्धि के प्रखर प्रवाह में सभी बह जाय । हमने उस धब्बे को भी मिटा देने का प्रण किया जिसे अंग्रेजों ने बड़ी कुशलता एवं नैपुण्य से ऐसा पक्का लगाया कि हम भूल से उसे अपने अलंकार एवं गौरव का चिह्न समझने लगे । वह है विदेशी पंक्तिता एवं मानसिक गुलामी की प्रतीक आंग्ल भाषा जिसे अपनाकर हमने अपनी मातृभाषाओं और राष्ट्र भाषा हिन्दी की उपेक्षा की । खेद का विषय है कि अब भी हमारे कुछ भाई ऐसे हैं जो मानसिक गुलामी में उस अन्तिम प्रतीक—अंग्रेजी; से अब भी चिपटे रहना चाहते हैं । क्या वह भाषा हमारी सम्यता, संस्कृति का द्योतक बन सकती है ? क्या वह हमारे विचारों का सच्चा प्रतिनिधित्व कर सकती है ? एक मात्र उत्तर है कदापि नहीं । अतः इस दिशा में कि अंग्रेजी में उपलब्ध पुस्तकों के समक्ष राष्ट्रभाषा हिन्दी में अपने विषय की पुस्तकों को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर सकूँ, यह एक लघु प्रयास है । यदि लेखक को इसमें सफलता मिली और बी० टी०, एल० टी०, एवं बी० एड० के विद्यार्थियों को इससे लाभ हुआ,

जिनकी कठिनाइयों को सामने रखकर यह पुस्तक लिखी गई है, तो लेखक अपने को कृतकार्य समझेगा ।

प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्राध्यापकों की “सामाजिक अध्ययन तथा नागरिक शास्त्र” के शिक्षण सम्बन्धी कठिनाइयों को ध्यान में रखकर प्रस्तुत पुस्तक लिखी गई है । इसमें आगरा यूनिवर्सिटी के बी० टी० तथा एल० टी० एवं अन्य विश्वविद्यालय के बी० एड० के सम्पूर्ण पाठ्यक्रम के सभी अङ्गों का सरल तथा सुबोध भाषा में विवेचन करने का प्रयास किया गया है । हिन्दी पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रकाशित सूची के अनुसार ही किया है सुविधा के लिये उन शब्दों के अंग्रेजी पर्याय शब्द कोष्ठक में यथास्थान लिख दिये गये हैं ।

१५१/११०-१११. स्वामी नगर
दयाल बाग, आगरा
१८ नवम्बर १९६०

गुरुसरनदास त्यागी

विषय-सूची

अध्याय

पृष्ठ

१—सामाजिक विज्ञान तथा सामाजिक अध्ययन का अर्थ

१-१४

सामाजिक विज्ञान तथा सामाजिक अध्ययन में अन्तर, 'सामाजिक अध्ययन का अर्थ, सामाजिक अध्ययन के अङ्ग, इतिहास का उद्गम, अर्थ तथा परिभाषा, इतिहास एक विज्ञान के रूप में, पाठ्य-क्रम में इतिहास को स्थान प्राप्त करने का अधिकार, नागरिकशास्त्र की उत्पत्ति, 'सिविक्स' शब्द की उत्पत्ति, नागरिक शास्त्र की परिभाषा, नागरिक-शास्त्र एक विज्ञान है अथवा कला, पाठ्य-क्रम में नागरिकशास्त्र को स्थान प्राप्त करने का अधिकार, भूगोल, शिक्षा के पाठ्य-क्रम में भूगोल को स्थान प्राप्त करने का अधिकार ।

२—सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के लक्ष्य तथा लाभ

१५-२१

बाइनिंग के अनुसार सामान्य तथा मुख्य लक्ष्य, मुफात के अनुसार लक्ष्य, माइकेलिस के अनुसार ध्येय, सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के लाभ ।

३—सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-क्रम में स्थिति

२२-२७

समाजशास्त्रीय स्थिति, शैक्षिक स्थिति, मनोवैज्ञानिक स्थिति ।

४—सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री के चयन तथा संगठन के सिद्धान्त

२८-३६

मनोवैज्ञानिक आधार, दार्शनिक आधार, समाज-

शास्त्रीय आधार, प्रत्यक्ष अनुभव के लिये सामग्री, बालक की क्षमता, रुचि तथा आयु के अनुसार सामग्री का चयन, वैयक्तिक विभिन्नताओं से व्यवस्थापन, तर्क-शक्ति का विकास, जीवन से सम्बन्धित सामग्री, स्थानीय तथा सामुदायिक वातावरण की विशेषताएँ, सामाजिक अध्ययन के लक्ष्यों, आदर्शों तथा भक्तियों की प्राप्ति, क्रिया का सिद्धांत, लचीलापन, सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री का संगठन, सामाजिक अध्ययन के पाठ्य-क्रम के विषय ।

५—सामाजिक अध्ययन की शिक्षण-विधियाँ

३७-५३

पाठ्य-पुस्तक विधि, पाठ्य-पुस्तक विधि के लाभ, पाठ्य-पुस्तक विधि के दोष, व्याख्यान विधि, वाद-विवाद विधि, योजना विधि, इकाई विधि, इकाई के पद, इकाई विधि के लाभ, इकाई विधि के दोष, प्रयोगशाला विधि, समाजीकृत अभिव्यक्ति, औपचारिक वर्ग-योजना, अनौपचारिक वर्ग-योजना, आत्म-निर्देश वर्ग-योजना, समीनार वर्ग-योजना, समाजीकृत अभिव्यक्ति के लाभ, पर्यावलोकन विधि ।

६—सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में सहायक सामग्री

५४-६५

पाठ्य-पुस्तक, सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-पुस्तकों के मूल्यांकन की माप, श्याम पट, मानचित्र, मानचित्रों के प्रकार, मॉडल, चित्र, चार्ट, रेखाकृति, ग्लोब, रेडियो, फिल्म तथा फिल्म-खण्ड, टेप-रेकार्डर ।

७—सामाजिक अध्ययन का शिक्षक

६६-७०

विषय तथा शिक्षण व्यवसाय में निष्ठा, विषय का ज्ञान, तत्कालीन घटनाओं का ज्ञान, उदार दृष्टिकोण, शिक्षक का व्यक्तित्व, शारीरिक पक्ष, वैयक्तिक रूप, निष्क्रिय गुण, प्रबन्धीय योग्यताएँ, सामाजिक सक्रियता, सामाजिक अध्ययन के शिक्षण का ज्ञान ।

८—सामाजिक अध्ययन में परीक्षा

७१-७८

परीक्षा का अर्थ तथा वर्गीकरण, लिखित परीक्षा,

परम्परागत अथवा निबन्धात्मक परीक्षा, नवीन प्रणाली के प्रश्न, मौखिक परीक्षा, प्रयोगात्मक परीक्षा, प्रचलित परीक्षा-प्रणाली के दोष, उत्तम परीक्षा के गुण, स्थूलता अथवा वस्तुनिष्ठता, पुष्टता, विश्वस्ता, नैदानिक, प्रमाणिक, परीक्षा के उद्देश्य, नवीन प्रणाली की जाँच, अभिस्वीकारात्मक प्रश्न, स्मरण प्रश्न, रिक्त स्थान पूरक प्रश्न, सत्यासत्य प्रश्न, अपवर्त्य, चयन की जाँच, निर्णयात्मक प्रश्न, तुलनात्मक प्रश्न, क्रम-निर्धारणात्मक प्रश्न ।

६—नागरिकशास्त्र के शिक्षण के लक्ष्य तथा लाभ

७६-८५

नागरिकशास्त्र के शिक्षण के लक्ष्य, आदर्श नागरिकता, राजनैतिक जागरूकता, राष्ट्रीय चरित्र, अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास, मानसिक शक्तियों का विकास, वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास, एडम्स वेस्ले के अनुसार लक्ष्य, नागरिक शास्त्र के शिक्षण के लाभ ।

१०—नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु के चयन तथा संगठन के सिद्धान्त

८६-९२

लचीलेपन का सिद्धान्त, क्रिया का सिद्धान्त, उपयोगिता का सिद्धान्त, औपचारिकता का सिद्धान्त, रुचि का सिद्धान्त, चयन का सिद्धान्त, एक-केन्द्रीय विकास सिद्धान्त, तथ्यों का संगठन, एकीकरण का सिद्धान्त, नागरिक शास्त्र के पाठ्य-क्रम के विषय ।

११—नागरिकशास्त्र के शिक्षण की विधियाँ

९३-१०४

निरीक्षण विधि, कथात्मक विधि, कथा-पद्धति के लाभ, अभिनयात्मक विधि, अभिनयात्मक विधि के लाभ, तुलनात्मक विधि, वाद-विवाद प्रणाली, योजना विधि, योजना-विधि के लाभ, योजना विधि की सीमाएँ तथा दोष, कथनात्मक विधि, प्रयोग-शाला विधि, इकाई विधि ।

१२—नागरिकशास्त्र के शिक्षण की रीतियाँ

१०५-११०

प्रश्न करना, प्रश्नों का वर्गीकरण, अच्छे प्रश्नों के

लक्षण, प्रश्न करने की कला, कार्य-निर्धारण, अभ्यास, विवृति, निरीक्षित-अध्ययन ।

१३—शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुतीकरण

१११-११६

प्रस्तुतीकरण के सामान्य सिद्धान्त, प्राइमरी स्तर पर नागरिकशास्त्र का प्रतिपादन, जूनियर हाई-स्कूल स्तर पर नागरिकशास्त्र का प्रतिपादन, माध्यमिक स्तर पर नागरिकशास्त्र का प्रतिपादन ।

१४—नागरिकशास्त्र के शिक्षण में सहायक सामग्री

११७-१३३

पाठ्य-पुस्तक, श्यामपट, वास्तविक पदार्थ, मॉडल, चित्र, चित्रों के गुण, चार्ट, रेखाकृति, मानचित्र, सूचना-पट, चल-चित्र तथा फिल्म खण्ड, रेडियो ।

१५—नागरिकशास्त्र का शिक्षक

१३४-१४०

नागरिकशास्त्र के शिक्षक के कर्तव्य, व्यावसायिक निष्ठा, विषय का ज्ञान, वैज्ञानिक तथा उदार दृष्टिकोण, आदर्श नागरिक, सामाजिक सक्रियता, शिक्षक का व्यक्तित्व, नागरिकशास्त्र के शिक्षण का ज्ञान, शिक्षण की स्वतंत्रता ।

१६—नागरिकशास्त्र का अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध

१४१-१५०

शिक्षा में सह-सम्बन्ध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, सह-सम्बन्ध के प्रकार, शीर्षात्मक सह-सम्बन्ध, अनुप्रस्थीय सह-सम्बन्ध, व्यावहारिक जीवन से सह-सम्बन्ध, नागरिकशास्त्र तथा इतिहास, नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा भूगोल, नागरिकशास्त्र तथा साधारण विज्ञान ।

परिशिष्ट

१५१-१७०

नागरिकशास्त्र में पाठ-योजना बनाने के लिये कुछ संकेत,

पाठ-सूत्र—१

पाठ-सूत्र—२

पाठ-सूत्र—३

अध्याय १

समाज विज्ञान तथा सामाजिक अध्ययन का अर्थ

(Social Sciences and Meaning of Social Studies)

मानवीय ज्ञान के अनेक वर्गीकरण किये गये हैं। उनमें सर्वोत्तम वर्गीकरण ज्ञान को प्राकृतिक-विज्ञान (Natural Sciences) तथा समाज-विज्ञान में विभाजित करता है। प्राकृतिक-विज्ञान का सम्बन्ध सृष्टि के दृष्टिगत विषयों से है। हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि इसके द्वारा सृष्टि की प्राकृतिक घटनाओं का वर्णन किया जाता है जो दृष्टिगत होती हैं। इसके द्वारा भौतिक पदार्थों का विवेचन किया जाता है, उदाहरणार्थ—भौतिक शास्त्र (Physics), रसायन शास्त्र (Chemistry), भूगर्भ शास्त्र (Geology) और नक्षत्र-विद्या (Astronomy) तथा जीव-विद्या सम्बन्धी विज्ञान, जैसे—जन्तु-विज्ञान (Biology) प्राणी-शास्त्र (Zoology), वनस्पति-शास्त्र (Botany) आदि। समाज-विज्ञान का सम्बन्ध उन विषयों से है जो मानव-समाज के उद्गम, संगठन तथा विकास पर प्रकाश डालते हैं। इन विषयों के द्वारा मानव का अध्ययन किया जाता है। मानव की बहुमुखी क्रियाओं का विभिन्न सामाजिक विषयों में विवेचन किया गया है, जैसे—इतिहास, नागरिक शास्त्र, अर्थशास्त्र मानव शास्त्र, समाज शास्त्र, मनोविज्ञान तथा भूगोल आदि।

यद्यपि प्राकृतिक विज्ञान तथा समाज-विज्ञान दोनों भिन्न-भिन्न विषय हैं, तथापि प्राकृतिक-विज्ञान ने समाज-विज्ञान को विशेष सहयोग प्रदान किया है।

जैसे रसायन शास्त्र ने रोगों के उन्मूलन के द्वारा मनुष्य-जाति का विशेष हित किया है; जीव-शास्त्र की एक शाखा प्रजनन शास्त्र (Genetics) के अध्ययन ने मनुष्य जाति की पैतृकता तथा बातावरण के ज्ञान में वृद्धि की है, जिससे सामाजिक स्थिति का सुधार करने में विशेष रूप से सहायता प्राप्त हुई है। भौतिक शास्त्र तथा तत्सम्बन्धित विज्ञानों ने बिजली, भाप शक्ति, अणु-शक्ति आदि के आविष्कार किये हैं, जिनका उपयोग करके मनुष्य-जाति के स्तर में आशातीत वृद्धि की जा सकती है। हम प्राकृतिक संसार के भौतिक पदार्थों का ज्ञान पंच ज्ञानेन्द्रियों द्वारा सम्पर्क में आने के कारण प्राप्त करते हैं और सामाजिक प्राणी होने के कारण समाज की विभिन्न परिस्थितियों तथा अवस्थाओं का अध्ययन करते हैं।

समाज विज्ञान अनेक मुख्य विषयों में प्राकृतिक विज्ञान से भिन्नता रखता है। ज्ञान और विचारों की जिस गरिमा तथा गुह्यता का प्रयोग समाज-विज्ञान में होता है, उतना प्राकृतिक विज्ञानों में नहीं होता। उपर्युक्त इन दोनों क्षेत्रों में वैज्ञानिक जिन साधनों को प्रयोग में लाते हैं अथवा उनसे जो अन्तिम निष्कर्ष निकालते हैं, वे निश्चितता तथा सम्भवता दोनों में भिन्न होते हैं। ज्ञान के इन दोनों विस्तृत क्षेत्रों के मध्य में विभाजन-रेखा अस्पष्ट ही नहीं वरन् बहुधा तर्क का विषय बन जाती है। हमारा वर्तमान विषय समाज-विज्ञान है, जोकि मनुष्यकृत कार्यों के विषय में संगठित ज्ञान तथा विचारों का समूह है।

अब विवादग्रस्त प्रश्न यह है कि क्या समाज-विज्ञान उसी अर्थ में विज्ञान कहलाने के अधिकारी हैं कि जिस अर्थ में प्राकृतिक विज्ञान हैं—इस प्रश्न का उत्तर विज्ञान की परिभाषा पर आश्रित है। यदि विज्ञान को व्यवस्थित ज्ञान का एक विभाग कहा जाय तब इनमें कोई अन्तर नहीं है। परन्तु यदि विज्ञान से तात्पर्य अध्ययन की उस शाखा से लिया जाय, जो प्रयोगों के निरीक्षण तथा तथ्यों के वर्गीकरण से सम्बन्धित है और जिसके द्वारा सामान्य तथा अटल नियमों का निर्धारण किया जाता है, तब ज्ञान के इन दोनों क्षेत्रों में स्पष्ट अन्तर है, क्योंकि एक क्षेत्र भौतिक पदार्थों की क्रियाशीलता का अध्ययन करता है जो मानव के अधिकार में रहते हैं। परन्तु दूसरे क्षेत्र की सामग्री मानव, जो चेतनशील तथा क्रियाशील, है। प्राकृतिक विज्ञान की सामग्री का अध्ययन मानवीय गुणों, विचारों, उद्देश्यों, रुचियों, अभिरुचियों, योग्यताओं तथा महत्त्वों के अध्ययन से नितांत भिन्न है। इसके अतिरिक्त समाज-विज्ञान के द्वारा प्रयोगों की पुनरावृत्ति करके अन्तिम परिणामों का पुष्टीकरण उसी भाँति नहीं किया जा सकता जिस भाँति प्राकृतिक विज्ञान में सम्भव है। यह सत्य है कि समाज विज्ञान में प्राकृतिक विज्ञान की भाँति अटल नियम नहीं निर्धारित किये

जा सकते हैं परन्तु उसके निष्कर्षों में निश्चितता की सम्भावना अवश्य रहती है। वस्तुतः विज्ञान का एक मात्र लक्ष्य अनुसन्धान करना है; यह कार्य समाज-विज्ञान के द्वारा भी किया जाता है चाहे उसके नियम प्रत्येक परिस्थिति, काल तथा स्थान में सत्य न हों। इनमें अटलता मानवीय विचारों की विविधता के कारण नहीं आ पाती है। विज्ञान की उदार परिभाषा की कसौटी पर समाज विज्ञान भी शास्त्र कहलाने के अधिकारी हैं।

मानव-जगत ने यातायात, उद्योग तथा अन्य क्षेत्रों में तीव्रतम परिवर्तन उपस्थित करके प्राकृतिक विज्ञान में आश्चर्यजनक उन्नति प्रदर्शित की है, परन्तु समाज-विज्ञान में इस प्रकार की प्रगति नहीं हुई है। यद्यपि मानव ने संसार में एक महान् भौतिक सभ्यता का निर्माण कर लिया है, तथापि वह वर्तमान औद्योगिक युग की जटिलताओं को सुलभाने में सर्वथा असमर्थ रहा है। उसने भौतिक सुविधाओं में विशेष वृद्धि करके जीवन के स्तर को उच्च और महान् बनाया है, उसने अणु-शक्ति का आविष्कार करने में सफलता प्राप्त कर ली है, वह अपने स्फुटनिक चन्द्रलोक तक भेज चुका है और अब वहाँ पर बस्तियाँ बसाने के स्वप्न देख रहा है, परन्तु उसने सामाजिक पद्धतियों को व्यवस्थित करने तथा उन्हें अपने अधिकार में लाने में विशेष कठिनाई का अनुभव किया है। इतना ही नहीं, वरन् पारस्परिक युद्धों के द्वारा सर्वनाश की ओर अग्रसर होता जा रहा है। यदि मानव-जगत अपनी तर्क शक्ति तथा विचार शक्ति का प्रयोग करे और समाज विज्ञान में भी उतनी ही प्रगति दिखलाये जितनी कि उसने प्राकृतिक विज्ञान में की है, तो वह निश्चय ही समाज-विज्ञान की कमी को पूरा कर सकेगा और पतन की ओर अग्रसर होती हुई मनुष्य जाति को नष्ट होने से बचा सकेगा। बहुत से विद्वानों का मत है कि समाज-विज्ञान के ज्ञान के द्वारा विश्व में शान्ति स्थापित की जा सकती है क्योंकि ये विज्ञान मानवीय सम्बन्धों का विवेचन करते हैं और स्पष्ट करते हैं कि सफल सामाजिक जीवन क्या है? इनके ज्ञान के द्वारा मानव समाज को कल्याण की ओर अग्रसर किया जा सकता है। इनके ज्ञान से मानव इन आविष्कारों का समाज के कल्याण के लिये उपयोग करना सीख जाता है। इस कारण समाज-विज्ञान के लिये विश्व की शक्तिशाली माँग है। इस माँग के कारण शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर समाज-विज्ञान की सामग्री विभिन्न नामों से रखी गई है। माध्यमिक पाठशालाओं के स्तर पर 'समाज-विज्ञान' तथा 'सामाजिक अध्ययन' शब्दों का प्रयोग समान अर्थ में किया जाता है। समाज विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीति-शास्त्र, दर्शन-शास्त्र, न्याय-शास्त्र, समाज-शास्त्र आदि विषय

घाते हैं। इनमें सामाजिक मनुष्य के जीवन तथा उसके कृत्यों का अध्ययन किया जाता है।

‘सामाजिक अध्ययन’ शब्द का प्रयोग अब सामान्य रूप से होने लगा है। सर्व प्रथम इस शब्द का प्रयोग सन् १९१६ ई० में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के राष्ट्रीय-शैक्षिक-संस्था-आयोग द्वारा किया गया था। इस आयोग ने सामाजिक अध्ययन नामक विषय की परिभाषा इस प्रकार की थी—“सामाजिक अध्ययन वह विषय है जो मानव समाज तथा सामाजिक मनुष्य के संगठन तथा विकास से सम्बन्धित हो।” इस प्रकार यह विषय शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति में पूर्ण रूप से सहायक होता है। हमारे देश में इस विषय को माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा निर्धारित किया गया है। पाठ्य-क्रम में इसको रखने का मुख्य ध्येय छात्रों में सामाजिक कुशलता प्रदान करना है। जो माध्यमिक शिक्षा का मुख्य लक्ष्य है।

प्रारम्भिक तथा माध्यमिक विद्यालयों में पढ़ाया जाने वाला विषय सामाजिक अध्ययन, कॉलेजों के समाज-विज्ञान विषय से भिन्नता रखता है। कॉलेजों में उच्च स्तर पर शिक्षा दी जाती है, जिसका मुख्य ध्येय होता है—‘अन्तिम निष्कर्षों का स्पष्टीकरण तथा विभिन्न क्षेत्रों में सत्यता तथा तथ्यों के ज्ञान की खोज।’ परन्तु प्रारम्भिक तथा माध्यमिक शिक्षालयों में शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों का चरित्र-निर्माण करना, उन्हें कलाओं तथा उद्योगों में दक्षता प्राप्त कराना होता है जिससे वे अपने भावी जीवन में अपनी जीविका प्राप्त कर सकें। इसके अतिरिक्त इस स्तर की शिक्षा का उद्देश्य छात्रों को प्रजा-तंत्रीय समाज के लिये योग्य नागरिक बनाना होता है। इस स्तर पर उच्च स्तर की शिक्षा देना सम्भव नहीं होता है, क्योंकि यह बालकों के मानसिक विकास के विरुद्ध होता है। अतः शिक्षा-विशारदों ने मानसिक विकास की विभिन्नता के कारण शिक्षा के इस भेद को उचित ठहराया है।

‘सामाजिक अध्ययन’ तथा ‘समाज-विज्ञान’ में केवल गहनता तथा प्रयोजन के क्रम का अन्तर है अन्यथा दोनों की पाठ्य-सामग्री एक सी ही है। समाज विज्ञान मानवीय सम्बन्धों का व्यवस्थित तथा प्रामाणिक लेखा है जो आधुनिक विश्व की सामाजिक समस्याओं पर प्रकाश भी डालता है तथा उनका हल भी प्रस्तुत करता है। इसमें इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र अर्थशास्त्र, समाज-शास्त्र, दर्शन तथा मानव विज्ञान (Anthropology) आदि विज्ञानों तथा सामाजिक विषयों का संगठन होता है। सामाजिक अध्ययन में समाज विज्ञान

की प्राथमिक सामग्री मुख्यतः भूगोल, इतिहास, नागरिक शास्त्र, अर्थशास्त्र तथा समाज-शास्त्र की सरल, सुबोध, स्पष्ट तथा शिक्षालयों के छात्रों के बौद्धिक तथा सामाजिक विकास के अनुरूप बातें चयन कर ली जाती हैं, जो कालिज स्तर के समाज-विज्ञानों की प्रारम्भिक प्रस्तावना का कार्य करती हैं। दोनों विषयों का ध्येय सामाजिक उपयोगिता, सक्रियता तथा कुशलता प्रदान करना ही है। मानवीय तथा प्राकृतिक वातावरण की अन्योन्याश्रिता को समझाने तथा उनको संगठित करने के लिये भूगोल, इतिहास, अर्थशास्त्र तथा नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु को एक विषय के अन्तर्गत रख दिया गया है। इसी समन्वित सामग्री को 'सामाजिक अध्ययन' (Social Studies) के नाम से पुकारा जाता है।

माध्यमिक शिक्षा-आयोग (Secondary Education Commission) ने अपने प्रतिवेदन में प्रतिपादित किया है कि सामाजिक अध्ययन छात्रों को मानवीय सम्बन्धों का बौद्धिक ज्ञान ही नहीं देता बल्कि वह उनको अपने सामाजिक वातावरण में व्यवस्थित होने की शक्ति भी प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त उनमें उचित आदतों, अभिरुचियों, दृष्टिकोणों, मूल्यों, भक्तियों तथा क्षमताओं को विकसित करता है जो सफल सामुदायिक (Group) तथा नागरिक जीवन के लिये अनिवार्य हैं।¹ इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययन छात्रों को वर्तमान तथा अतीत के व्यवस्थापनों (Adjustments) का ज्ञान प्रदान करता है। बाइनिंग तथा वाइनिंग का विचार है कि सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री के द्वारा शिक्षण का एक ऐसा आधार प्रदान किया जाता है जिसके द्वारा हम अपने विद्यार्थियों के समक्ष आधुनिक विश्व को स्पष्ट तथा सरल बना सकते हैं। इसके द्वारा उनको अनिवार्य आदतों तथा कुशलताओं में प्रशिक्षित तथा उनमें ऐसी अभिरुचियों तथा आदर्शों को विकसित किया जा सकता है, जिनकी प्राप्ति से बालक तथा बालिकाएँ प्रजातन्त्रीय समाज में अपना स्थान ग्रहण करने में समर्थ हो सकें।

समाज-विज्ञान तथा सामाजिक अध्ययन का अन्तर देखने के पश्चात् यह अनिवार्य हो जाता है कि जिन शास्त्रों से इसकी सामग्री का संकलन किया जाता है, उनके उद्गम, विकास तथा शिक्षण के उद्देश्यों पर विचार कर लिया जाय।

1. Secondary Education Commission (1952-53) Report, p. 93.

सामाजिक अध्ययन के अंग

(Branches of Social Studies)

इतिहास (History) :

इतिहास का उद्गम, अर्थ तथा परिभाषा (History—its Origin, Meaning and Definition):—इतिहास सबसे प्राचीन सामाजिक विज्ञान है। इसका उद्गम आदिकाल के मनुष्यों की गाथाओं तथा रीति-रिवाजों से हुआ है। जब से ग्रीसवासियों का प्रभुत्व स्थापित हुआ तभी से 'इतिहास' शब्द का प्रयोग हुआ। 'History' शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द 'Historia' से हुई है जिसका अर्थ है—'सत्य के लिये खोज'। विभिन्न कालों में इतिहास विभिन्न विचारधाराओं को लेकर लिखा गया है। हेरोडोटस ने कहानी कहने के आदर्श को लेकर इतिहास लिखा था। इसी प्रकार थ्यूसीडाइड्स (Thucydides); फ्रायड (Froude); कारलाइल (Carlyle); ग्रीन (Green) तथा मैकॉले (Ma Caulay) ने प्रबोधक (Didactic); अभिनयात्मक (Dramatic); वीरात्मक (Heroic); देशभक्ति-परक (Patriotic) तथा साहित्यिक और राजनीतिक आदर्शों को लेकर इतिहास लिखे। आज के इतिहास का रूप प्राचीन काल के इतिहास के रूप से भिन्न है। इतिहास में हम मानव सभ्यता के विकास का अध्ययन करते हैं। भूतकाल के अवशिष्ट चिन्हों को एकत्र करके हम उनका वैज्ञानिक अध्ययन एवं आलोचना करते हैं तथा अतीत के आधार पर वर्तमान को उचित रूप से समझने का प्रयास करते हैं। आज के इतिहास में जो यह प्रवृत्ति प्रचलित है वह १९वीं शताब्दी की वैज्ञानिक प्रवृत्ति की ही देन है। इस विचार धारा के अनुसार इतिहास की विभिन्न व्याख्याएँ की गई हैं जिनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं:—

(१) इतिहास ज्ञान की वह शाखा है जिसका उद्देश्य तथ्यों तथा घटनाओं का निश्चयीकरण, लेखा तथा व्याख्या करना है।

(२) इतिहास अतीत के तथ्यों तथा घटनाओं का क्रमबद्ध वर्णन है।

बीसवीं शताब्दी के अन्तर्राष्ट्रीय आन्दोलन ने इतिहास को अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना प्रदान की है। इतिहास में अब समस्त मानव जाति का अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से विवेचन किया जाता है।

इतिहास एक विज्ञान के रूप में (History as a Science):—इतिहास का उद्गम, अर्थ तथा परिभाषा देखने के पश्चात् प्रश्न यह उठता है कि क्या इतिहास एक विज्ञान है? इतिहास की वैज्ञानिकता के बिह्व विद्वान् विभिन्न तर्क प्रस्तुत करते हैं। सर्वप्रथम, इतिहास में गणित, भौतिक शास्त्र आदि के

समान सिद्धान्त नहीं बन पाते। गणित में दो और दो चार होते हैं जोकि प्रत्येक काल तथा परिस्थिति में यही रहेंगे। उनका कहना यह है कि इतिहास में ऐसे सिद्धान्त नहीं बनाये जा सकते हैं जो कि प्रत्येक काल तथा परिस्थिति में सत्य रहें। दूसरे, इतिहास मानव तथा उसके कार्यों का विवेचन करता है। मानव प्रकृति तथा विचारों में एक-दूसरे से भिन्न है। इस भिन्नता के कारण कोई सामान्य सिद्धान्त नहीं बनाया जा सकता है।

उपर्युक्त तर्कों में यद्यपि पर्याप्त सत्यता है, फिर भी इतिहास को कुछ विद्वानों ने विज्ञान माना है। यह सिद्ध करने के लिये हमें विज्ञान शब्द का सही-सही अर्थ जानना परम आवश्यक है। विज्ञान का अर्थ है—‘व्यवस्थित ज्ञान’। हक्सले (Huxley) ने कहा है कि—“मैं उस ज्ञान को विज्ञान मानता हूँ जो कि तर्क तथा प्रमाणों पर आधारित है।” विज्ञान के इस अर्थ को देखने से हम कह सकते हैं कि इतिहास एक विज्ञान है क्योंकि इसका आधार तर्क और प्रमाण हैं, भले ही इसमें गणित के से सिद्धान्त न बन पायें। इतिहास स्वयं एक घटना है। जब इतिहास एक घटना है तो स्वतः ही यह प्रश्न उठते हैं कि यह घटना कब, कहाँ, कैसे और क्यों घटी? इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिये इतिहास वैज्ञानिक विधि का अनुसरण करता है और इनका उत्तर तर्क तथा प्रमाणों के आधार पर ही प्रदान करता है। भौतिक-विज्ञानों की सामग्री मानव के अधिकार में रहती है, किन्तु इतिहास की सामग्री समस्त विश्व है। इतिहास अपनी सामग्री अस्थि-चर्म-रुधिर-पिण्डमय मानव के कार्यों से उपलब्ध करता है। इस कारण इतिहास में गणित जैसे सिद्धान्त नहीं बनाये जा सकते। दूसरे, वैज्ञानिक पद्धति के प्रवर्तक हरबर्ट स्पेन्सर (Herbert Spencer) ने भी सामाजिक विज्ञानों को स्थूल विज्ञानों की श्रेणी में रखा था। इतिहास सामाजिक विज्ञानों के अन्तर्गत आता है। इतिहास संकीर्ण अर्थ में विज्ञान की कसौटी पर खरा नहीं उतरता है परन्तु उदार अर्थ में समस्त सामाजिक विज्ञानों की भाँति इसे एक विज्ञान कहा जा सकता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विज्ञान के उदार सिद्धान्तों के अनुसार इतिहास एक विज्ञान है।

पाठ्य-क्रम में इतिहास को स्थान प्राप्त करने का अधिकार (Claims for the Inclusion of History in School Curriculum) :—पूर्वकाल में इतिहास को पाठ्य-क्रम में स्थान देने का कारण यह था कि उस समय के शिक्षा शास्त्रियों का विचार था कि इसके द्वारा मस्तिष्क की विभिन्न शक्तियों जैसे स्मरण, तर्क तथा कल्पना शक्ति, को अनुशासित किया जा सकता है। द्वितीय, इसके द्वारा छात्रों में नैतिकता उत्पन्न की जा सकती है। तृतीय, इसके द्वारा विद्यार्थियों में देश प्रेम की भावनाएँ विकसित की जाती हैं। चतुर्थ, इसके

द्वारा छात्रों को उत्तम नागरिक बनने के लिये शिक्षा दी जा सकती है। आधुनिक काल का सबसे महत्वपूर्ण कारण यह है कि इतिहास ज्ञान का भाण्डार है जिसके द्वारा बालक के कौतूहल को, जो शैक्षिक जीवन का मुख्य आधार है, शान्त किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त बालक के मानसिक अन्तरिक्ष को विस्तृत बनाया जा सकता है, अर्थात् उसमें राष्ट्रीय दृष्टिकोण के साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण भी उत्पन्न किया जा सकता है। इतिहास को पाठ्य-क्रम में इन्हीं आधारभूत कारणों के फलस्वरूप स्थान प्राप्त हुआ।

सामाजिक अध्ययन की योजना में भी इतिहास का बहुत बड़ा हाथ है। आज से कुछ वर्ष पूर्व अंग्रेज जाति ने विश्व के बहुत बड़े भूभाग पर अपना अधिकार जमा रखा था। उस काल के शिक्षालयों के पाठ्य-क्रम में 'इंगलिश-हिस्ट्री' (English-History) को रखा जाता था जिसे नागरिकशास्त्र अथवा अर्थशास्त्र आदि सामाजिक विषयों के स्थान में लेना पड़ता था। स्वतन्त्रता की लहर तथा प्रजातान्त्रिक भावनाओं ने इंगलिश-हिस्ट्री को हटा दिया और उसके स्थान पर नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, आदि विषयों को रखा और इनमें से उन्हीं तथ्यों को चुनकर सामाजिक अध्ययन का विषय बनाया जो कि समाज की व्यवस्था तथा विकास में सहायक होते हैं। इतिहास, जैसा कि हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं, मानव सभ्यता का इतिहास है तथा सामाजिक अध्ययन के लिये पर्याप्त मात्रा में पाठ्य-वस्तु प्रदान करता है।

नागरिक शास्त्र

(Civics)

नागरिक-शास्त्र की उत्पत्ति (Origin of Civics) :—नागरिक शास्त्र एक नवीन विषय है। बल्कि यह उतना ही प्राचीन है जितना कि एक सभ्य समाज। परन्तु नागरिक शास्त्र ने एक स्वतन्त्र शास्त्र का स्थान १९ वीं शताब्दी में ही ग्रहण किया। इसके कई मुख्य कारण थे। प्रथमतः १९ वीं शताब्दी की वैज्ञानिक प्रवृत्ति ने मनुष्य में तर्क तथा प्रमाणों के आधार पर किसी वस्तु को स्वीकार करने का दृष्टिकोण उत्पन्न किया। दूसरे, १९ वीं शताब्दी से पूर्व योरोप तथा अन्य महाद्वीपों में एकतन्त्र तथा सामान्तशाही व्यवस्था का ही बोल-बाला था। राजतन्त्र व्यवस्था के अत्याचारों के विरुद्ध १८ वीं शताब्दी के अन्तिम चरण के दो महान् परिवर्तनों ने प्रजातन्त्र शासन व्यवस्था के लिये पृष्ठ-भूमि तैयार की। फ्रांस की क्रान्ति तथा अमेरिकन स्वतन्त्रता युद्ध के परिणाम-स्वरूप प्रजातन्त्र शासन व्यवस्था के लिये शक्तिशाली माँग की गई और स्वतन्त्रता (Liberty), समानता (Equality) तथा भ्रातृत्व (Fraternity) के

नारे लगाये गये जो कि प्रजातन्त्र के मूलाधार हैं। प्रजातन्त्र शासन व्यवस्था जनता की, जनता के लिये तथा जनता के द्वारा चलाई जाने वाली सरकार है। इस कारण यह आवश्यक हो गया कि जनता चेतनशील तथा सामाजिक और राजनैतिक रूप से जागरूक हो। इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिये नागरिक शास्त्र का जन्म हुआ।

“Civics” शब्द की उत्पत्ति :—‘Civics’ शब्द का उद्गम लैटिन के दो शब्दों से हुआ है—सिविस (Civis) तथा सिविटस (Civitas)। सिविस का अर्थ नागरिक तथा सिविटस का तात्पर्य नगर से है। Civics एक अंग्रेजी शब्द है, जिसका हिन्दी रूपान्तर नागरिक शास्त्र है। सिविस का वास्तविक अर्थ नगर राज्य के सदस्य से है और सिविटस का नगर राज्य से है। इस प्रकार Civics, नागरिक के राज्य के प्रति कर्त्तव्यों तथा अधिकारों का परिचय देने वाला शास्त्र है।

नागरिक शास्त्र की परिभाषा (Definition of Civics) :—नागरिक-शास्त्र को विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया है। कुछ विद्वानों का विचार है कि नागरिक शास्त्र सफल सामाजिक तथा नागरिक जीवन का ज्ञान देता है। इस शास्त्र से हमें इस बात का ज्ञान प्राप्त होता है कि मानव जीवन के उद्देश्य क्या हैं? हमें समाज में किस प्रकार रहना चाहिये? समाज की कुरीतियों तथा राजनैतिक अन्धकार को किस प्रकार दूर किया जाय? आदि। डा० वेणीप्रसाद के मतानुसार नागरिक शास्त्र के मुख्य विषय समाज में मनुष्य के अधिकार तथा कर्त्तव्य हैं जिनको वह समाज में रहकर पूर्ण करता है, (“In the context of social relationships, there are many duties to be performed, and correspondingly many rights to be respected. It is with them that civics is mainly Concerned.”)। पुण्ताम्बेकर (Puntambekar) का कथन है कि—“नागरिक-शास्त्र नागरिकता का विज्ञान तथा दर्शन है,” (“Civics is the Science and Philosophy of Citizenship.”)। इसी भाव को दूसरे लेखकों ने इस भाँति व्यक्त किया है कि नागरिक शास्त्र समाज में मनुष्य के अधिकारों तथा कर्त्तव्यों की विवेचना करता है। ह्वाइट (White) ने जो नागरिकशास्त्र की परिभाषा दी है वह उपयुक्त है। उनका कथन है कि—“नागरिक शास्त्र वह विषय है जो नागरिकता से सम्बन्धित सभी विषयों का प्रतिपादन करता है चाहे वे भूतकाल, वर्तमान तथा भविष्य के हों—चाहे स्थानीय, राष्ट्रीय तथा मानवीय हों।” (“Civics is the subject that deals with everything appertaining to citizenship; past, present and future, local,

national and human.”) नागरिकशास्त्र आदर्श सामाजिक जीवन की दशाओं का अध्ययन करता है। यह शास्त्र मानव के कर्तव्यों तथा अधिकारों का निरूपण करके यह बताता है कि आदर्श नागरिकता किस प्रकार सम्भव है। आदर्श नागरिक जीवन तभी सम्भव हो सकता है जब हम केवल एक राष्ट्र तथा समाज-विशेष को ही नहीं, परन्तु समस्त मानव समाज को ध्यान में रखते हुए अपने कर्तव्यों का पालन तथा अधिकारों को व्यवहार में लायें। प्रो० एफ० जे० गोल्ड (F.-J. Gould) ने नागरिकशास्त्र की परिभाषा इस प्रकार की है, “नागरिकशास्त्र उन सभी मानवीय संस्थाओं, आदतों तथा क्रियाओं का अध्ययन करता है जिनके प्रति पुरुष या नारी अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं तथा राजनैतिक समाज में सदस्यता के लाभों को प्राप्त करते हैं। (“Civics is the study of institutions, habits and activities and spirit by means of which a man or woman may fulfil the duties and receives the benefits of membership in political Community.”)। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि नागरिकशास्त्र के अन्तर्गत उन सभी साधनों का अध्ययन किया जाता है जिनका सम्बन्ध सम्पूर्ण मानव समाज की उन्नति से है।

नागरिकशास्त्र एक विज्ञान है अथवा कला (Civics is Science or Art) — नागरिकशास्त्र की वैज्ञानिकता के विरुद्ध विभिन्न तर्क प्रस्तुत किये गये हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि यह विज्ञान नहीं है। इसमें भौतिक, गणित तथा रासायनिक शास्त्रों के से अटल नियम नहीं बन सकते हैं जो प्रत्येक काल, परिस्थिति तथा स्थान में एक ही होते हैं। उदाहरणार्थ—गणित में दो और दो-चार होते हैं, भौतिक शास्त्र में न्यूटन (Newton) का आकर्षण शक्ति का सिद्धान्त—यदि कोई वस्तु ऊपर की ओर उछाली जाय तो वह पृथ्वी की ओर लौटकर आयेगी तथा रासायनिक शास्त्र में, जब हाइड्रोजन तथा आक्सीजन को दो और एक के अनुपात में मिलाया जाता है तो पानी बनता है। ये सिद्धान्त प्रत्येक काल, स्थान तथा परिस्थिति में सत्य ही रहते हैं। कुछ समाज-शास्त्रियों का विचार है कि सामाजिक विज्ञान के नियम भी अटल होते हैं। परन्तु यह मत असत्य है क्योंकि मनुष्य जड़ पदार्थ नहीं है जिस पर आधिपत्य स्थापित किया जा सके वरन् वह चेतनशील है। समाज विज्ञान मानव का अध्ययन करते हैं। इस कारण उनके नियम अटल नहीं हो सकते बल्कि उनमें निश्चितता की सम्भावना अवश्य रहेगी। गिल्क्राइस्ट (Gilchrist) महोदय का मत है कि “सामाजिक विज्ञानों में प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति शुद्धता प्राप्त करना असम्भव है परन्तु सामाजिक समस्याएँ उन्हीं वैज्ञानिक विधियों से प्रतिपादित की जा सकती हैं, जिनसे कि भौतिकशास्त्र या रसायनशास्त्र की समस्याएँ हल की

जाती है।^१ वैज्ञानिक विधि—निरीक्षण, प्रयोग, वर्गीकरण तथा परिणाम निकालने की विधि है, जिसके द्वारा क्रमबद्ध ज्ञान एवं कुछ विशिष्ट नियम प्राप्त होते हैं। विज्ञान की संकीर्ण परिभाषा की कसौटी पर नागरिकशास्त्र भले ही खरा न उतरे परन्तु उसकी उदार परिभाषा के अनुसार यह शास्त्र भी विज्ञान है। लार्ड ब्राइस (Lord Bryce) का मत है—“कि राजनीति शास्त्र वैसा ही विज्ञान है जैसा कि अन्तरिक्ष विज्ञान।” यह बात नागरिकशास्त्र के विषय में भी सत्य है। जिस प्रकार अन्तरिक्ष विज्ञान के नियम सदैव सत्य नहीं होते और उसमें अनुमान को ही अधिक प्रधानता प्राप्त होती है, परन्तु फिर भी वह एक विज्ञान है। इसी प्रकार हम कह सकते हैं कि नागरिकशास्त्र के नियम सदैव सत्य नहीं हो सकते, क्योंकि यह शास्त्र मानव का अध्ययन करता है जो रुचि, स्वभाव, योग्यता, विचार, कुशलता तथा क्षमता में एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। इसमें केवल सम्भावना ही व्यक्त की जा सकती है। इसी आधार पर नागरिकशास्त्र को विज्ञान की श्रेणी में रखा गया है।

कुछ विद्वान नागरिकशास्त्र को कला की श्रेणी में रखते हैं। उनका विचार है कि कला हम को व्यावहारिकता प्रदान करती है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि कला का मुख्य कार्य ‘कार्य करना’ है। इस प्रकार कला का अर्थ अर्जित ज्ञान को अपने जीवन में प्रयोग करना है। यह शास्त्र केवल यही नहीं बताता है कि नागरिकता के सिद्धांत तथा नियम क्या हैं ? सफल सामाजिक जीवन किसे कहते हैं ? नागरिकशास्त्र केवल मानव के आदर्श, आदर्श नागरिक तथा उसके जीवन की व्याख्या करके ही अपने को संतुष्ट नहीं रखता, वरन् वह इन नियमों तथा सिद्धान्तों के अनुसार आचरण करने पर भी बल देता है जिससे आदर्श सामाजिक तथा नागरिक जीवन की प्राप्ति हो सके। यदि किसी ज्ञान को व्यावहारिक रूप में नहीं लाया जा सकता तो वह ज्ञान बंजर भूमि के समान है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि केवल सिद्धान्तों तथा नियमों को जान लेना ही आवश्यक नहीं है वरन् उनके अनुसार अनुसरण करना तथा उन्हें व्यवहार में लाना भी जान लेना आवश्यक है। यह अनुसरण का कार्य ही कला है। नागरिकशास्त्र के मात्र सिद्धान्तों को जानकर मानव अच्छा नागरिक नहीं बन सकता, अपितु उसको इन सिद्धान्तों पर आचरण करना भी अनिवार्य है। जब नागरिकशास्त्र आचरण करने पर बल देता है तब वह कला है। इस विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि नागरिकशास्त्र विज्ञान तथा कला दोनों ही है।

पाठ्य-क्रम में नागरिकशास्त्र को स्थान प्राप्त करने का अधिकार (Claims for the Inclusion of civics in School Curriculum) :—

नागरिकशास्त्र को पाठ्य-क्रम में स्थान दिये जाने के निम्नलिखित कारण हैं :—

(१) नागरिकशास्त्र आदर्श नागरिकता तथा सिद्धान्तों की व्यावहारिकता का ज्ञान देता है ।

(२) यह सहकारिता तथा सहयोग की भावना उत्पन्न करता है और इसके अनुसार आचरण करने पर भी बल देता है ।

(३) यह हमें राजनीतिक तथा सामाजिक चेतना प्रदान करता है ।

(४) यह शास्त्र सफल जीवन के सिद्धान्तों का ज्ञान देता है ।

(५) यह राष्ट्रीय प्रेम के साथ ही साथ अन्तर्राष्ट्रीय भावना भी प्रदान करता है ।

(६) प्रजातन्त्र की सफलता के लिये इस शास्त्र का ज्ञान परमावश्यक है ।

(७) इस शास्त्र के द्वारा बालकों का वैज्ञानिक दृष्टिकोण बनाया जा सकता है ।

इसका विस्तृत विवेचन 'नागरिकशास्त्र के लक्ष्य तथा लाभ' नामक अध्याय में किया जायगा ।

भूगोल

(Geography)

भूगोल भी मानव जाति का अध्ययन है । भू-सम्बन्धी बातों का अध्ययन प्रायः सभी प्राचीन देशों में होता रहा है । परन्तु इसे एक स्वतन्त्र विषय के रूप में अध्ययन करने का श्रेय यूनानी भूगोल शास्त्रियों को है । उनमें पिटोलमी (Ptolemy) तथा स्ट्रेबो (Strabo) के नाम विख्यात हैं । इन्होंने भू-सम्बन्धी सामग्री को "जियोग्राफी" (Geography) के नाम से प्रख्यात किया । 'जियो' शब्द का अर्थ 'पृथ्वी', तथा 'ग्रफी' से तात्पर्य 'खींचने' या 'वर्णन करने' से है । इस भाँति जियोग्राफी का अर्थ पृथ्वी का वर्णन हुआ, चाहे वह चित्रों द्वारा वर्णित किया जाय या भाषा से माध्यम से । प्रायः इसका वर्णन दोनों ही विधियों से किया जाता है । पृथ्वी एक ऐसा विस्तृत शब्द है जिसकी व्याख्या करना मानव के लिये दुर्लभ है क्योंकि उस पर से मानव को अनेक वस्तुओं की प्राप्ति होती है । इस कारण मानव को पृथ्वी का महत्त्व तथा उपयोग निवास स्थान के रूप में है । इस प्रकार भूगोल को मानव के निवास का वर्णन कहना ही उपयुक्त प्रतीत होता है । प्राकृतिक वातावरण तथा मानव के पारस्परिक

सम्बन्ध के अध्ययन को आज हम भूगोल कहते हैं। इसका अर्थ यह है कि आधुनिक भूगोल में हम यह प्रतीत करते हैं कि मानव की बहुमुखी क्रियाएँ प्राकृतिक पर्यावरण पर कहाँ तक आश्रित हैं और वह स्वयं इस पर्यावरण को किस सीमा तक प्रभावित करता है। वस्तुतः प्राकृतिक पर्यावरण के अनुसार मानव जीवन के विकास की विवेचना ही आज के भूगोल की आधारशिला है। भूमि और मानव किसी भी प्रकार के भौगोलिक अध्ययन के आवश्यक तत्व हैं। इस प्रकार हमारे भौगोलिक अध्ययन के दो क्षेत्र हुए—प्रथम, प्राकृतिक पर्यावरण तथा द्वितीय, मानव और उसके बहुमुखी क्रिया-कलाप। पूर्णतया प्राकृतिक घटनाओं तथा वातावरण का अध्ययन भौतिक विज्ञानों के अन्तर्गत आता है। इसके अतिरिक्त केवल मानव का अध्ययन समाज विज्ञान (Social Science) में निहित होता है। इसी आधार पर भूगोल का भी दो भागों में वर्गीकरण करने का भय उत्पन्न हो सकता है—‘भौतिक भूगोल’ (Physical Geography) तथा ‘मानव भूगोल’ (Human Geography)। भूगोल में इस प्रकार का भेदभाव स्थापित करना सर्वथा निर्मूल है क्योंकि भूगोल का प्रधान लक्ष्य प्राकृतिक तथा मानवीय गतियों के भेदभाव को समाप्त करके उनमें एक सुन्दर सामंजस्य तथा एकीकरण स्थापित करना है।

१९ वीं शताब्दी की वैज्ञानिक प्रवृत्ति ने अनेक विषयों को वैज्ञानिक विचारधारा प्रदान की। प्रत्येक विषय में वैज्ञानिक विधि को अपनाया गया। भूगोल में भी इस विधि को स्वीकार किया गया। इसी विचारधारा के अनुसार भूगोल की परिभाषा इस प्रकार दी गई है “कि—भूगोल एक विज्ञान है जो भू-सम्बन्धी बातों तथा मानव की पारस्परिक प्रतिक्रियाओं का अध्ययन करता है।” इस परिभाषा से यह स्पष्ट हो जाता है कि भूगोल में क्रम-बद्धता, निरीक्षण, प्रयोग, वर्गीकरण तथा नियमीकरण के लिये स्थान है और इसका प्रत्येक तथ्य तर्कपूर्ण तथा प्रमाण सहित है।

शिक्षा के पाठ्य-क्रम में भूगोल को स्थान प्राप्त करने का अधिकार (Claims of Geography for the Inclusion in School Curriculum):—

शिक्षा के पाठ्य-क्रम में भूगोल को जिन कारणों के परिणामस्वरूप महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है वे निम्नलिखित हैं:—

(१) जीवन यापन—भूगोल मानव को अपना जीवन ठीक प्रकार से व्यतीत करने में सहायता प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त वह अवकाश के समय का सदुपयोग करने में भी सहायता देता है।

(२) जीविकोपार्जन—भूगोल की जानकारी से व्यक्ति को जीविका उपार्जन

करने में सहायता प्राप्त होती है। जीविकोपार्जन में भूगोल मानव के लिये बहुत ही लाभदायक है। इसकी जानकारी के अभाव में मानव को अनेक कठिनाइयों और असुविधाओं का सामना करना पड़ेगा।

(३) भूगोल मानव को स्थिति का सही-सही ज्ञान प्रदान करता है।

(४) भूगोल अध्ययन से स्वदेश प्रेम की भावना उत्पन्न की जाती है।

(५) इसके अध्ययन से जीवन-परिस्थितियों के भौगोलिक तथ्यों की सूझ उत्पन्न होती है।

(६) इसके अध्ययन से प्रकृति सौन्दर्य का सच्चा आनन्द प्राप्त होता है।

(७) भूगोल 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का सुखद पाठ प्रदान करता है। जिससे मनुष्य मात्र में सद्भावना, सहयोग, भलाई, नम्रता तथा एक-दूसरे के प्रति सहानुभूति जाग्रत होती है। वह अपने को विश्व का नागरिक मानने लगता है। इसके अतिरिक्त मानव समाज के कल्याण को सदैव ध्यान में रखता है।

— × —

प्रश्न

1. Distinguish between the Social Sciences and Social Studies.
2. Why are the Social Studies and Social Sciences more important to-day than ever before ?
3. Define History. What are its claims to be included in the school curriculum ?
4. The teaching of an integrated course in Social Studies is now taking the place of History, Geography and Civics viewed as separate subjects. Discuss.

—(B. T. 1957)

5. 'Social Studies is an integrated subject'. Discuss and bring out fully the limitations and possibilities of integration of Geography, History and Civics in the syllabuls of class vi in Junior High Schools of U. P.

—(B. T. 1960)

(इस प्रश्न के उत्तर के लिये अध्याय ४ को भी देखना पड़ेगा)

अध्याय २

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के लक्ष्य तथा लाभ

(Aims and Values of Teaching Social Studies)

भारतवर्ष में सामाजिक अध्ययन का शिक्षण अभी प्रारम्भिक अवस्था में है। मुद्रालय कमीशन ने अपने प्रतिवेदन में जूनियर हाई स्कूल कक्षाओं के लिये इसका पाठ्य-क्रम नियुक्त किया है। जैसा कि हम पिछले अध्याय में देख चुके हैं कि सामाजिक अध्ययन इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र तथा नागरिक शास्त्र का समन्वित रूप है जो बालक को अतीत तथा वर्तमान की समस्त सामाजिक परिस्थितियों तथा मानवीय सम्बन्धों की व्याख्या प्रदान करता है।

हम जब किसी विषय का अध्ययन करते हैं तो इससे पहले उसके लक्ष्यों तथा लाभों को जान लेना आवश्यक है क्योंकि लक्ष्य एक चेतनशील तथा क्रियाशील अभिप्राय होता है जिसको प्राप्त करना हमारे उस विषय के अध्ययन का प्रमुख ध्येय होता है। इस प्राप्ति के मार्ग में वह सदैव हमारे समक्ष रहता है। इन लक्ष्यों तथा लाभों के ज्ञान के अभाव में उस विषय का अध्ययन सार्थक नहीं होगा। यही बात सामाजिक अध्ययन के विषय में भी है। यदि हम लक्ष्यों को निर्धारित नहीं करेंगे, तो उन्हें प्राप्त करने की योजना क्रियान्वित करना सम्भव नहीं होगा। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि बिना लक्ष्य के कोई कार्य नहीं किया जा सकता। शिक्षा के उद्देश्यों के लिये

हमें समाज की ओर ध्यान देना पड़ता है; अर्थात् शिक्षा के उद्देश्य समाज की व्यवस्था के अनुसार निर्धारित किये जाते हैं। जैसा समाज होगा, उसके शिक्षालयों के वैसे ही लक्ष्य होंगे। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्रत्येक विषय के लक्ष्य सामान्य शिक्षा के उद्देश्यों के आधार पर निर्धारित किये जाते हैं। सामाजिक अध्ययन शिक्षा में प्रजातांत्रिक तथा सामाजिक विचारधारा की ही देन है। समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति ने सामाजिक अध्ययन के ध्येयों को निर्धारित करने में बहुत सहायता प्रदान की है। साधारण रूप से हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययन का ध्येय छात्रों को सामाजिकता प्रदान करना है जिससे उनमें उन गुणों का विकास हो जाय जो चरित्र निर्माण के आवश्यक तत्व हैं।

बार्निंग तथा बाईनिंग (Bining and Bining) ने अपनी पुस्तक 'Teaching of the Social Studies in Secondary Schools' में सामाजिक अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य बतलाये हैं :—

(अ) सामान्य लक्ष्य (General Aims)

(ब) मुख्य लक्ष्य (Specific Aims)

(अ) सामान्य लक्ष्य:—

(१) छात्रों को वातावरण के द्वारा उनकी शक्ति तथा योग्यता के अनुसार जीवन के लिये तैयार करना जिससे वे अपने भावी जीवन में अपने को सफलता पूर्वक व्यवस्थित कर सकें तथा अपना सुखद जीवन व्यतीत कर सकें।

(२) छात्रों को प्रजातांत्रिक आदर्शों का ज्ञान प्रदान करना जिससे वे अपने समाज तथा राष्ट्र को उन्नति की ओर अग्रसर कर सकें।

उपर्युक्त लक्ष्यों को केवल तथ्य ज्ञान के द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता वरन् इनको प्राप्त करने के लिये छात्रों को उन व्यावहारिक कार्यों में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित किया जाय जिनके द्वारा उनमें सहनशीलता, सहयोग, धैर्य, नेतृत्व, मानवता के प्रति श्रद्धा, रचनात्मक विचार-प्रक्रिया तथा परिश्रम करने के गुण आदि उत्पन्न हो जायें।

(ब) मुख्य लक्ष्य:—

(१) छात्रों की इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र तथा नागरिक शास्त्र के समन्वित पाठ्य-क्रम के तथ्यों का ज्ञान दिया जाय जिससे वे विभिन्न वातावरणों के अन्योन्याश्रित सम्बन्धों को समझने में सफल हो सकें।

(२) छात्रों में स्वतंत्र तथा शुद्ध विचारधारा, स्वस्थ चिन्तन तथा तर्क शक्ति का विकास करना। इनके विकास के लिये सामाजिक अध्ययन के तथ्यों का ज्ञान देना आवश्यक है। ज्ञान ही विचार प्रक्रिया की आधार शिला है।

(३) छात्रों में स्वाध्ययन की आदत का निर्माण करना जिससे उनकी ज्ञान प्राप्ति के प्रति सदैव रुचि बनी रहे ।

(४) छात्रों में उन आदतों तथा गुणों का विकास करना जिससे वे आदर्श नागरिक बन सकें और उनका आदर्श चरित्र निर्माण हो सके ।

(५) छात्रों में विश्वबन्धुत्व की भावनाएँ उत्पन्न करना जिससे वे मानव समाज के उपयोगी सदस्य बन सकें और उसके कल्याण तथा उन्नति के लिये सदैव तत्पर रहें ।

एम० पी० मुफात (M. P. MOFFATT) ने अपनी पुस्तक 'Social Studies Instruction' में सामाजिक अध्ययन के निम्नलिखित लक्ष्य तथा लाभ दिये हैं :—

(१) इसके अध्ययन से बालक अपने प्राकृतिक तथा सामाजिक वातावरण का ज्ञान प्राप्त करता है । इसके अतिरिक्त वह यह भी जान जाता है कि मनुष्य तथा उसके विभिन्न वातावरणों के बीच किस प्रकार की अन्योन्याश्रिता है ।

(२) बालक को उसकी संस्कृति का ज्ञान देना तथा यह बताना कि मानवता की उन्नति के लिये विभिन्न महान् मनुष्यों ने क्या-क्या देन प्रदान की हैं ।

(३) सामाजिक अध्ययन का शिक्षण बालकों को इस बात का ज्ञान देता है कि वे किस प्रकार अपने वातावरण में अपनी आधारभूत आवश्यकताओं को पूरा करेंगे तथा उसमें अपने को व्यवस्थित करेंगे ।

(४) सामाजिक अध्ययन के द्वारा यह भावना उत्पन्न करना कि बिना किसी भेदभाव के समस्त मानव जीवित रहने, स्वतन्त्रता तथा आनन्द प्राप्ति के समान रूप से अधिकारी हैं ।

(५) मानव जाति की भलाई तथा सेवा के लिये सब को कार्य करना चाहिए ।

(६) सामाजिक अध्ययन का शिक्षण बालकों को वर्गवाद विवाद तथा समस्याओं के हल करने में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित करता है । दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि इसके अध्ययन से छात्रों में वाद-विवाद तथा समस्या हल करने की योग्यता आ जाती है ।

(७) इसके अध्ययन से छात्रों में विचार प्रक्रिया, तर्क तथा प्रमाणों के आधार पर निर्णय करने की शक्ति का विकास होता है ।

एडम्स वेस्ले (Adams Wesley) ने सामाजिक अध्ययन के लक्ष्यों का अपनी पुस्तक "Teaching Social Studies in High Schools" में

स्पष्ट निर्धारण किया है। आपके अनुसार सामाजिक अध्ययन के ध्येय निम्न-लिखित हैं :—

- (१) व्यक्तित्व का विकास करना।
- (२) सामाजिक विचारधारा का ज्ञान प्रदान करना।
- (३) चारित्रिक गुणों का विकास करना।
- (४) सहयोग तथा सहकारिता की भावना का विकास करना।
- (५) वर्ग तथा समुदाय की क्रियाओं में सक्रियता के साथ सम्मिलित होने की भावना का विकास करना।
- (६) घर तथा पड़ोस को सुखी बनाना।
- (७) मानवीय तथा प्राकृतिक वातावरण की अन्योन्याश्रिता का ज्ञान देना जिससे बालक मानव जाति की अन्योन्याश्रिता को समझ सकें।
- (८) दूसरे मनुष्यों की सेवाओं की प्रशंसा करना।
- (९) बालकों में उत्तरदायित्व ग्रहण करने की शक्ति उत्पन्न करना तथा उनको सहयोगी नागरिक बनाना।
- (१०) समस्त धर्मों, जातियों, वर्गों, राष्ट्रीयताओं के प्रति आदर भाव रखने की शक्ति प्रदान करना।
- (११) सौन्दर्य पूर्ण भावों की अनुभूति प्राप्त करने की शक्ति उत्पन्न करना।
- (१२) सामाजिक संगठनों तथा प्रक्रियाओं का ज्ञान प्रदान करना।
- (१३) विश्व शान्ति स्थापित करने में सहायता प्रदान करने की शक्ति का विकास करना तथा उनमें “वसुधैव कुटुम्बकम्” की भावना विकसित करना।
- (१४) मानसिक प्रक्रियाओं का विकास करना।
- (१५) राजनैतिक विचार-प्रक्रिया का विकास करना।
- (१६) बौद्धिक रुचियों का विकास करना।
- (१७) बालक को एक निष्पक्ष उपभोक्ता बनाना।

माइकेलिस (Michaelis) ने अपनी पुस्तक “Social Studies for Children in a Democracy” में सामाजिक अध्ययन के निम्नलिखित ध्येय प्रस्तुत किये हैं :—

- (१) मानवीय सम्बन्धों तथा लगावों का ज्ञान प्रदान करना जिससे उनमें विभिन्न सामाजिक गुणों तथा कुशलताओं का विकास किया जा सके।
- (२) आर्थिक कुशलता प्रदान करना।
- (३) नागरिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास करना।
- (४) आत्मानुभूति को प्राप्त करने के लिये शक्ति प्रदान करना।

(५) बालक को प्रजातांत्रिक मनुष्य बनाना जिससे वह अपने प्रजातंत्रीय समाज में सफलता के साथ रह सके ।

(६) मानसिक विकास करना जिससे वह तथ्यों का स्थानापन्न, मूल्यांकन चयन, संगठन, प्रस्तुतिकरण तथा निर्णय करना सीख जाये ।

(७) प्रत्येक मानव के कार्यों के महत्व को समझने की शक्ति प्रदान करना ।

(८) मानवीय हित की भावना विकसित करना ।

(९) दूसरों के प्रति आदर की भावना रखने की शक्ति प्रदान करना ।

(१०) चरित्र निर्माण करने में सहायता प्रदान करना ।

(११) विश्वबन्धुत्व की भावना विकसित करना ।

जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं कि भारतवर्ष में यह विषय अभी प्रारम्भिक अवस्था में है । इसके उद्देश्यों का भारतीय स्थितियों के अनुसार निर्धारण होना आवश्यक है । भारतीय स्थितियों के अनुसार सामाजिक अध्ययन के कुछ लक्ष्य हम नीचे प्रस्तुत कर रहे हैं :—

(१) भारतवर्ष में विभिन्न जातियों के मनुष्य रहते हैं और उनकी विभिन्न भाषाएँ हैं । इस कारण इस विषय का प्रमुख लक्ष्य, छात्रों में विभिन्न धर्मों, भाषाओं, जातियों तथा राष्ट्रीयताओं के लिये आदर तथा सम्मान की भावना विकसित करना, होना चाहिये ।

(२) छात्रों में उन सभी वैयक्तिक तथा सामाजिक गुणों का विकास करना जिससे वे समाज के सहयोगी तथा विश्वसनीय सदस्य बन सकें तथा उनके सामाजिक चरित्र का निर्माण किया जा सके । वे समाज को उन्नतिशील बना सकें ।

(३) बालकों को उनके वातावरण का ज्ञान देना तथा उसके सुधार के लिये उनमें उत्साह तथा इच्छा उत्पन्न करना ।

(४) छात्रों में सामाजिक जागरूकता तथा सक्रियता का विकास करना ।

(५) छात्रों में स्वदेश प्रेम की भावना के साथ-साथ विश्वबन्धुत्व की भावना विकसित करना जिससे वे मानव समाज का कल्याण कर सकें ।

(६) उनका मानसिक विकास करना जिससे उनका दृष्टिकोण उदार तथा वैज्ञानिक बन जाये ।

(७) नागरिक के कर्तव्यों तथा अधिकारों की शिक्षा व्यावहारिक रूप से प्रदान करके उनके नागरिक चरित्र का निर्माण करना जिससे वे प्रजातन्त्र शासन को सफल बना सकें ।

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के लाभ :

यदि सामाजिक अध्ययन का अध्यापन प्रभावशाली ढङ्ग से किया जाय तो हमें उससे अनेक लाभ प्राप्त होते हैं जो अधोलिखित हैं:—

(१) सामाजिक कुशलता (Social Efficiency) :—सामाजिक अध्ययन के अन्तर्गत बालक विभिन्न प्रकार के मानवीय सम्बन्धों के विषय में जानकारी प्राप्त करता है। इसके अतिरिक्त उसको अपने सामाजिक वातावरण का भी ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इसके अध्ययन से बालक में सहयोग, सद्भावना, उत्तरदायित्व पूर्ण करने तथा सामाजिक समस्याओं का हल करने की भावना आदि गुणों का विकास होता है जो कुशल नागरिक के गुण होते हैं और उनमें नेतृत्व की भावना पैदा हो जाती है। इस प्रकार वह समाजोपयोगी नागरिक बनना सीख जाता है। वही मनुष्य कुशल सामाजिक कहलावेगा जो कि व्यक्तित्व का विकास सामाजिक क्षेत्र में रह कर करेगा। समाज के बिना व्यक्तित्व का कोई महत्व नहीं होता। व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास तभी कर सकेगा जब वह समाजोपयोगी नागरिक बनेगा क्योंकि व्यक्तित्व का एक अंग सामाजिक भी होता है। इसका विकास समाज में रहकर ही हो सकता है। सामाजिक अध्ययन बालक के व्यक्तित्व के विकास के साथ-साथ उसको कुशल सामाजिक बनाता है। यही सामाजिक अध्ययन के शिक्षण का लाभ है।

(२) व्यावहारिक उपयोगिता (Practical Utility):—सामाजिक अध्ययन के शिक्षण से बालक में व्यावहारिक उपयोगिता आती है। वह मानवीय सम्बन्धों तथा समाज के सिद्धान्तों का प्रतिपादन ही नहीं करता, अपितु उनका प्रयोग करना भी सिखाता है। इसके अध्ययन से बालक उन सिद्धान्तों तथा नियमों का प्रयोग अपने जीवन में करता है। बालक संघबद्ध रहकर सहयोग, उत्तरदायित्व तथा नेतृत्व करने की भावना प्रायोगिक रूप से सीखता है। वह विभिन्न पाठ्य-क्रम सहगामी क्रियाओं में इनका प्रशिक्षण प्राप्त करता है तथा इसके पश्चात् अपने जीवन में इन सिद्धान्तों का प्रयोग करता है। व्यक्ति के समाज के प्रति क्या कर्तव्य तथा अधिकार हैं, सामाजिक अध्ययन ऐसे प्रश्नों का उत्तर ही नहीं देता है, वरन् उनका जीवन में प्रयोग करना भी सिखाता है जो जीवन को सुखद तथा समृद्ध बनाते हैं।

(३) स्वतन्त्र अध्ययन की आदत (Habit of Independent Study):—बालक को अपने अध्ययन के लिए उपयोगी सामग्री को ढूँढना पड़ता है जिससे उसमें स्वतन्त्र अध्ययन करने की आदत का विकास होता है। सामाजिक अध्ययन का शिक्षण विभिन्न समस्याओं के रूप में किया जाता है जिनके हल के लिए बालकों को स्वतन्त्र रूप से कार्य करने को कहा जाता है जिससे उनमें

स्वावलम्बन की भावना का भी विकास होता है। स्वाध्ययन की आदत से बालकों में मानसिक साहस भी आता है जिससे वे नवीन समस्याओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करने में नहीं डरते।

(४) मानसिक शक्तियों का विकास (Development of mental powers)—समूह-मनोविज्ञान (Faculty Psychology) के समर्थकों के अनुसार मस्तिष्क विभिन्न विभागों का, अर्थात्—तर्क, चिन्तन, स्मरण, निर्णय आदि का समूह है। सामाजिक अध्ययन के शिक्षण से इन शक्तियों का विकास होता है। तथ्यों का ग्रहण करना और उन्हें सम्बद्ध करना, छात्रों में तर्क तथा चिन्तन शक्ति का बढ़ाना है। इसमें बालकों के सम्मुख विभिन्न समस्याएँ रखी जाती हैं जो उनकी चिन्तन शक्ति को बढ़ाती हैं तथा उनका हल और नियमन शक्ति, उनकी तर्क तथा निर्णय शक्तियों का विकास करती हैं।

(५) विविध जटिलताओं का निराकरण (Solution of Various Complexities)—आधुनिक युग विविधताओं तथा जटिलताओं से भरा हुआ है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हमें इन जटिलताओं का सामना करना पड़ता है। सामाजिक अध्ययन से हम इन जटिलताओं को सरलता तथा सफलता पूर्वक सुलझाने में सफल होते हैं। इन जटिल समस्याओं को हल करने से व्यक्ति में विवेक तथा नागरिकता की भावना आती है।

—: ० :—

प्रश्न

1. Enumerate the claims of including Social Studies as a Separate Subject of the School Curriculum.
2. What are the aims of teaching Social Studies and give its values.
3. What are the aims of teaching Social Studies in our school to-day ? Discuss, in view of recent Socio-economic changes in the country.

—(B. T. 1960)

अध्याय ३

सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-क्रम में स्थिति

(The Case of Social Studies in the Curriculum)

बीसवीं शताब्दी की एक महत्वपूर्ण देन 'सामाजिक अध्ययन' नामक विषय है। हमारे राष्ट्र के लिए इस विषय का महत्व माध्यमिक शिक्षा आयोग तथा अन्तर्राष्ट्रीय टीम (International Study Team) के द्वारा दर्शाया गया है। उनका विचार है कि छात्रों को यह विषय मानवीय सम्बन्धों का सिद्धान्त तथा व्यावहारिक रूप में ज्ञान प्रदान कर सकता है। इन सम्बन्धों का ज्ञान मानव समाज के कल्याण के लिए परम आवश्यक है। जब तक छात्रों को इनका ज्ञान नहीं दिया जावेगा तब तक उनमें उन सामाजिक गुणों तथा आदतों का निर्माण नहीं होगा जो सामाजिक चरित्र के निर्माण के आधार तत्व हैं। शैक्षिक कार्य क्रम में इसकी स्थिति निम्नलिखित कारणों से है :—

(अ) समाज शास्त्रीय स्थिति (Sociological Case)

(ब) शैक्षिक स्थिति (Educational Case)

(स) मनोवैज्ञानिक स्थिति (Psychological Case)

(अ) समाज शास्त्रीय स्थिति:—समस्त शिक्षा शास्त्री तथा शिक्षक इस तथ्य से सहमत हैं कि सामाजिक शिक्षा विश्व की एक प्रभावशाली माँग है

क्योंकि इसके द्वारा आधुनिक संघर्षों, विद्वेषों तथा कलह को दूर किया जा सकता है। आज का विश्व युद्ध की सम्भावनाओं से ग्रसित है। इस शंका तथा सम्भावना को तभी दूर किया जा सकता है जब मानवीय सम्बन्ध अच्छे होंगे। सामाजिक शिक्षा इन मानवीय सम्बन्धों की विवेचना करती है तथा समाज के समक्ष एक आदर्श प्रस्तुत करती है जो प्रत्येक समाज के द्वारा प्राप्त किया जाना चाहिए।

दूसरे, व्यक्ति अपने वातावरण से पृथक् कुछ भी महत्व नहीं रखता और इसी प्रकार शिक्षा भी अपनी सामाजिक वंश परम्परा से पृथक् कुछ भी नहीं है। जैसा कि ड्यूवी (Dewey) ने कहा है कि समस्त शिक्षा जाति की सामाजिक चेतनता के द्वारा ही प्रस्फुटित होती है। इस प्रकार देखने से प्रतीत होता है कि 'सामाजिक अध्ययन' को पाठ्य-क्रम में इसी सामाजिकता की भावना ने स्थान प्रदान किया है।

जैसा कि हम गत अध्याय में देख चुके हैं कि सामाजिक अध्ययन का मुख्य ध्येय सामाजिकता तथा सामाजिक चरित्र का विकास करना है। यह कार्य व्यक्ति को समाज में रखकर ही किया जा सकता है। सामाजिक अध्ययन के द्वारा मानव को उसके समाजवादी सिद्धान्तों, मानवीय सम्बन्धों तथा सामाजिक जीवन के लिये जागरूक तथा चेतनशील बनाया जाता है। सामाजिक चरित्र प्रादेशिक आधार रखता है। इस आधार के द्वारा सामाजिक चरित्र को एकरूपता प्रदान की जाती है। प्रदेश-भक्ति मूल्यों, महत्त्वों तथा मनोभावों को उत्पन्न करने में उत्प्रेरक का कार्य करती है। इस प्रकार का समाज तथा प्रदेश से सम्बन्ध या लगाव सामाजिक चरित्र की बनावट की आधार शिला है। इस सम्बन्ध तथा लगाव को सामाजिक अध्ययन द्वारा ही बालकों में विकसित किया जा सकता है जो सामाजिक चरित्र के निर्माण में मुख्य तत्व का कार्य करता है। इस प्रकार सामाजिक अध्ययन की योजना से इस सम्बन्ध को पड़ोस से नगर, नगर से जिला और प्रादेशिक, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय बनाया जा सकता है, जो आधुनिक शिक्षा का मुख्य ध्येय है और विश्व-समाज की एक शक्तिशाली माँग है। इसको सामाजिक अध्ययन की शिक्षा के द्वारा ही पूर्ण किया जा सकता है।

सामाजिक अध्ययन के महत्व का एक अन्य मुख्य कारण यह भी है कि इसके द्वारा प्रजातन्त्र के विषय में शुद्ध जानकारी प्रदान की जाती है तथा उन आदर्शों तथा मूल्यों को प्राप्त किया जाता है जिन पर प्रजातन्त्र आधारित है। वास्तविकता यह है कि वर्तमान समाज की संस्थाएँ तथा आदर्श अतीत के समाज के आदर्शों तथा संस्थाओं से सर्वथा विभिन्न हैं। इस विभिन्नता ने प्रजा-

तान्त्रिक मूल्यों तथा आदर्शों का अध्यापन आवश्यक बना दिया है। इस कारण सामाजिक अध्ययन का पाठ्य-क्रम में समावेश किया गया। प्रश्न स्वतः ही उठता है कि वे कौन से प्रजातान्त्रिक मूल्य तथा आदर्श हैं जिनको प्राप्त करना आवश्यक है। प्रथम, जनहित की भावना है। प्रजातन्त्र के द्वारा जो भी क्रियाएँ संचालित तथा संयोजित की जाती हैं उनका मुख्य उद्देश्य मानव-समाज का हित करना है। मानव मानव की भलाई करे। यह प्रजातन्त्र का मुख्य आदर्श है। इसके साथ ही वह अपने कार्यों को इस प्रकार करे जिससे अधिक से अधिक का कल्याण हो सके। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि प्रजातन्त्र के द्वारा परोपकार की भावना विकसित की जाती है जो उसका मुख्य मूल्य है। द्वितीय, प्रजातन्त्र वैयक्तिकता के विकास पर बल देता है। इसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति की मानवीय आत्मा सर्वोच्च मूल्य की है और प्रत्येक मानव का व्यक्तित्व आदरणीय है तथा सम्पूर्ण विकास चाहता है, चाहे व्यक्ति का स्थान मानव-जीवन तथा विश्व में कुछ भी क्यों न हो। प्रजातन्त्र प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के लिये समान अवसर प्रदान करता है। व्यक्ति अपनी शक्ति तथा योग्यता के अनुसार अपनी अन्तर्निहित शक्तियों का विकास करता है। इसमें भेदभाव को दूर करके उनको व्यक्तित्व के विकास तथा जीविकोपार्जन के लिये समान अवसर प्रदान किये जाते हैं। तीसरे, प्रजातन्त्र के द्वारा मनुष्यों के मस्तिष्कों को सामाजिक परिवर्तन तथा समाज की शान्तिपूर्वक पुनः रचना के लिये तैयार किया जाता है। इसके द्वारा मनुष्यों को सामाजिक संघर्षों तथा कलह को दूर करने तथा उनके स्थान पर आदर्श समाज स्थापित करने के लिये तैयार किया जाता है। चौथे, प्रजातन्त्र के द्वारा राष्ट्रीय दृष्टिकोण उत्पन्न किया जाता तथा इसके साथ ही इस दृष्टिकोण को विस्तृत करके अन्तर्राष्ट्रीय बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त सहयोग, सहकारिता, नेतृत्व, आदर, सम्मान, कर्तव्यपरायणता आदि गुणों को प्रदान किया जाता है जो आदर्श नागरिक तथा सामाजिक चरित्र के निर्णायक तत्व हैं।

सामाजिक अध्ययन के द्वारा नैतिक तथा बौद्धिक मूल्यों को विकसित किया जाता है। जैसा कि हम पिछले अध्याय में देख चुके हैं कि सामाजिक अध्ययन के शिक्षण का उद्देश्य छात्रों में स्वाध्ययन की आदत का निर्माण करना है। स्वाध्ययन द्वारा प्राप्त किया ज्ञान बौद्धिक साहस उत्पन्न करता है। दूसरे, छात्र अपनी योजनाओं तथा इकाईयों को नियोजित तथा कार्य रूप में परिणत करना जान जाते हैं। इसके अध्यापन से उनमें आत्म-निर्भरता तथा वैयक्तिक उत्तरदायित्व का भाव विकसित किया जाता है। सामाजिक अध्ययन मानवीय सम्बन्धों का अध्ययन करता है तथा विभिन्न वातावरणों की अन्यायश्रिता

को प्रदर्शित करता है। इसके ज्ञान से बालक सत्य तथा असत्य में भेद करना सीख जाता है जो उसके नैतिक चरित्र के निर्माण में बहुत सहायक है। वह यह जान जाता है कि कौन-सा साधन समाज तथा उसके विकास के लिये सत्य है और कौन-सा असत्य।

सामाजिक अध्ययन युवकों को अपनी जीवन क्रियाओं के चुनाव में सहायक सिद्ध होता है क्योंकि जब वे समाज की विभिन्न क्रियाओं का निरीक्षण करेंगे तब उनको विभिन्न व्यवसायों (Occupations) की योग्यताओं तथा गुणों का ज्ञान हो जायेगा जो उनकी रुचि को निर्धारित करने में भी सहायक होगा। इसके द्वारा युवकों में विभिन्न प्रकार की रुचियाँ उत्पन्न की जा सकती हैं जो अवकाश के समय के सदुपयोग के लिये लाभदायक सिद्ध होंगी। इन विभिन्न प्रकार के मूल्यों के कारण ही पाठ्य-क्रम में सामाजिक अध्ययन को स्थान दिया गया है। समाज शास्त्रिय स्थिति की माँग ने शिक्षा शास्त्रियों को बाध्य किया कि वे सामाजिक अध्ययन को माध्यमिक शिक्षा के स्तर तक के पाठ्य क्रम में स्थान दें।

(ब) शैक्षिक स्थिति :—समूह-मनोविज्ञान (Faculty Psychology) के अनुसार मस्तिष्क विभिन्न विभागों का एक समूह है; उदाहरणार्थ—कल्पना, निर्णय, स्मरण, तर्क, चिन्तन आदि शक्तियाँ। उनके अनुसार विभिन्न विषयों के अनुसार विभिन्न शक्तियों का विकास किया जा सकता है। किसी एक शक्ति को विकसित करने के लिये एक विशेष विषय का अनुष्ठान किया जाता था। इन विषयों के द्वारा जो शिक्षण दिया जाता था तथा उनके द्वारा जो शक्ति विकसित की जाती थी इसको विद्वानों ने मानसिक प्रशिक्षण या मानसिक अनुशासन कहा है। इस दृष्टिकोण से सामाजिक अध्ययन बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसके द्वारा बालकों की तर्क, चिन्तन तथा निर्णय शक्ति का विकास होता है। किन्तु मनोविज्ञान की आधुनिक विचारधारा 'शिक्षा का स्थानान्तरण' (Transfer of Training), ने इसका प्रभाव शैक्षिक कार्यक्रम में कम कर दिया है। इस विचारधारा के अनुसार मानसिक अनुशासन (Mental Training) किसी मुख्य विषय पर आधारित नहीं है बल्कि विषय के प्रस्तुतीकरण की विधि पर निर्भर है। इस विचारधारा के अनुसार शिक्षक का मुख्य कार्य रुचि तथा विचारों को स्पष्टता प्रदान करना है जिससे वे समान तत्वों को देखकर शिक्षा ग्रहण कर सकें। सिरिल बर्ट (Cyril Burt) ने इस बात पर बल दिया है कि सामाजिक अध्ययन के द्वारा शिक्षा का स्थानान्तरण अधिक होता है। सामाजिक अध्ययन में बालकों को विचार-प्रक्रिया, तर्क-शक्ति

निर्णय-शक्ति, कल्पना तथा स्मरण-शक्ति के विकास करने का अवसर प्राप्त होता है ।

आधुनिक शिक्षा शास्त्री इस बात से सहमत है कि बालक क्रिया द्वारा अच्छी प्रकार से सीखता है । क्रिया के द्वारा उसे जो अनुभव होता है वह शीघ्रता से ग्रहण कर लिया जाता है तथा पर्याप्त समय तक स्थायी रहता है । अनुभव वह अपने वातावरण में ही प्राप्त करता है चाहे वह प्राकृतिक हो या सामाजिक । सामाजिक अध्ययन सामाजिक वातावरण का ज्ञान प्रदान करता है जिसके बिना जाने बालक मानवीय सम्बन्धों तथा लगाव को नहीं समझ पायेगा जो उसके विकास तथा मानसिक अनुशासन के लिये परमावश्यक हैं ।

सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री अखण्ड रूप में होती है जो सीखने की प्रक्रिया के लिये बहुत ही लाभदायक है । गेस्टाल्ट मनोविज्ञान (Gestalt Psychology) के अनुसार सीखने की प्रक्रिया सम्पूर्ण के द्वारा की जाता है अर्थात् सम्पूर्ण का ज्ञान देने के पश्चात् अंश का ज्ञान दिया जाय । इससे सरलता से सीखा जाता है । सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री में इस सीखने के सिद्धान्त का सरलता से प्रयोग किया जा सकता है ।

समवाय के सिद्धान्त (Principle of Integration) के आधार पर भी सामाजिक अध्ययन को पाठ्य-क्रम में महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाता है । इसके अन्तर्गत विभिन्न सामाजिक तत्त्वों का समन्वय किया जाता है । इन सब आधारों के देखने के पश्चात् हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययन को पाठ्य-क्रम में स्थान देने के पक्ष में शैक्षिक कारण बहुत ही प्रबल है ।

(स) मनोवैज्ञानिक स्थिति :—आधुनिक मनोवैज्ञानिकों की धारणा है कि बालक के व्यक्तित्व (Personality) के निर्माण में वातावरण (Environment) का बहुत बड़ा हाथ है । बुद्धि-लब्धि के घटने-बढ़ने के सिद्धान्त (Wandering Theory of Intelligent Quotient) के समर्थकों का कहना है कि बालक की बुद्धि-लब्धि (Intelligent Quotient) को अनुकूल वातावरण के द्वारा बढ़ाया जा सकता है । यदि बालक को अच्छा वातावरण प्रदान किया जायेगा तो उसकी बुद्धि-लब्धि में परिवर्तन किया जा सकता है । मनुष्य वातावरण के प्रति प्रतिक्रिया ही नहीं करता अपितु वह उसे पूर्ण रूप से समझना भी चाहता है । सामाजिक अध्ययन सामाजिक वातावरण के ज्ञान के द्वारा उनको सत्य तथा असत्य का ज्ञान देता है और उनको अपनी आवश्यकता के अनुसार वातावरण बनाने की योग्यता प्रदान करता है कि कौन-सा वातावरण उनके लिये उपयोगी तथा लाभदायक होगा जिससे उनके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास हो सके ।

जॉन ड्यूवी (John Dewey) के अनुसार शिक्षा जीवन है। जब शिक्षा जीवन है तो बालक अपने वातावरण की ठोस परिस्थितियों से प्राप्त अनुभव के द्वारा बहुत कुछ तथा बड़ी सरलता से सीख सकता है। बालक अपने दैनिक जीवन की स्थिति से भी बहुत कुछ सीखता है। सामाजिक अध्ययन दैनिक जीवन की ठोस परिस्थितियों का ज्ञान देता है और इस ज्ञान प्राप्ति के लिये सामाजिक अध्ययन बहुत आवश्यक है।

इस प्रकार विभिन्न स्थितियों को देखने के पश्चात् हम कह सकते हैं कि यदि बालक के व्यक्तित्व का विकास करना तथा उसे आत्म-निर्भर और उत्तरदायी बनाना है तो सामाजिक अध्ययन को प्रत्येक राष्ट्र के शिक्षालयों के पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाना चाहिए। उपर्युक्त कारणों के फलस्वरूप ही इसको शिक्षालयों के पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया है।

—: ० ५—

प्रश्न

1. What do you mean by the Sociological case of Social Studies ? Discuss it fully.
2. What are the cases which have been given in the favour of Social Studies ?
3. What place would you give to Social Studies in School Curriculum and why ?

अध्याय ४

सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री के चयन तथा संगठन के सिद्धान्त

(Principles of the Selection and Organization of
Social Study's Material)

आधुनिक शिक्षा शास्त्रियों द्वारा पाठ्य-क्रम में बालक को प्रधानता दी गई है। इस प्रकार पाठ्यक्रम के तीन आधारभूत सिद्धांत माने गये हैं। वे इस प्रकार हैं :—

- १—मनोवैज्ञानिक (Psychological) आधार।
- २—दार्शनिक (Philosophical) आधार।
- ३—समाजशास्त्रीय (Sociological) आधार।

मनोवैज्ञानिक आधार के अनुसार वही पाठ्य-सामग्री पाठ्य-क्रम में स्थान प्राप्त कर सकेगी जो बालक को रुचिकर तथा समझने योग्य होगी। हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि इसमें बालक की प्रकृति, आवश्यकता, सामर्थ्य तथा रुचि के अनुसार पाठ्य-सामग्री रखी जाती है। इसके अनुसार पाठ्य-क्रम बालक-केन्द्रित होता है।

दार्शनिक आधार के अनुसार वही सामग्री चयन की जाय जो निर्धारित

लक्ष्यों तथा आदर्शों को प्राप्त करने में सहायक हो। उदाहरणार्थ—आदर्शवाद के अनुसार शिक्षा का मुख्य लक्ष्य आत्मानुभूति (Self Realization) है। इस लक्ष्य की प्राप्ति में जो सामग्री सहायक होगी उसको पाठ्य-क्रम में स्थान मिलेगा।

समाजशास्त्रीय आधार के अनुसार सामाजिक प्रवृत्तियों तथा विशेषताओं को पाठ्य-क्रम में स्थान मिलना चाहिये। ड्यूवी (Dewey) ने इस आधार को प्रधानता दी है। उसके अनुसार समस्त शिक्षा जाति की सामाजिक जागरूकता में ही उन्नतिशील होती है। इसको ध्यान में रखते हुए उसने पाठ्य-क्रम में उन्हीं अनुभवों तथा क्रियाओं को रखा है जो सामाजिक जीवन तथा उसकी क्रियाओं के प्रतिरूप हैं। दूसरे, पाठ्य-सामग्री का उद्गम सूत्र समाज की परम्पराएँ हैं।

ये तीनों आधारभूत सिद्धान्त शिक्षक को पाठ्य-सामग्री के चयन में बहुत सहायक हैं परन्तु इनके साथ अध्यापक को कुछ स्थूलात्मक सिद्धान्तों को भी ध्यान में रखना चाहिये जो कि निम्नलिखित हैं :—

१—प्रत्यक्ष अनुभव के लिए सामग्री :—सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री ऐसी चुनी जाय जिसमें बालक स्वयं प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त कर सके। इसके लिये पाठ्य-सामग्री ऐसी स्थिति प्रदान करे जिसमें स्वयं बालक कार्य करके सीख सके। जो व्यस्कीय अनुभव पाठ्य-सामग्री में रखे जायें वे ऐसे हों जो बालक की समझ में सरलता पूर्वक आ सकें; अर्थात् उनको बच्चे के अनुभवों की सीमा में अनुवादित किया जाय। तभी ये अनुभव शैक्षिक दृष्टि से उपयोगी सिद्ध होंगे।

२—बालक की क्षमता, रुचि तथा आयु के अनुसार सामग्री का चयन :—दूसरा मुख्य सिद्धांत यह है कि जो भी पाठ्य-वस्तु चुनी जाय वह बालक की रुचि तथा क्षमता के अनुसार हो। उसमें व्यस्कीय विचार बिलकुल न हों; अर्थात् जिस आयु का बच्चा है उसी के अनुसार उसको वैसी ही पाठ्य-सामग्री प्रदान की जाय। इसका अर्थ यह है कि छोटी आयु वाले बच्चों को कठिन नियमों का ज्ञान न कराया जाय वरन् उनकी समझ में आने वाले सुगम तथा सरल नियमों को बताया जाय।

ए० एन० ह्वाइट हेड (A. N. White Head) ने शैक्षिक जीवन को तीन भागों में बाँटा है—कौतूहल (Romance), यथार्थता (Precision), तथा सामान्यीकरण (Generalization)। बालक में पहले काल्पनिकता अधिक होती है। शिक्षा की पाठ्य-सामग्री ऐसी होनी चाहिये जिसके द्वारा बालक की कौतूहल वृत्ति को पूर्ण किया जा सके; अर्थात् प्राइमरी स्तर पर सामाजिक अध्ययन की

ऐसी पाठ्य-सामग्री रखी जाय जिससे उसकी कौतूहल वृत्ति को तृप्त किया जा सके। दूसरे, जूनियर स्तर के बालक कार्यों की उपयोगिता को समझने लगते हैं। वे उन्हीं कार्यों को करना पसन्द करते हैं जो उनके लिये यथार्थ अथवा उपयोगी होते हैं। अतः उपयोगिता वृत्ति की पूर्ति के लिये तदनुकूल सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री निर्धारित की जानी चाहिए। तीसरे, किशोर बालक साधारण नियम बनाना चाहता है। इस स्तर के लिये उस सामग्री को रखा जाय जिसमें बालक सामान्यीकरण कर सके। इसके विपरीत सामग्री रखने से लाभ नहीं होगा।

किशोर बालकों के लिये ऐसी सामग्री का चयन किया जाय जिसमें उनकी आत्म शक्ति को उत्तेजित किया जा सके। किशोर बालकों की आत्म-शक्ति को उत्तेजित करने के लिये हमें पाठ्यक्रम में उसकी आवश्यकताओं, इच्छाओं, क्षमताओं तथा विलक्षणताओं को पूर्ण करने वाली सामग्री रखनी चाहिए। इस शक्ति को जागरूक बनाना ही शिक्षा का मुख्य ध्येय है। किशोर बालक अन्वेषण तथा विवाद करना पसन्द करता है तथा वह इसी विश्लेषण के आधार पर सामान्यीकरण करता है। इसके अतिरिक्त वह प्रयत्न करके स्थिति पर अपना आधिपत्य स्थापित करना चाहता है। सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री इस प्रकार चुनी जाय जिससे बालक स्वयं इन गुणों को सफलतापूर्वक प्राप्त कर सके।

३—**वैयक्तिक विभिन्नताओं से व्यवस्थापन** :—सामाजिक अध्ययन की सामग्री का चयन करते समय वैयक्तिक विभिन्नताओं को भी ध्यान में रखना चाहिए। पाठ्य-सामग्री ऐसी चुनी जानी चाहिये जो वैयक्तिक विभिन्नता को संतुष्ट कर सके। यद्यपि बालकों की बहुत सी समान इच्छाएँ तथा रुचियाँ होती हैं परन्तु फिर भी उनकी योग्यता एवं सामर्थ्य में जो विभिन्नता होती है उसके अनुसार ही सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री का चयन होना चाहिये।

४—**तर्क-शक्ति का विकास** :—सामाजिक अध्ययन की सामग्री ऐसी चुनी जाय जिससे छात्रों में तार्किकता विकसित की जा सके। इससे बालक सत्य को सत्य कहने और समझने में समर्थ होगा। तार्किक ज्ञान से वह क्रियाओं तथा परिस्थितियों को ठीक प्रकार से समझ सकेगा। इसके लिये सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-वस्तु में विभिन्न समस्याओं को स्थान दिया जाय।

५—**जीवन से सम्बन्धित सामग्री होनी चाहिए** :—सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री यथार्थ जीवन की समस्याओं से चुननी चाहिये क्योंकि ये समस्याएँ बालक के अत्यन्त निकट होती हैं और वह उन्हें अपनी ही रुचियों

का एक अङ्ग समझता है। जीवन से सम्बन्धित पाठ्य-सामग्री के चयन से एक मुख्य लाभ यह होगा कि बालक अपने जगत की जानकारी प्राप्त कर लेगा जिससे शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् उसको उसमें व्यवस्थित होने में कोई कठिनाई नहीं होगी। हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि बालक को भावी जीवन के लिये तैयार किया जा सकता है।

६—स्थानीय तथा सामुदायिक वातावरण की विशेषताएँ :—सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री निर्धारित करते समय हमें स्थानीय वातावरण का पूर्ण ध्यान रखना चाहिये। यद्यपि सामाजिक अध्ययन के मुख्य लक्ष्य, राष्ट्र तथा विश्व की सामाजिक स्थितियों, विशेषताओं तथा परम्पराओं से प्रभावित होते हैं। फिर भी इन लक्ष्यों की पूर्ति में स्थानीय वातावरण अपना मुख्य स्थान रखता है क्योंकि यह राष्ट्र तथा विश्व की स्थितियों की आधार शिला है। इसके ज्ञान के बिना हम उनका ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकेंगे। इसलिये कोई भी स्थानीय वातावरण को स्वीकार करने से इन्कार नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ—पश्चिमी उत्तर प्रदेश के बालकों का सामाजिक वातावरण पूर्वी उत्तर प्रदेश के बालकों से भिन्न है। अतः हम एक ही प्रकार का पाठ्य-क्रम दोनों क्षेत्र के बालकों के लिये निर्धारित नहीं कर सकते। यदि ऐसा करेंगे तो बालक स्वयं से सम्बन्धित सामाजिक वातावरण का ज्ञान प्राप्त नहीं कर पायेंगे जो कि राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिकता का आधार है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री का चयन समय, स्थान तथा परिस्थितियों को भी ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। अतः सामाजिकता का ज्ञान देने के लिये स्थानीय सामाजिक विशेषताओं को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाय। इस प्रकार सामाजिकता की परिधि स्थानीय वातावरण पर आधारित होकर राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक विस्तृत होनी चाहिए। इस प्रकार हम कह सकते हैं निकट सम्बन्धी वातावरण की सामग्री छोटी कक्षाओं के लिये निर्धारित की जानी चाहिए।

यह कहा जाता है कि स्थानीय वातावरण सामाजिक अध्ययन की प्रथम पाठ्य-पुस्तक है और सामुदायिक वातावरण पाठ्य-क्रम की प्रयोगशाला है। किसी विषय के पाठ्य-क्रम के निर्माण के लिये समाज की परम्पराओं, विशेषताओं तथा अनुभवों को ध्यान में रखना आवश्यक है क्योंकि शिक्षा संस्कृति की प्रतीक है। यदि इनको ध्यान में नहीं रखेंगे तो हम अपने बालकों के व्यक्तित्वों का पूर्ण विकास नहीं कर सकेंगे। इसलिये सामुदायिक वातावरण की विशेषताओं को सदैव ध्यान में रखना चाहिये। बालक सर्वप्रथम घर तथा परिवार को देखते हैं। इसके पश्चात् वे यह जानना चाहते हैं कि मानव किस प्रकार रहता तथा कार्य करता और अपने अवकाश के समय का उपयोग करता है।

इस प्रकार स्थानीय वातावरण की आधारशिला पर वे अपने जिले, प्रदेश तथा समस्त समाज का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस कारण सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री का चयन करते समय सामुदायिक विशेषताओं का ध्यान रखना चाहिये तथा उनको पाठ्य-क्रम में उचित स्थान प्रदान करना चाहिये। यदि ऐसा नहीं किया जायगा तो सामाजिक अध्ययन के शिक्षण का मुख्य लक्ष्य— 'सामाजिकता' प्राप्त नहीं हो सकेगी।

(७) सामाजिक अध्ययन के लक्ष्यों, आदर्शों तथा भक्तियों की प्राप्ति :— पाठ्य-सामग्री ऐसी चुनी जानी चाहिये जिसके द्वारा सामाजिक अध्ययन के लक्ष्यों, आदर्शों तथा भक्तियों को प्राप्त किया जा सके। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री को चयन करने में लक्ष्यों तथा आदर्शों को सदैव ध्यान में रखना चाहिये।

(८) क्रिया का सिद्धान्त :—इस सिद्धान्त के अनुसार सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री ऐसी चुनी जानी चाहिये जिसके द्वारा छात्र स्वक्रिया करके ज्ञानार्जित कर सकें; अर्थात् उसमें बालकों की क्रियाशीलता के लिये स्थान होना चाहिये। इसके लिये पाठ्य-क्रम में विभिन्न योजनाओं (Projects) को स्थान दिया जाना चाहिये। उदाहरणार्थ—'हमारा घर', 'हमारा नगर', 'हमारा ग्राम', 'हमारे उत्सव', 'ग्राम के यातायात के साधन', 'ग्राम की सामाजिक दशा' आदि।

(९) लचीलापन (Flexibility) :—पाठ्यक्रम में बालकों के मूल्यों तथा अनुभवों को स्थान मिलना चाहिए क्योंकि बच्चे के अनुसार बालक अपने मूल्यों का स्वयं निर्माण करता है। वह शाश्वत मूल्यों को गौण स्थान देता है। इन मूल्यों को स्थान तभी दिया जा सकता है जब पाठ्य-क्रम में लचीलापन होगा। इससे यह स्पष्ट होता है कि पाठ्य-क्रम बालकों के लिये होना चाहिये, न कि बालक पाठ्य-क्रम के लिये। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पाठ्य-क्रम लचीला और परिवर्तित परिस्थितियों तथा मूल्यों के अनुसार ढलने वाला होना चाहिये।

सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री का संगठन

(Organization of the Contents of Social Studies)

सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री के चयन के सिद्धान्तों को देखने के पश्चात् स्वतः ही यह प्रश्न उठता है कि इस चयन की हुई सामग्री को किस प्रकार संगठित किया जाय। इसके उत्तर में कह सकते हैं कि सामग्री को इस प्रकार संगठित किया जाय जिससे बालक उसको सरलता तथा सुगमता से उप-

लब्ध कर सकें। संगठन का मुख्य ध्येय ज्ञानोपार्जन को सरल तथा सुगम बनाना है। इस कारण संगठन सीखने वाले अर्थात् बालक के दृष्टिकोण एवं सामर्थ्य के अनुरूप होना चाहिए, न कि सिखाने वाले के दृष्टिकोण से। उपर्युक्त चयन के सिद्धान्तों को देखने के पश्चात् यह स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री के दो पक्ष होते हैं—(१) ज्ञान पक्ष तथा (२) क्रिया पक्ष। पाठ्य-सामग्री का संगठन करते समय इन दोनों पक्ष को सदैव ध्यान में रखना चाहिये। इन दोनों पक्षों का संगठन करते समय उनमें ठीक-ठीक संतुलन स्थापित करना चाहिये। पाठ्य-सामग्री के उत्तम प्रकार के संगठन में जिन बातों की आवश्यकता है, वे नीचे दी जा रही है।

१—सामग्री संगठित करने में बालक की रुचियों को आधार बनाया जाय। सर्वप्रथम, बालक की शारीरिक, सामाजिक, बौद्धिक तथा नैतिक रुचियों तथा आवश्यकताओं को समझा जाय और बाद में इन्हीं रुचियों तथा प्रकृति के अनुसार कार्यों की व्यवस्था की जाय। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि पाठ्य-सामग्री को बालक की रुचियों के चारों ओर केन्द्रित करना चाहिए।

२—सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री को इस प्रकार संगठित किया जाय कि एक विषय की विभिन्न कक्षाओं की सामग्री में आन्तरिक सम्बन्ध स्थापित किया जा सके। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि एक कक्षा की पाठ्य-सामग्री की प्राप्ति के आधार पर दूसरी कक्षा की पाठ्य-सामग्री को स्वाभाविक रूप से ग्रहण किया जा सके। उदाहरणार्थ, कक्षा ६ की सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री कक्षा ७ की पाठ्य-सामग्री की उपलब्धि में सहायक हो। इस प्रकार के सह-सम्बन्ध को शीर्षात्मक समन्वय (Vertical Correlation) कहते हैं। इसका दूसरा अर्थ यह है कि एक विषय की सामग्री में ऐसा आन्तरिक सम्बन्ध स्थापित किया जाय जो उस विषय की अन्य सामग्री की उपलब्धि में सहायता दे।

३—सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री का संगठन वातावरण तथा परिस्थिति के आधार पर ही होना चाहिये। उदाहरणार्थ—बालक की अत्यन्त समीप की परिस्थिति तथा वातावरण—घर तथा शिवालय हैं। इसलिये इनसे ही उसकी शिक्षा को प्रारम्भ करना चाहिये। फिर पड़ोस, कस्बा, नगर, जिला, प्रदेश, राष्ट्र तथा विश्व आदि को लेना चाहिये। इसी प्रकार उसे पहले व्यक्ति का ज्ञान देना चाहिये फिर उसके पश्चात् समुदाय, समाज, राष्ट्र आदि की कठिनाइयों तथा समस्याओं की ओर उसका ध्यान आकर्षित करना चाहिये। हम दूसरे

शब्दों में इस सिद्धान्त को निकटता का सिद्धान्त अथवा एक केन्द्रीय विकास का सिद्धान्त भी कह सकते हैं।

४—पाठ्य-क्रम निर्धारित करने वाले के मस्तिष्क में दूसरा सिद्धान्त यह होना चाहिए कि विभिन्न विषयों के ज्ञान से सामाजिक अध्ययन के ज्ञान को समन्वित करे, अर्थात् सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री का इस प्रकार गठन किया जाय कि अन्य विषयों के ज्ञान से सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री का सम्बन्ध स्थापित हो सके। इस प्रकार के समन्वय को अनुप्रस्थीय समन्वय (Horizontal Correlation) कहते हैं। शिक्षा में समन्वय की विचार धारा ने यह आवश्यक बना दिया है कि प्रत्येक विषय का ऐसा पाठ्य-क्रम निर्धारित किया जाय जिसमें दूसरे विषयों से समन्वय स्थापित करने के लिये स्थान हो। ऐसा करने से बालक को प्रत्येक वस्तु ग्राह्य होगी क्योंकि वह नवीन ज्ञान को पूर्वानुवर्ती ज्ञान के आधार पर ग्रहण करता है। इसलिये विभिन्न विषयों का सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री से समन्वय किया जाना चाहिये। यदि ऐसा नहीं किया जायगा तो पृथक् रूप से अर्जित किया हुआ ज्ञान सार्थक सिद्ध नहीं होगा। समन्वय के द्वारा बालक के व्यक्तित्व का विकास तथा सामाजिक सम्बन्धों का ज्ञान सरलता से प्रदान किया जा सकता है।

५—सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री का गठन करते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि बहुत सी ऐसी बातें हैं जिनका अध्यापन प्रारम्भ में आवश्यक है परन्तु उस समय उनके विषय में विशेष ज्ञान नहीं दिया जा सकता क्योंकि वह बालकों के मानसिक स्तर से बहुत उच्च होगा। इस कारण उन बातों का ज्ञान प्रारम्भ में सरल तथा सुबोध रूप से दिया जाय तथा बाद में अन्य उच्च कक्षाओं में उनका विशेष ज्ञान स्तर-स्तर उच्च रूप में दिया जाय। यह तभी सम्भव हो सकता है जबकि पाठ्य-क्रम में पुनरावृत्ति के लिये स्थान हो।

सामाजिक अध्ययन के पाठ्य-क्रम के विषय

(Contents of the Syllabus of Social Studies)

सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-सामग्री के चयन तथा संगठन के सिद्धान्तों का दिग्दर्शन करने के उपरांत स्वतः ही प्रश्न उठता है कि इसके पाठ्य-क्रम में किन-किन प्रकरणों को स्थान मिलना चाहिए। इसकी पाठ्य-सामग्री निर्धारित करने से पूर्व हमें यह देखना आवश्यक हो जाता है कि इसके लिये कितना समय उपलब्ध है। मुदालियर कमीशन ने पूर्व माध्यमिक स्तर के लिये इस विषय को रखा है अर्थात् इसके अनुसार सामाजिक अध्ययन को तीन वर्ष का

समय प्रदान किया गया है इसके अतिरिक्त उत्तर माध्यमिक स्तर पर भी दो वर्ष का समय इसे प्रदान किया गया है जिसमें छात्रों को सामाजिक अध्ययन का प्रारम्भिक ज्ञान दिया जाय ।

हम नीचे विभिन्न कक्षाओं के लिये पाठ्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुत कर रहे हैं :—

कक्षा ६

(१) मानव की मूल आवश्यकताएँ :—भोजन, घर तथा कपड़ा तथा इनके विकास का संक्षिप्त ज्ञान ।

(२) स्थानीय वातावरण :—पड़ोस, ग्राम तथा नगर; उनकी जीवन स्थितियाँ, आदतें, रीति रिवाज तथा परम्पराएँ, भोजन तथा व्यवसाय ।

(३) भौगोलिक स्थितियों का मानव के भोजन, रहन-सहन, आदत तथा व्यवसाय पर प्रभाव । पृथ्वी, ऋतुएँ, जलवायु आदि का ज्ञान ।

(४) सिन्धु घाटी की सभ्यता तथा उसका महत्व ।

(५) प्राचीन काल के मनुष्यों का रहन-सहन ।

(६) नागरिक गुणों तथा आदतों का व्यावहारिक रूप से निर्माण ।

(७) स्थानीय शासन ।

कक्षा ७

(१) विभिन्न निवास स्थानों की विशेषताएँ तथा उन पर भौगोलिक स्थितियों का प्रभाव ।

(२) नदियों, वर्षा, पर्वत श्रेणी, जंगल आदि का महत्व ।

(३) प्रदेश तथा उसके निवासी—उनके रहन-सहन, परम्पराएँ, भोजन तथा व्यवसाय ।

(४) स्थानीय तथा प्रादेशिक संस्थाओं का ज्ञान ।

(५) मुस्लिम काल की सभ्यता तथा संस्कृति ।

(६) राज्य की शासन व्यवस्था ।

(७) प्रादेशिक सामाजिक समस्याएँ ।

(८) सामाजिक गुणों तथा आदतों के विकास के लिये कुछ योजनाएँ ।

कक्षा ८

(१) भारत और उसके निवासी :—भौगोलिक स्थितियों का उनके रहन-सहन, परम्पराओं, भोजन आदि पर प्रभाव ।

(२) प्राकृतिक साधनों का देश के विकास में महत्त्व ।

- (३) केन्द्रीय शासन व्यवस्था ।
- (४) भारत में ग्रंथों का आगमन ।
- (५) भारत की सामाजिक तथा आर्थिक समस्याएँ ।
- (६) स्वतन्त्रता प्राप्ति का इतिहास ।
- (७) संयुक्त राष्ट्र संघ का संक्षिप्त विवेचन ।

कक्षा ६ व १०

(१) विश्व तथा उसके निवासी—भौगोलिक स्थितियों का उनके रहन-सहन पर प्रभाव ।

(२) सरकार :—उसके विभिन्न प्रकार, उसके अंग—उनका संगठन तथा गुण-दोष ।

(३) भारतीय प्रजातन्त्र तथा नागरिकता ।

(४) संस्कृति :—विभिन्न सामाजिक संस्थाएँ, उनका संगठन तथा मानव समाज को उनकी देन ।

(५) भारतीय उद्योग ।

(६) भारतीय पुनरुत्थान ।

(७) प्रथम तथा द्वितीय पंच वर्षीय योजनाएँ ।

(८) अन्तर्राष्ट्रीय शांति की समस्या तथा उसके स्थापन के लिये उपाय ।

—: ० :—

प्रश्न

1. What place would you give to Social Studies in the Junior High School Curriculum ? Draw up briefly a syllabus for the same. (B.T. 1957)

(इस प्रश्न के उत्तर के लिये अध्याय ३ भी देखना पड़ेगा)

2. What Principles would you bear in mind while Selecting and organizing the subject matter of Social Studies ? Discuss fully.

अध्याय ५

सामाजिक अध्ययन की शिक्षण-विधियाँ

(Methods of Teaching Social Studies)

छात्र अनुभव तथा ज्ञान की प्राप्ति दो विशेष विधियों से करते हैं— प्रत्यक्ष रूप से तथा अप्रत्यक्ष रूप से । प्रथम विधि के अन्तर्गत जाने-न्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से वास्तविक वस्तुओं का अध्ययन किया जाता है । अप्रत्यक्ष विधि के अन्तर्गत दो ढङ्ग हैं । प्रथम के अनुसार, बालक पुस्तकों में व्यक्तियों के संकलित विचारों का अध्ययन करता है; अर्थात् हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि बालकों के द्वारा पुस्तक के माध्यम से ज्ञान की प्राप्ति की जाती है । इस ढङ्ग में बालक जिनके विचारों का अध्ययन करता है उनसे उसका व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित नहीं होता है । द्वितीय ढङ्ग के अनुसार बालक, मौखिक रूप से किये हुए प्रस्तुतीकरण के द्वारा ज्ञान की प्राप्ति करता है, चाहे वह प्रस्तुतीकरण शिक्षक द्वारा किया जाय या अन्य किसी व्यक्ति द्वारा । प्राचीनकाल में भारतीय शिक्षालयों में इस ढङ्ग का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रहा था । शिक्षा की प्रगतिशील विचारधारा ने इन दोनों ढङ्गों के स्थान को कम कर दिया है । परन्तु हमारे शिक्षालयों में ये दोनों ढङ्ग आज-कल भी बहुत महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण किये हुए हैं । वस्तुतः ये दोनों विधियाँ एक-दूसरे के पूरक का कार्य करती हैं । परन्तु हमें इनका उपयोग कम मात्रा

में करना चाहिये। इनका उपयोग साधन के रूप में होना चाहिये न कि साध्य के रूप में। हमारे शिक्षालयों में इन्होंने साध्य के समान स्थान ग्रहण कर रखा है।

हमारा मन्तव्य यहाँ सामाजिक अध्ययन की शिक्षण-विधियों का विवरण देना है। इससे पूर्व कि हम इसकी अध्यापन विधियों का वर्णन करें, यह जानना आवश्यक है कि विधियों का चयन करते समय हमें किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिये। ये बातें इस प्रकार हैं :—

(१) सामाजिक अध्ययन के लक्ष्यों तथा आदर्शों की प्राप्ति में शिक्षण-विधि कितना सहयोग प्रदान करती है।

(२) शिक्षक की शिक्षण-विधि की परिचालन शक्ति।

(३) विधि के संचालन में उपयुक्त सामग्री की उपलब्धि।

(४) प्रबन्धकों तथा निरीक्षकों का सहयोग और सूत्रपात।

इन बातों को ध्यान में रखकर विधियों का चयन करना चाहिये। इन्हीं के आधार पर सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में व्यवहार की जाने वाली विधियाँ हम नीचे दे रहे हैं :—

(१) पाठ्य-पुस्तक विधि (Text-Book Method)

(२) व्याख्यान विधि (Lecture Method)

(३) वादविवाद विधि (Discussion Method)

(४) योजना विधि (Project Method)

(५) इकाई विधि (Unit-Method)

(६) प्रयोगशाला विधि (Laboratory Method)

(७) समाजीकृत अभिव्यक्ति (Socialized Recitation)

(८) पर्यावलोकन विधि (Survey Method)।

(१) पाठ्य-पुस्तक विधि :—यह कहा जाता है कि भारतवर्ष में समस्त शिक्षण कार्य पाठ्य-पुस्तक विधि से किया जाता है। परन्तु यह कथन अनि-दिष्ट सा प्रतीत होता है क्योंकि प्रत्येक शिक्षण-विधि का प्रयोग पाठ्य-पुस्तक को आधार बनाकर किया जा सकता है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि पाठ्य-पुस्तक वह साधन है जिसके द्वारा किसी निदिष्ट लक्ष्य या तथ्य को प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पाठ्य-पुस्तक विधि एक स्वतंत्र शिक्षण विधि नहीं है बल्कि यह वह प्रक्रिया या माध्यम है जिसके द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। पाठ्य-पुस्तक के उचित प्रयोग पर इस साधन की सफलता निर्भर है। इस साधन का उपयोग निम्नलिखित रूप से किया जाता है :—

(i) सर्व प्रथम, इस साधन का प्रयोग इसमें दिये हुए किसी विचार या तथ्य को कंठस्थ करने के लिये किया जाता था। शिक्षक छात्रों को कोई पाठ गृह से कंठस्थ करने के लिये दे दिया करते थे। दूसरे दिन वे छात्रों से उसे मौखिक रूप में सुनते थे। जो ऐसा नहीं कर पाता था वह दंड का भागी बनता था।

(ii) इसका दूसरा उपयोग, पाठ को पूर्णतया रटने के लिये नहीं किया जाता है अपितु रटने के साथ-साथ समझने के लिये भी कहा जाता है। इस प्रयोग के द्वारा बालकों में अर्जित ज्ञान को अपने शब्दों में अभिव्यक्त करने की शक्ति उत्पन्न की जाती है। इस प्रकार उनकी अभिव्यंजना शक्ति तथा लेखन कला का विकास किया जा सकता है।

(iii) इस साधन का तीसरा रूप यह है कि पाठ्य-पुस्तक का कोई पाठ अध्ययन के लिये निर्धारित कर दिया जाता है। छात्रों से इस निर्धारित पाठ को अध्ययन करने तथा उनकी संक्षिप्त रूपरेखा या सारांश लिखने के लिये कहा जाता है। इसके पश्चात् शिक्षक तथा बालक दोनों मिलकर इस सारांश पर वाद-विवाद करते हैं और उस पाठ के विषय में निश्चित धारणा बनाते हैं। इसके पश्चात् अध्यापक उनसे विवरणात्मक रूप में इस संक्षिप्त रूपरेखा को लिखने का आदेश देता है जिससे उनके पास उसका लेखा रह सके।

(iv) इसके उपयोग का एक रूप यह है कि शिक्षक पाठ्य-पुस्तकों के पाठों के आधार पर अपना पृथक कार्य-निर्धारण (Assignment) निर्धारित करता है जिसमें पाठ की समस्त बातों का समावेश होता है। परन्तु यह कार्य इस प्रकार निर्धारित किया जाता है जिसकी पूर्ति के लिये छात्रों को अन्य पुस्तकों, सूत्रों तथा पत्र-पत्रिकाओं से सामग्री एकत्रित करनी पड़ती है। इस प्रकार पाठ्य-पुस्तक ज्ञानोपाजन का आधार बन जाती है। पाठ्य-पुस्तक के इस उपयोग को हम कार्य-निर्धारण पद्धति (Assignment Method) भी कह सकते हैं। इस उपयोग का मुख्य लाभ यह है कि छात्र पुस्तकालय का उपयोग करना सीख जाता है। दूसरे, वह स्वक्रिया द्वारा ज्ञान अर्जित करता है क्योंकि उसको विभिन्न सूत्रों से अपनी सामग्री खोजनी पड़गी है। इससे विषय में रुचि भी जाग्रत हो जाती है तथा छात्रों में स्वाध्ययन की आदत का निर्माण करने में भी सहायक है।

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में इस विधि का अन्तिम रूप, जिसमें पाठ का निर्धारण किया जाता है, अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होता है। इस नवीन रूप के उपयोग से बालक पाठ्य-पुस्तक से स्वतंत्र अध्ययन की प्रेरणा पाते हैं और इस प्रकार का अध्ययन समझने की शक्ति, चिन्तन शक्ति, तर्क शक्ति तथा

निर्णय-शक्ति को विकसित करता है, परन्तु कार्य-निर्धारण के समय निम्न-लिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है:—

(१) निर्धारित कार्य छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल हों तथा उनकी वैयक्तिक विभिन्नताओं की भी संतुष्टि करें।

(२) निर्धारित कार्य ऐसे होने चाहिये जिससे छात्र को उनके पूर्ण करने में पाठ्य-पुस्तक के अतिरिक्त अन्य उपयोगी तथा सहायक पुस्तकों का अध्ययन करना पड़े।

(३) निर्धारित कार्य ऐसा होना चाहिये जिससे बालक में स्वतंत्र अध्ययन की प्रेरणा उत्पन्न हो और धीरे-धीरे वह एक आदत बन जाय।

(४) निर्धारित कार्य छात्रों की जीवन स्थितियों से सम्बन्धित हों।

पाठ्य-पुस्तक विधि के लाभ (Advantages of Text-Book Method):—

(१) पाठ्य-पुस्तक विधि छात्रों में अध्ययन की निपुणता बढ़ाती है तथा उनका पढ़ने का स्वभाव बनाती है क्योंकि पाठ्य-पुस्तक छात्रों के दृष्टिकोण से लिखी जाती है।

(२) छात्रों में स्वाध्ययन की आदत का निर्माण करती है।

(३) पाठ्य-पुस्तक कार्य में व्यवस्था उत्पन्न करती है।

(४) इसके द्वारा स्मरण शक्ति का विकास किया जाता है।

पाठ्य-पुस्तक विधि के दो (Demerits of Text-Book Method):—

(१) यह विधि छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न नहीं करती है। उनके मानसिक अन्तरिक्ष को विस्तृत बनाने में असमर्थ रहती है।

(२) यह विधि शिक्षण के मूल सिद्धान्तों; जैसे—‘सरल से कठिन की ओर’, ‘मनोवैज्ञानिक से तर्क-सम्मत क्रम की ओर आदि की उपेक्षा करती है।

(३) इसके द्वारा छात्रों में रटने की प्रवृत्ति उत्पन्न की जाती है।

(४) इसके प्रयोग से कक्षा का वातावरण अरुचिकर तथा नीरस रहता है।

२—व्याख्यान विधि :—शिक्षण में इस विधि का प्रयोग प्राचीन काल से होता रहा है। आजकल भी भारतीय स्कूलों में इस विधि ने महत्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर रखा है। व्याख्यान का अभिप्राय पाठ को भाषण के रूप में पढ़ाने से है। इसमें शिक्षक अपने मुख से बात कह कर पढ़ाता है। इसको कथन विधि (Telling Method) भी कहते हैं। व्याख्यान विधि की सफलता दो बातों पर निर्भर है। पाठ्य-वस्तु का चयन, तथा उस पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुतीकरण करने का ढंग। प्रस्तुतीकरण का ढंग वक्ता के व्यक्तित्व पर निर्भर है। इसके लिये वक्ता में सुस्वर, तैयारी तथा योग्यता का होना आवश्यक है। शिक्षा की प्रगतिशील विचारधारा के समर्थकों का विचार है कि यह विधि

शिक्षण के लिये अनुपयुक्त है। उनका कहना है कि इसमें बालक निष्क्रिय श्रोता बना रहता है। परन्तु यह तर्क ठीक-सा प्रतीत नहीं होता क्योंकि यह विधि शिक्षा मनोविज्ञान के सिद्धान्तों के विपरीत नहीं है। इसमें छात्रों की मानसिक क्रिया होती है। यदि शिक्षक पूर्ण तैयारी तथा रोचक ढंग से अपने व्याख्यान को अपने छात्रों के सम्मुख रखेगा और उनको सक्रिय रखने के लिये उनसे प्रश्न पूछता रहेगा तो यह आरोप दूर किया जा सकता है। इस आरोप का दोषी शिक्षक है न कि विधि। व्याख्यान के द्वारा कर्णेन्द्रिय जागरूक रहती है। व्याख्यान, वक्ता के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के साथ, छात्रों के मस्तिष्क में स्थान प्राप्त करता है। सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के लिये यह विधि अत्यन्त लाभदायक है क्योंकि सामाजिक अध्ययन में विभिन्न समस्याओं, योजनाओं तथा संस्थाओं का समावेश होता है। शिक्षक अपने व्याख्यान द्वारा उनकी संक्षिप्त रूपरेखा तथा प्रस्तावना सरलता से बालक के समक्ष प्रस्तुत कर सकता है। प्रो० बाईमिंग का विचार है कि सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में व्याख्यान विधि का उपयोग इन निम्नलिखित स्थितियों को सरल तथा सुबोध बनाने के लिये किया जाना चाहिये दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययन की शिक्षा में व्याख्यान विधि का प्रयोग निम्नलिखित अवसरों पर करना चाहिये—

(i) हम इसका प्रयोग किसी बड़ी इकाई (Unit) तथा बड़े प्रकरण के पुनर्विलोकन देने के लिये कर सकते हैं; अर्थात् व्याख्यान के द्वारा इकाई की संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत की जा सकती है जिससे छात्रों को उसके अध्ययन करने में कोई असुविधा न हो और उसको सुबोध तथा सुगम रूप से सीख सकें।

(ii) इसका उपयोग सामाजिक अध्ययन के लगभग हर प्रकरण में छात्रों के अध्ययन को परिपूरित (Supplement) करने के लिये किया जा सकता है। इसके द्वारा पाठ्य-पुस्तक की सामग्री को भी परिपूरित किया जाता है। शिक्षक का यह परम कर्तव्य है कि वह अपने छात्रों को यह बतावे कि इस प्रकरण के लिये अतिरिक्त सामग्री किन स्रोतों से प्राप्त होगी और ये स्रोत किस स्थान पर उपलब्ध होंगे।

(iii) इस विधि का उपयोग विषय के स्पष्टीकरण तथा व्याख्या के लिये भी किया जाता है। यदि कोई विषय छात्रों की समझ में नहीं आया हो तो अध्यापक को व्याख्यान प्रणाली के द्वारा उस विषय को उनके लिये सरल तथा सुबोध बनाना चाहिए।

(iv) व्याख्यान प्रणाली का प्रयोग बालकों के समय की बचत करने के लिये किया जाना चाहिये।

(v) छात्रों के स्वाध्यायन के लिये नवीन कार्य के निर्धारण के लिये इस विधि का प्रयोग किया जाना चाहिये। आजकल यह प्रथा है कि छात्रों को कुछ

निर्दिष्ट पृष्ठों को पढ़ने के लिए आदेश दे दिया जाता है। व्याख्यान प्रणाली से उस निर्दिष्ट पाठ या पृष्ठों का संक्षिप्त परिचय तथा मुख्य बातों का ज्ञान दिया जा सकता है, जिससे छात्रों को यह ज्ञान हो जाय कि उन्हें इस पाठ में किन बातों का अध्ययन करना है।

(vi) व्याख्यान विधि का प्रयोग किसी पाठ की प्रस्तावना तथा सारांश देने के लिये भी किया जाता है। ऐतिहासिक विषय ऐसे हैं कि उनकी पृष्ठभूमि तैयार किये बिना हम नवीन ज्ञान अर्जित करने के लिये बालकों का पथ-प्रदर्शन नहीं कर सकते। विषय का सारांश देने के लिये भी इसका प्रयोग किया जाना चाहिए जिससे बालक उन संक्षिप्त रेखाओं को सरलता से स्मरण कर सके और उनको विस्तृत रूप से अपने शब्दों में व्यक्त कर सके।

उपरोक्त दोनों विधियाँ बहुत ही प्राचीन हैं। इन्हें परम्परागत शिक्षण विधियाँ (Traditional Methods) भी कहते हैं। इनकी सफलता शिक्षक की योग्यता तथा क्षमता पर निर्भर है। परन्तु आधुनिक शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बालकों को उनकी प्रकृति के अनुसार उनकी समस्त अन्तर्निहित शक्तियों का विकास करने का अवसर प्रदान करना है। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये शिक्षाशास्त्रियों ने विभिन्न विधियों को जन्म दिया है। इन सब विधियों का आधार यही है कि समस्त शिक्षा का उत्तरदायित्व बालकों पर हो। प्रत्येक बालक में कुछ न कुछ किसी प्रकार की योग्यता अवश्य होती है, आधुनिक शिक्षा का, इसी योग्यता का पता लगाकर विकास करना, मुख्य कर्तव्य है। शिक्षा ग्रहण करने के लिये बालकों की उसमें रुचि होनी चाहिये। जब रुचि होगी तभी वह पाठ्य-वस्तु को ग्रहण कर सकता है। आधुनिक मनोवैज्ञानिकों ने बताया कि प्रत्येक छात्र निम्नलिखित प्रकार से उत्तम शिक्षा ग्रहण कर सकता है :—

(१) निरीक्षण व अवलोकन के द्वारा।

(२) सम्बन्ध-स्थापन के द्वारा।

(३) समस्या-समाधान के द्वारा।

(४) प्रयोग के द्वारा।

(५) रचना के द्वारा।

उपर्युक्त बातें सामाजिक अध्ययन के ग्रहण करने के लिये भी लाभदायक हैं। अगले पृष्ठों में उन अध्यापन-विधियों का वर्णन किया जायगा जिनमें ये सब गुण उपलब्ध होते हैं—

३—**बाद-बिवाद विधि** :—सामाजिक अध्ययन में इस विधि का प्रयोग बहुत ही लाभदायक है तथा इस विषय के शिक्षण के लिये यह विधि बहुत ही उपयुक्त है। सामाजिक अध्ययन में सामाजिक समस्याओं का समावेश होता है।

उदाहरणार्थ—अश्वप्रश्रयता, हरिजन समस्या, जाति व्यवस्था आदि । इस विधि के प्रयोग में बालकों को स्वतन्त्रता प्राप्त होती है । इससे उनकी विचार तथा अभिव्यंजना शक्ति का विकास होता है । इसमें शिक्षक का कार्य पथ-प्रदर्शक का होता है । छात्रों का कार्य अध्ययन, तैयारी तथा व्यवस्थापना में सहायता देने का होता है । इसका पूर्ण रूप से लाभ तभी उठाया जा सकता है जब अध्यापक कक्षा के तुच्छतम विद्यार्थी की भी बात को सुने और उसके योगदान का सम्मान करे ।

४—योजना विधि :—इस विधि के जन्मदाता श्री डब्लू० एच० किलपैट्रिक (W. H. Kilpatrick) हैं । ड्यूवी (Dewey) के प्रयोजनवाद (Pragmatism) के सिद्धान्तों के आधार पर इस विधि का निर्माण किया गया है । इस विधि के निर्माण की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से हुई—

(१) शिक्षालयों की शिक्षा केवल सूचनात्मक थी और इसका दैनिक जीवन की ठोस स्थितियों तथा पर्यावरणों से कोई सम्बन्ध नहीं था ।

(२) पाठशालाओं का पर्यावरण नीरस तथा अरुचिकर होता था, वहाँ छात्र निष्क्रिय श्रोता बनकर केवल सूचनाएँ ग्रहण करते थे ।

(३) शिक्षालयों के पाठ्य-क्रम तथा शिक्षण-विधियों का बालक की रुचियों, अभिरुचियों, आवश्यकताओं तथा क्षमताओं से कोई सम्बन्ध नहीं होता था ।

(४) शिक्षा में सामाजिक दृष्टिकोण का पूर्णतया अभाव था ।

ऐसी परिस्थितियों में एक ऐसी शिक्षण-विधि की आवश्यकता प्रतीत हुई जिसमें छात्र क्रियाशील रहकर रुचिपूर्वक ज्ञान अर्जित कर सकें और उसे उपयोग में ला सकें । परिणामस्वरूप योजना विधि का निर्माण हुआ ।

विभिन्न विद्वानों ने 'प्रोजेक्ट' (Project) शब्द की परिभाषा विभिन्न प्रकार से की है । किलपैट्रिक (Kilpatrick) ने इस शब्द की परिभाषा इस प्रकार की है—“प्रोजेक्ट वह सहृदयपूर्ण अभिप्राय युक्त क्रिया है जो पूर्ण संलग्नता के साथ सामाजिक वातावरण में की जाय” (“A project is a whole hearted purposeful activity proceeding in a Social environment.”)। प्रो० स्टीवेन्सन (Prof. Stevenson) के अनुसार “प्रोजेक्ट एक समस्यामूलक कार्य है जिसका समाधान उसके प्रकृत वातावरण में रहते हुए ही किया जाता है ।” (“A Project is a problematic act Carried to completion in its natural setting.”) प्रत्येक ऐसी समस्या छात्र के दैनिक जीवन से सम्बन्धित होनी चाहिये । उसका चयन व सम्पादन बच्चों द्वारा ही होना चाहिये, शिक्षक और उसकी इच्छा का इसमें कोई स्थान नहीं है । उसका स्थान केवल पथ-प्रदर्शक तथा मित्र का है । इसमें छात्र परस्पर सहयोग व

आत्म-परिश्रम एवं सूक्ष्म से कार्य को सम्पादित करते हैं। इस प्रकार समाज में रहते हुए छात्रों में शिक्षा तथा सामाजिक गुणों, अर्थात् सहयोग, सहकारिता; नेतृत्व आदि का विकास होता है।

प्रोजेक्ट दो प्रकार के होते हैं:—(१) व्यक्तिगत, (२) सामूहिक। प्रयोजन-वाद सामूहिक योजना का समर्थक है। सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में सामूहिक योजनाओं का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके उपयोग से छात्रों में सामाजिकता तथा नागरिकता के सद्गुणों का विकास किया जा सकता है। इनमें समस्त छात्र सहकारिता तथा सहयोग के साथ कार्य करते हैं। विषय के अनुसार भी योजनाओं का वर्गीकरण किया गया है। वह इस प्रकार है:—

(१) अभ्यासात्मक (Drill Type) वे योजनाएँ, जिनके द्वारा छात्रों में किसी विशेष कला अथवा कार्य में क्षमता तथा कुशलता प्रदान की जाती है।

(२) समस्यात्मक (Problematic)—इसका प्रयोग किसी समस्या को सुलझाने के लिये किया जाता है, उदाहरणार्थ—कानपुर क्यों बड़ा नगर हो गया ?

(३) उपभोगात्मक (The Consumer Type)—इनके द्वारा अनुभूति की प्राप्ति होती है, जैसे—कविता पढ़ना, सुनना, संगीत तथा कहानी सुनना।

(४) रचनात्मक या उत्पादनात्मक (Constructive or Productive Type)—इसमें किसी वस्तु की रचना या निर्माण किया जाता है, उदाहरणार्थ—नाव बनाना, मॉडल, घर बनाना, चित्र, मानचित्र, ग्राफ, तथा चार्ट बनाना आदि।

योजना के स्तर (Steps of the Project)—योजना (Project) के स्तर योजना-विशेष के स्वरूप पर आधारित होते हैं। किन्तु सामान्यतः प्रत्येक योजना में निम्नलिखित स्तर होते हैं:—

- (१) परिस्थिति उत्पन्न करना (Creation of the Situation)
- (२) योजना का चयन (Selection of the Project)
- (३) उद्देश्य-निरूपण (Purposing)
- (४) योजना पूर्ण करने का कार्यक्रम (Plan of the Project)
- (५) कार्यक्रम को क्रियान्वित करना (Execution of the Plan)
- (६) कार्य का निर्णय (Judgment of the Work)
- (७) कार्य का लेखा (Recording)।

योजना विधि का प्रयोग सामाजिक अध्ययन में बहुत ही लाभदायक है। जैसा कि हम प्रथम अध्याय में देख चुके हैं, सामाजिक अध्ययन मानवीय सम्बन्धों का विषय है, जिनसे मानव अपने प्राकृतिक तथा सामाजिक पर्यावरण

के साथ सम्बद्ध है। इस प्रकार इस विषय के अध्ययन में केवल सूचनाओं की जानकारी से ही कार्य नहीं चलता वरन् उनके आन्तरिक स्वरूप तथा सम्बन्धों का जानना भी आवश्यक है। यदि स्वरूप की जानकारी नहीं की जायगी तो हम मानवीय सम्बन्धों तथा लगावों को ठीक प्रकार से नहीं समझ सकेंगे। प्रोजेक्ट विधि के प्रयोग से सामाजिक अध्ययन के मानवीय सम्बन्धों के आन्तरिक स्वरूप को सरलता से समझा जा सकता है। सामाजिक अध्ययन की शाखा नागरिकशास्त्र में योजनाओं (Projects) के लिये प्रचुर मात्रा में सामग्री प्राप्त होती है। नीचे उन योजनाओं के नाम दिये जाते हैं, जो सामाजिक अध्ययन के विभिन्न विषयों के अध्यापन में व्यवहार किये जा सकते हैं:—

नागरिकशास्त्र :

- (१) ग्राम पंचायत के चुनाव का पर्यावलोकन
- (२) पाठशाला की विद्यार्थी-परिषद् तथा गाँवियों का संगठन।
- (३) ग्राम की सफाई।
- (४) पाठशाला की सफाई।
- (५) विधान सभा की कार्य-प्रणाली का पर्यावलोकन।
- (६) अदालती पंचायत की बैठक का पर्यावलोकन।

भौगोलिक—

- (१) मानचित्रों का निर्माण जिनमें विभिन्न वस्तुएँ प्रदर्शित की जाँय।
- (२) भौगोलिक स्थानों का भ्रमण।

ऐतिहासिक विषय—

- (१) ऐतिहासिक वस्तुओं का संग्रह।
- (२) ऐतिहासिक मानचित्र, मॉडल तथा समय-रेखाओं (Time lines) का निर्माण करना।
- (३) ऐतिहासिक स्थानों का पर्यटन।

विविध—

- (१) पाठशाला की कृषि के सिंचाई के साधन।
- (२) सहकारी संघ की दुकान।
- (३) सहकारी बैंक।
- (४) पाठशाला की कृषि।
- (५) हमारा घर।
- (६) हमारे उत्सवः।
- (७) हमारा ग्राम।

(८) ग्राम के यातायात के साधन ।

५—इकाई विधि—समाजिक अध्ययन के अध्यापन के लिये पाश्चात्य देशों में इकाई विधि का प्रयोग किया गया है । यह विधि संयुक्त राष्ट्र अमेरिका (United States of America) में अत्यन्त लोकप्रिय है । इस विधि के निर्माण में गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों (Gestalt Psychologist) का बहुत बड़ा योग है । इनके अनुसार सीखने की प्रक्रिया के लिये जो भी सामग्री प्रस्तुत की जाय वह समग्र रूप (Whole) में होनी चाहिये । यह मनोविज्ञान इस तथ्य पर आधारित है कि शारीरिक (Physical), मनोवैज्ञानिक तथा जीवात्मक (Biological) घटनाएँ समवाय इकाइयों (Co-ordinated Units) के द्वारा घटित होती हैं । इस तथ्य को लेकर इकाई विधि का निर्माण हुआ । इसके मुख्य प्रवर्तक हेनरी सी० मोरिसन (Henry C. Morrison) हैं । इन्होंने अपनी पुस्तक “The Practice of Teaching in the secondary school” में इकाई (Unit) की व्याख्या की है । मोरिसन के अनुसार “इकाई वातावरण, संगठित विज्ञान तथा कला का विस्तृत तथा महत्त्वपूर्ण पहलू है ।” (Unit is a Comprehensive and Significant aspect of the environment, of an organized science and an art.) यह परिभाषा समाज-विज्ञान तथा प्राकृतिक विज्ञान दोनों को ही अपने में स्थान देती है । इकाई की विचारधारा को सरल तथा सुबोध बनाने के लिये हम विभिन्न विषयों की कुछ इकाइयाँ नीचे दे रहे हैं—

नागरिकशास्त्र

(१) प्रजातंत्र का क्या अर्थ है ?—(अ) प्रजातंत्र तथा सरकार के अन्य स्वरूप, (ब) भारतीय प्रजातंत्र में नागरिकता ।

(२) प्रजातन्त्रीय शासन व्यवस्था में रहन-सहन ।

(३) प्रजातन्त्र का स्थापन तथा निर्माण—(अ) घर (ब) स्कूल (स) चर्च (द) समुदाय ।

(४) भारतीय प्रजातंत्र तथा विश्व—भारत तथा अन्य देश ।

(५) प्रजातंत्र में अच्छे नागरिकों का बनाना—(अ) स्वास्थ्य, (ब) अवकाश के समय में कार्य (स) दुर्घटना तथा आग से सुरक्षा (द) अपराध से सुरक्षा ।

(६) सरकार की नीति तथा कार्य—(अ) सरकार की आय के साधन, (ब) राजनैतिक दल तथा चुनाव, (स) जनमत ।

इतिहास

(१) प्राचीन सभ्यता—(अ) सिन्धुघाटी की सभ्यता (ब) वैदिक सभ्यता ।

(२) धार्मिक जागृति—(अ) जैन धर्म (ब) बौद्ध धर्म (स) ब्राह्मण धर्म

- (३) भारतीय सम्यता तथा संस्कृति का प्रसार ।
- (४) राजपूत काल की सम्यता तथा संस्कृति ।
- (५) सल्तनत काल की सम्यता तथा संस्कृति ।
- (६) मुगलकालीन समाज और उसकी विशेषताएं ।
- (७) ईस्ट इंडिया कम्पनी ।
- (८) प्रथम स्वतन्त्रता युद्ध ।

इकाई के पद (Steps of Unit)

मौरिसन ने प्रत्येक इकाई के पाँच पद निर्धारित किये हैं । वे इस प्रकार हैं—

- (१) अनुसंधान (Exploraion)
- (२) प्रस्तुतीकरता (Presentation)
- (३) समीकरण अथवा आत्मसात्करण (Assimilation)
- (४) लेखा (Recording)
- (५) अभिव्यक्ति (Recitation)

(१) अनुसन्धान—इसके द्वारा छात्रों को नवीन इकाई के लिये तैयार किया जाता है । प्रश्नों के द्वारा उनके पूर्वज्ञान की परीक्षा ली जाती है । विचार-विमर्श तथा लिखित परीक्षा के द्वारा भी हम नवीन इकाई की पृष्ठभूमि तैयार कर सकते हैं ।

(२) प्रस्तुतीकरण—इस अवस्था पर अध्यापक व्याख्यान द्वारा नवीन इकाई की रूपरेखा प्रस्तुत करता है तथा छात्रों को, जहाँ से सामग्री प्राप्त की जायगी, उन सूत्रों को बता देता है ।

(३) आत्मसात्करण—इसके अन्तर्गत छात्रों द्वारा सामग्री को हृदयंगम किया जाता है । छात्र विभिन्न स्थानों से सामग्री एकत्रित करके उसे स्मरण करते हैं ।

(४) लेखा—छात्र हृदयंगम करने के पश्चात् सामग्री को सङ्गठित करते हैं । हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि उस सामग्री को व्यवस्थित रूप में रखने के लिये छात्र उसका लेखा करते हैं जिससे उसका प्रमाण उनके पास रह सके ।

(५) अभिव्यक्ति—इस अवस्था में छात्रों को ग्रहण की हुई सामग्री को व्याख्यान या भाषण द्वारा समस्त छात्रों के सम्मुख प्रदर्शित करना पड़ता है । यह विस्तृत रूप में प्रदर्शित नहीं की जाती है वरन् जिस प्रकार शिक्षक ने

इकाई की रूपरेखा प्रस्तुत की है उसी प्रकार छात्रों को प्रस्तुत करनी पड़ती है।

अवस्थाओं (Stages) की अवधि का पूर्व से निर्धारण नहीं किया जा सकता है क्योंकि इनकी अवधि का निर्धारण इकाई की प्रकृति तथा छात्रों के ज्ञान तथा क्षमता पर निर्भर रहता है। ये पाँचों अवस्थाएँ सामाजिक अध्ययन की इकाईयों के लिये प्रयोग में लाई जा सकती हैं। यदि देखा जाय तो ये पाँचों अवस्थाएँ हरबार्ट (Herbart) के पाँचों सोपानों के समान हैं परन्तु इनमें अन्तर केवल इस बात का है कि हरबार्ट के सोपानों में शिक्षक प्रधान है और मौरिसन (Morrisson) की अवस्थाओं में बालक प्रधान है।

इकाई विधि के लाभ (Merits of Unit Method) :—

- (१) इसके द्वारा बालकों में विषय के प्रति रुचि उत्पन्न की जा सकती है।
- (२) बालकों की लज्जाशील प्रवृत्ति तथा भ्रमक को दूर किया जा सकता है।
- (३) इसके द्वारा सम्पूर्ण ज्ञान की उपलब्धि पर ध्यान दिया जा सकता है। दूसरे यह विधि मनोवैज्ञानिक है।
- (४) इसके द्वारा छात्रों में योजना (Plan) बनाने का गुण उत्पन्न किया जा सकता है।
- (५) इसमें छात्रों की वैयक्तिक विभिन्नताओं की संतुष्टि की जा सकती है।
- (६) छात्रों में सहयोग, विनम्रता, नेतृत्व सहकारिता, धैर्य, सहनशीलता आदि गुणों का विकास किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त छात्रों में उत्तरदायित्व पूर्ण करने की भावना उत्पन्न की जा सकती है।
- (७) इसके द्वारा छात्रों में स्वाध्ययन की आदत का निर्माण किया जा सकता है।

इकाई विधि के दोष (Demerits of Unit Method) :—

- (१) इकाई विधि, अन्य विधियों की भाँति, सभी प्रकार के ज्ञानोपार्जन के लिये उपयुक्त नहीं है। इसके द्वारा हम छात्रों को अनुभूति (Appreciation) का पाठ नहीं दे सकते, अर्थात् इसके द्वारा छात्रों में सौंदर्य-भावना का विकास नहीं किया जा सकता है।
- (२) इस विधि के प्रयोग में पर्याप्त समय लगता है।
- (३) यदि इस विधि को पूर्ण सावधानी से संचालन नहीं किया गया तो यह यंत्रवत् बन जायगी।
- (४) इस विधि के सिद्धान्तों के अनुसार छात्रों को विषय का या तो पूर्ण ज्ञान हो जाता है या बिल्कुल नहीं हो पाता, क्योंकि यह विधि समग्र के सिद्धान्त

पर आधारित है, परन्तु सामाजिक अध्ययन की विषय सामग्री ऐसी है जिसका ज्ञान प्रत्येक व्यक्ति को कुछ न कुछ अवश्य हो जाना चाहिये जिससे वह समझ-दारी के साथ अपने सम्बन्धों को स्थायी बना सके। यदि इस विधि के द्वारा ज्ञान नहीं हुआ तो यह निरर्थक रहेगी।

६—प्रयोगशाला विधि :—जब समाज विज्ञान के अध्यापकों द्वारा यह प्रश्न उठाया जाता है कि हमारे विषय के लिये एक प्रयोगशाला की आवश्यकता है तो इस पर प्रिंसिपल तथा अन्य अधिकारियों को आश्चर्य होता है कि नागरिक शास्त्र, इतिहास आदि विषयों को भी प्रयोगशाला की आवश्यकता है। सामाजिक अध्ययन के साथ भी यही प्रश्न उठता है। इसके उत्तर में यह कहा जा सकता है कि यदि प्रत्येक विषय की प्रयोगशाला पृथक् रूप से स्थापित कर दी जायगी तो उससे छात्रों के लिये उस विषय के लिए एक ऐसा आनन्दमय वातावरण स्थापित हो जायेगा, जिसमें वे सरलता तथा सुगमता से क्रिया द्वारा सीख सकते हैं। यदि इसकी व्यवस्था नहीं होगी तो अध्यापक को अपने विषय की सामग्री को एक कक्ष से दूसरे कक्ष में ले जाने में पर्याप्त समय लगेगा और उस सामग्री के टूटने फूटने का भी डर रहेगा। इसके पक्ष में हम यह भी कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययन भी विज्ञान है चाहे वह प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति इतना शुद्ध विज्ञान न हो परन्तु विज्ञान की उदार परिभाषा के अन्तर्गत यह भी विज्ञान है। इसलिए इसके लिये भी प्रयोगशाला अर्थात् पृथक् कक्ष चाहिए जिसमें उसकी सम्पूर्ण सामग्री व्यवस्थित रूप से रखी जा सके। अब प्रश्न यह उठता है कि सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला के लिये किन-किन वस्तुओं की आवश्यकता है? डा० जे० डब्लू० बाल्डविन (J. W. Baldwin) ने सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला के लिये निम्नलिखित सामग्री आवश्यक बतलायी है :—

(१) सामान्य कक्ष से बड़ा एक कक्ष चाहिये, जिसमें दो छात्रों के लिये एक मेज तथा दो कुर्सियाँ की व्यवस्था की जाय। इस प्रकार कुल २० मेज तथा ४० कुर्सियाँ होनी चाहिये।

(२) श्यामपट

(३) विषय की पाठ्य-पुस्तकों तथा अन्य सहायक पुस्तकों की व्यवस्था अलमारियों में होनी चाहिये। ये अलमारियाँ दीवार में हों तो अच्छा होगा क्योंकि लकड़ी की अलमारियों से पर्याप्त मात्रा में स्थान घिरेगा।

(४) फिल्म तथा स्लाइड्स।

(५) प्रोजेक्टर तथा स्क्रीन।

(६) उपयुक्त मानचित्र, चार्ट, ग्राफ, चित्र तथा ग्लोब ।

(७) शब्दकोष तथा पत्र पत्रिकाएँ ।

(८) रेडियो तथा टेलीविजन ।

प्रयोगशाला विधि अध्ययन की सामग्रियों के प्रयोग को प्रमुखता प्रदान करती है । इस विधि में अध्यापक बालकों को निश्चित कार्य बाँट देते हैं । शिक्षक कार्य का निर्धारण करके उसके विषय में एक रूपरेखा प्रदान करता है जिसमें वह यह भी बता देता है कि इस कार्य की पूर्ति में अमुक-अमुक वस्तुओं की सहायता अपेक्षित है तथा अमुक-अमुक स्थान से सामग्री प्राप्त की जा सकती है । इसके पश्चात् बालक प्रयोगशाला में बैठकर अपने-अपने कार्यों की पूर्ति की ओर संलग्न हो जाते हैं । समस्त छात्र अपनी रुचि के अनुसार प्राप्त कार्य के लिये काम करते दिखाई देते हैं । इस प्रकार उन्हें अपनी वैयक्तिक विभिन्नताओं के अनुसार कार्य प्राप्त हो जाता है और उनका अध्ययन वैयक्तिक हो जाता है जिससे उनकी वैयक्तिक विशेषता का विकास सम्भव हो जाता है । शिक्षक प्रयोगशाला में छात्रों का मित्र तथा पथ-प्रदर्शक होता है और उनकी वैयक्तिक कठिनाइयों को सुलभाता है । इसमें 'करके सीखो' के सिद्धांत को आधार बनाया गया है । इस विधि में बालक की क्रियाशीलता को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता है । इस विधि का मुख्य दोष यह है कि यह बहुत व्ययपूर्ण है । यह भारत जैसे निर्धन देश के लिये उपयुक्त नहीं है क्योंकि यहाँ तो सामान्य कक्ष भी उपलब्ध नहीं हो पाते हैं । अतः विशेष कक्षों की व्यवस्था का कार्य एक स्वप्न के समान है । दूसरे, भारत में छात्रोपयोगी पत्र-पत्रिकाएँ तथा पाठ्य पुस्तकें ही पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हैं जिनको प्रयोगशाला में रखा जा सके । तीसरे, यदि प्रयोगशाला में उचित ध्यान नहीं दिया गया, तो यह विधि यांत्रिक हो सकती है । अन्त में हम कह सकते हैं कि यह विधि बहुत से दृष्टिकोणों से बहुत ही लाभदायक है क्योंकि इसमें बालक, उसकी वैयक्तिकता तथा क्रियाशीलता को प्रमुखता प्रदान की गई है जिससे हम अपने शिक्षा के उद्देश्य को, कि बालक का सम्पूर्ण विकास किया जाय, प्राप्त करने में सहायता प्राप्त करते हैं । इसमें सीखने के सिद्धान्तों को उपयुक्त स्थान प्रदान किया जाता है ।

७—समाजीकृत अभिव्यक्ति :—वेस्ले के अनुसार समाजीकृत अभिव्यक्ति एक आदर्श है जो शिक्षण में ऐसे प्रयोग की कल्पना करता है जिसमें कक्षा के सभी बालक सहयोग तथा सद्भावना से ज्ञानोपार्जन कर सकें । इसके द्वारा कक्षा के पर्यावरण की औपचारिकता को समाप्त किया जाता है तथा इसके स्थान पर स्वाभाविकता उत्पन्न की जाती है, जिसमें बालक अपनी प्रकृति, रुचि तथा सहयोग के साथ ज्ञानोपार्जन कर सकता है । इसके द्वारा छात्रों में उत्तर-

दायित्वपूर्ण करने तथा स्वस्थ चिन्तन की शक्ति उत्पन्न की जाती है। इस विधि का प्रयोग छात्रों, शिक्षक तथा विषय के उद्देश्यों पर निर्भर है। इस विधि के प्रयोग के लिये कक्षा में बैठने की व्यवस्था परम्परागत विधि से नहीं वरन् चन्द्राकार ढंग से की जाती है और शिक्षक का स्थान भी इनमें ही होता है, उसके लिये परम्परागत ढंग की भाँति विशेष स्थान नहीं होता है। सामाजिक अभिव्यक्ति को सामाजिक वाद-विवाद के नाम से पुकारा जाता है। प्रो० बाइनिंग तथा बाइनिंग ने वाद-विवाद के विषयों की योजना चार प्रकार की बतलाई हैं जो इस प्रकार हैं :—

- (१) औपचारिक वर्ग-योजना (Formal Group Plan)।
- (२) अनौपचारिक वर्ग योजना (Informal Group Plan)।
- (३) आत्म-निर्देश वर्ग योजना (Self-directing Group Plan)।
- (४) सेमीनार वर्ग-योजना (Seminar Group Plan)।

१—औपचारिक वर्ग-योजना :—इसके अन्तर्गत छात्र अपने को व्यवस्थित करके कार्य प्रारम्भ करते हैं। जिस प्रकार प्रौढ़ अपने क्लब, कौंसिल तथा सीनेट बनाकर किसी समस्या को एक व्यवस्थित ढंग से सुलझाते हैं, उसी प्रकार छात्र भी अपने को संगठित करके सभी समस्याओं पर वाद-विवाद करते हैं। व्यवस्थित रूप में हम अध्यक्ष की आज्ञा लिये बिना अपना प्रस्ताव, विचार तथा सुझाव नहीं रख सकते हैं।

२—अनौपचारिक वर्ग-योजना :—इसके अन्तर्गत कोई व्यवस्थित योजना नहीं होती। छात्र तथा अध्यापक स्वच्छन्द रूप से किसी भी समस्या पर विचार कर सकते हैं।

३—आत्म-निर्देश वर्ग-योजना :—यह उच्च कक्षाओं के लिये बहुत लाभदायक है। इसमें शिक्षक कों बहुत कम बोलना पड़ता है। छात्र ही समस्याओं पर वाद-विवाद करके उनका स्वयं हल निकालते हैं। यह छोटी कक्षाओं के लिये उपयोगी नहीं है।

४—सेमीनार वर्ग योजना :—यह अधिकतर कॉलेज स्तर पर प्रयोग में लाई जाती है। इसमें एक वर्ग को एक समस्या दे दी जाती है। यह वर्ग उसके विषय में पूर्ण अन्वेषण करके उसको वाद-विवाद तथा आलोचना के लिये सेमीनार में रखता है। उस पर सब अपने-अपने विचार प्रकट करेंगे। कुछ उसके पक्ष में बोलते हैं और कुछ विपक्ष में। अन्त में उस समस्या के निराकरण के लिये सुझाव दिये जाते हैं।

समाजीकृत अभिव्यक्ति के लाभ (Advantages of Socialized Recitation) :—

- (१) छात्र योजना बनाना सीख जाते हैं ।
- (२) छात्रों की प्रेरणा-शक्ति को प्रोत्साहित किया जाता है ।
- (३) छात्रों के समान उद्देश्यों तथा रुचियों की खोज की जाती है ।
- (४) छात्र वाद-विवाद में भाग लेना सीख जाते हैं ।
- (५) छात्र आत्म-निर्णय करना सीख जाते हैं ।
- (६) छात्रों में स्वतन्त्र विचारणा की नींव डाली जाती है ।
- (७) छात्र अपने विचारों तथा निर्णयों को संगठित तथा लिखित रूप में रखना सीख जाते हैं ।
- (८) छात्रों में आत्म-विश्वास उत्पन्न किया जाता है ।
- (९) छात्रों में सहयोग की भावना विकसित की जाती है ।
- (१०) शिक्षक अपने बालकों के विषय में पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर सकता है । वह उनके गुणों तथा दोषों को जानने में इसी विधि के द्वारा समर्थ होता है ।
- (११) यह विधि मनोवैज्ञानिक है । इसमें जो भी समस्या ली जाती है वह उनके जीवन से सम्बन्धित होती है और उनको उनकी रुचियों तथा प्रवृत्तियों के अनुसार शिक्षा दी जाती है ।
- (१२) छात्रों में शिक्षक तथा दूसरों के लिये आदर की भावना उत्पन्न की जाती है ।

८—पर्यावलोकन विधि :—इसमें छात्रों को स्वयं अन्वेषण करने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है । इस विधि के अन्तर्गत स्थानीय वातावरण का पर्यावलोकन (Survey) बहुत ही सरल है । इस विधि का प्रयोग छोटी-छोटी कक्षाओं में भी सुलभ है । इसके प्रयोग के लिये कक्षा को पाँच या छः वर्गों में विभाजित किया जाता है और प्रत्येक वर्ग को एक विषय का निरीक्षण करने का कार्य दिया जाता है । उदाहरणार्थ—हम एक ग्राम का पर्यावलोकन निम्न-लिखित रूप से कर सकते हैं :—

- (१) 'क' वर्ग—ग्राम की भौगोलिक स्थिति का पर्यावलोकन करेगा ।
- (२) 'ख' वर्ग—ग्राम के उद्गम तथा उसके विकास के विषय में खोज करेगा । प्रत्येक स्थान अपना कुछ न कुछ इतिहास अवश्य रखता है । यह वर्ग उस ग्राम की प्राचीन स्थिति तथा वह वर्तमान स्थिति किस प्रकार आई, आदि बातों का पर्यावलोकन करेगा ।
- (३) 'ग' वर्ग—ग्राम की जनसंख्या, व्यवसायों तथा आर्थिक दशाओं के विषय में पर्यावलोकन करेगा ।

(४) 'घ' वर्ग—घरों तथा दुकानों की गणना करेगा। इसके अतिरिक्त यह वर्ग यातायात के साधनों तथा सुविधाओं का पर्यावलोकन करेगा।

(५) 'च' वर्ग—शासन व्यवस्था तथा सामाजिक स्थितियों के विषय में ज्ञान प्राप्त करेगा।

इस प्रकार जब समस्त वर्ग अपने-अपने निर्धारित कार्यों का पर्यावलोकन कर लेते हैं तब सब छात्र मिलकर उन पर वाद-विवाद करते हैं और निर्णय तथा परिणाम निकालते हैं। इसके साथ ही उसको लेखबद्ध करते हैं तथा अपने कक्ष के लिये मानचित्र, कलाओं के नमूने एकत्रित करके तथा स्वयं बनाकर लाते हैं। इस प्रकार उनका कक्ष भी सुसज्जित हो जायेगा और आने वाले छात्रों के लिए लाभदायक भी सिद्ध होगा। इसमें सीखने के सभी सिद्धान्तों का समावेश है। वे क्रिया द्वारा ज्ञान अर्जित करते हैं।

सामाजिक अध्ययन की शिक्षण विधियों को देखने के पश्चात् हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययन की शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति किसी एक विधि से नहीं हो सकती है। इसलिये सामाजिक अध्ययन के शिक्षक का परम कर्तव्य हो जाता है कि वह विषयानुसार इन विधियों का प्रयोग सतर्कता के साथ करे। यदि वह सतर्क नहीं रहेगा तो वह अपने उद्देश्यों की पूर्ति में सफल नहीं हो सकता।

—: ० :—

प्रश्न

1. What are the methods of teaching Social Studies ? Which method will you prefer and why ?
2. What are the advantages and disadvantages of Unit and Laboratory methods.
3. What do you mean by Socialized Recitation Method and how it can be practiced ?
4. What kind of traditional methods are used in the teaching of Social Studies ?

अध्याय ६

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में सहायक सामग्री

(Aids of Teaching Social Studies)

प्राचीन काल में शिक्षण कार्य शिक्षक द्वारा मौखिक रूप से किया जाता था जिसमें छात्र निष्क्रिय श्रोता बना रहता था । वर्तमान शिक्षा शास्त्री इस विचारधारा के मानने वाले हैं कि छात्र सक्रिय रहकर ज्ञान की प्राप्ति करे । इसके लिये अब शिक्षक विभिन्न प्रकार के साधन जुटाता है जिससे पाठ्य-वस्तु स्पष्ट तथा सुबोध बन जाय और बालक उसमें क्रियाशील बना रहे । इन्हीं साधनों को सहायक सामग्री के नाम से पुकारा जाता है । एक विधि विस्तृत तथा अपने आप में पूर्ण होती है परन्तु सहायक सामग्री एक छोटा सा साधन है जिसके द्वारा विषय में विशेष समय पर रुचि जाग्रत की जाती है । दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि सहायक सामग्री वह साधन है जिसके द्वारा किसी विषय-विशेष या बिन्दु (Point) विशेष को स्पष्ट किया जाता है । सामाजिक अध्ययन के शिक्षक के पास उन साधनों का भण्डार है जिनके उपयोग से वह अपने विषय को स्पष्ट तथा सुबोध बना सकता है और विषय में अपने छात्रों की रुचि को जाग्रत कर सकता है । इन साधनों में उदाहरण (Illustration) एक महत्वपूर्ण साधन है । उदाहरण का अर्थ है—प्रकाश डालना और शिक्षण कार्य में उदाहरण का अर्थ छात्रों के लिये कठिन बिन्दुओं का स्पष्टीकरण है ।

अच्छे उदाहरण दुरुह तथा जटिल कथन को सरल, सजीव, बोधगम्य तथा सरस बना देते हैं, क्योंकि ये इन्द्रियों को सम्बोधित करते हैं और इन्द्रियों द्वारा ग्रहण किया हुआ ज्ञान स्थायी होता है। इन्द्रियाँ ही ज्ञान के द्वार हैं जिनके द्वारा उसकी उपलब्धि होती है।

इस प्रकार 'सामग्री' शब्द का अर्थ समझने के उपरान्त हमारे सम्मुख यह प्रश्न उठता है कि सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में उपयोग की जाने वाली सामग्री कौन-कौनसी हैं? इसको हम सुविधानुसार निम्नलिखित विभागों में विभाजित कर सकते हैं—

(अ) परम्परागत सहायक सामग्री (Traditional Aids)—उदाहरणार्थ पाठ्य-पुस्तक, श्यामपट आदि।

(ब) प्रदर्शनात्मक सामग्री (Visual Aids)—उदाहरणार्थ-मानचित्र, ग्लोब, चित्र, चार्ट, रेखाकृति (Diagram), मॉडल आदि।

(स) श्रव्य-दृश्य सामग्री (Audio-Visual Aids)—उदाहरणार्थ-रेडियो फिल्म तथा फिल्म-खण्ड (Film Strips), टेप-रेकार्डर (Tape-recorder) आदि।

(अ) परम्परागत सामग्री

(१) पाठ्य-पुस्तक—प्राचीन काल में शिक्षक अपने मुख से छात्रों के कानों तक ज्ञान पहुँचाता था। परन्तु जब से लेखन-कला का उद्गम हुआ तब से उसको अपने शिक्षण कार्य को सरल तथा सुबोध बनाने के लिये एक उपकरण प्राप्त हुआ है जो पाठ्य-पुस्तक के नाम से प्रख्यात है। भारतीय शिक्षालयों में इस सामग्री या उपकरण का उपयोग पर्याप्त मात्रा में आजकल भी हो रहा है। पाठ्य-पुस्तकों का भारतीय शिक्षालयों में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। परन्तु सामाजिक अध्ययन एक नवीन विषय है जो मुदालियर कमीशन के द्वारा प्रस्तावित किया गया था। इस विषय की पाठ्य-पुस्तकों का बाजार में अभाव है। सर्वप्रथम, इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र तथा अर्थशास्त्र की पुस्तकों से मनोरथ पूर्ण करने का प्रयत्न किया गया, किन्तु इस प्रयत्न से कोई विशेष लाभ नहीं हो सका। क्योंकि सामाजिक अध्ययन एक सम्मिलित विषय है जिसमें विभिन्न सामाजिक विषयों से वे तत्व लिये गये हैं जो मानवीय सम्बन्धों तथा लगावों को समझने में लाभदायक हैं। इसकी पुस्तकों का आधार समस्याएँ तथा प्रकरण होने चाहिये। सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-पुस्तक की भारतीय स्थिति आदि बातों का दिग्दर्शन करने के उपरान्त स्वतः ही यह प्रश्न उठता है कि

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में पाठ्य-पुस्तक की क्या आवश्यकता है ? इस प्रश्न के उत्तर में हम निम्नलिखित कारण प्रस्तुत करते हैं:—

(१) प्रथमतः सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-पुस्तक की आवश्यकता शिक्षक को ही है क्योंकि जिन शिक्षकों पर इसके अध्यापन का भार है उनको इस विषय की सामग्री का ज्ञान तथा उसकी व्यवस्था के ढङ्गों को जानना परमावश्यक है। पाठ्य-वस्तु तथा उसकी व्यवस्था के ज्ञान के लिये पाठ्य-पुस्तक ही शिक्षक की पथ-प्रदर्शक बनेगी। इसके अतिरिक्त पाठ्य पुस्तक विषय की सीमाओं का भी आभास प्रदान करेगी। इन सब के ज्ञान के अभाव में शिक्षक सफल शिक्षण करने में असमर्थ रहेंगे। इस कारण पाठ्य-पुस्तक का सुलभ होना शिक्षकों के लिये आवश्यक है।

(२) छात्रों के दृष्टिकोण से भी पाठ्य-पुस्तक आवश्यक है। इसके उत्तर में हम निम्नलिखित बातें प्रस्तुत करते हैं—

(i) जब छात्र किसी समस्या का अध्ययन करेंगे तो उनको पाठ्य-पुस्तक का सहारा लेना पड़ेगा।

(ii) किसी इकाई या कार्य-निर्धारण की तैयारी के लिये भी आवश्यक है।

(iii) पाठ्य-पुस्तक वैयक्तिक विभिन्नताओं को भी संतुष्ट करने में सहायक है क्योंकि वे छात्रों की आयु, मानसिक स्तर, रुचि तथा दृष्टिकोणों को ध्यान में रखकर लिखी जाती हैं।

(iv) स्वाध्ययन के लिये भी आवश्यक है।

(३) जिन शिक्षालयों में पुस्तकालयों का उत्तम प्रबन्ध नहीं होता है उनमें पाठ्य-पुस्तकों का निर्धारण होना आवश्यक है क्योंकि छात्र इनसे अपने विषय का ज्ञान कर सकने में तथा अपने को अज्ञान से दूर रखने में सफल हो सकेंगे। भारतीय शिक्षालयों में पुस्तकालयों की व्यवस्था ठीक नहीं है। जैसा कि पी० रेन (P. Wren) ने कहा है कि भारतीय शिक्षालयों का बहुत बड़ा भाग होलिका में रखने योग्य है। इस कारण सामाजिक अध्ययन के लिये, जो एक नवीन विषय है, पाठ्य-पुस्तकों का होना अति अनिवार्य है।

(४) पाठ्य-पुस्तकों के द्वारा शिक्षक तथा बालक दोनों के समय की बचत होती है।

(५) इनके द्वारा छात्र तथा शिक्षक दोनों के कार्यों में व्यवस्था तथा क्रम-बद्धता प्रदान की जाती है।

(६) इसके द्वारा छात्रों की स्मरण तथा तर्क शक्तियों का विकास किया जा सकता है।

सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-पुस्तकों के मूल्यांकन की माप

(Scale for Evaluating Text-Books in Social Studies)

(अ) प्रकाशन सामग्री :—

- १—पुस्तक का नाम
- २—लेखक या लेखकगण
- ३—प्रकाशक
- ४—पृष्ठों की संख्या
- ५—पुस्तक का मूल्य

(ब) यांत्रिक तत्त्व :—

- १—पुस्तक का आकार तथा साज-सजा
- २—जिल्द की सुदृढ़ता
- ३—कागज
- ४—छपाई
- ५—मारजिन की चौड़ाई

(स) संगठन :—

- १—पाठों की सामान्य योजना
- २—पाठों का तर्क सम्मत विभाजन
- ३—पाठों की पूर्णता
- ४—सारांश

(द) प्रस्तुतीकरण :—

- १—शैली
- २—भाषा
- ३—स्थूलता
- ४—निष्पक्षता
- ५—प्रायोगिक शब्द

(ध) उदाहरण :—

- १—उदाहरणों की शुद्धता
- २—गुण
- ३—छात्रों के उपयुक्त उदाहरण

(र) चित्र, मानचित्र, रेखाकृति, ग्राफ तथा चार्ट :—

- १—संख्या

- २—शुद्धता
- ३—स्थूलता
- ४—आकार
- ५—उपयुक्तता तथा मूल्य
- ६—स्पष्टता

(ल) प्रश्न :—

- १—पाठ्य-वस्तु से सम्बन्ध
- २—उनकी विस्तृतता
- ३—शिक्षक तथा छात्रों की दृष्टि से मूल्य
- ४—उनकी प्रेरणात्मक शक्ति
- ५—उनका व्यवस्थापन

(म) परिशिष्ट तथा अनुक्रमणिका :—

- १—व्यवस्थापन
- २—विषय सूची
- ३—व्यवहारिकता
- ४—पूर्णता
- ५—महत्त्व

(प) विशेष अध्ययन योग्य पुस्तकें :—

- १—व्यवहारिकता
- २—शिक्षक के लिये महत्त्व
- ३—छात्र के लिये महत्त्व

सामाजिक अध्ययन की पाठ्य-पुस्तक के मूल्यांकन का माप देखने के पश्चात् हमें यह जानना अनिवार्य हो जाता है कि इसकी पाठ्य-पुस्तक में क्या गुण होने चाहिये । ये गुण अधोलिखित हैं—

(१) पुस्तक की आकृति बच्चों की आयु के अनुसार होनी चाहिए । छोटे बालक चित्रों को देखने में आनन्द लेते हैं । अतः उनकी पाठ्य-पुस्तक की बाह्य आकृति पूर्ण सज्जक के साथ होनी चाहिए ।

(२) पुस्तक की जिल्द मजबूत तथा अच्छी हो ।

(३) पुस्तक का कागज साफ, चिकना तथा अच्छा हो ।

(४) पुस्तक की छपाई में जो टाइप उपयोग में लाया जाय वह बालकों की आयु के अनुसार हो जिससे उनकी आँखों पर पड़ते समय जोर न पड़े । इसकी छपाई भी सुन्दर तथा आकर्षक होनी चाहिए । माध्यमिक कक्षाओं की

पाठ्य-पुस्तकों में कम से कम १" का मारजिन रखा जाय जिससे छात्र मुख्य स्थलों तथा बातों को लिख सकें ।

(५) सामाजिक अध्ययन एक ऐसा विषय है जिसका सम्बन्ध अतीत और वर्तमान से जुड़ा हुआ है । इसलिये इसकी पाठ्य-पुस्तक का प्रकाशन बहुत पहले नहीं होना चाहिये जिससे वह छात्रों को पूर्ण बातों का ज्ञान देने में असमर्थ रहे । पुस्तक ऐसी हो जो छात्रों को उस समय तक की सम्पूर्ण बातों का पर्याप्त ज्ञान दे ।

(६) पुस्तक का लेखक विषय का पूर्ण ज्ञाता हो । इसके अतिरिक्त वह व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त भी हो जिससे वह पाठ्य-वस्तु को छात्रों की आयु, योग्यता, रुचि, रुझान आदि बातों के अनुसार प्रस्तुत कर सके ।

(७) पाठ्य-पुस्तक की भूमिका ऐसी होनी चाहिए कि पाठकगण उस पुस्तक के मुख्य गुणों तथा उसकी केन्द्रीय समस्या को उसमें प्राप्त कर सकें । उसकी विषय-सूची पुस्तक की संक्षिप्त योजना के रूप में होनी चाहिए ।

(८) पाठ्य-पुस्तक में पाठ्य-वस्तु का व्यवस्थापन इस प्रकार किया जाय जिससे प्रकरणों तथा पाठों का तारतम्य बना रहे । वे एक-दूसरे से सतत रूप में जुड़े रहें ।

(९) पाठ्य-पुस्तक की भाषा तथा शैली छात्रों की आयु तथा उनकी मानसिक योग्यता के अनुसार होनी चाहिये ।

(१०) पाठ्य-पुस्तक में मुख्य तथा कठिन बातों को सरल तथा सुबोध बनाने के लिये उदाहरणों, चित्रों, ग्राफों, मानचित्रों आदि का उपयुक्त रूप से प्रयोग किया जाना चाहिये । छोटे बालकों की पाठ्य-पुस्तकों में आकर्षक चित्रों का उपयोग पर्याप्त मात्रा में किया जाना चाहिए । चित्र, ग्राफ, रेखा-कृति आदि का प्रयोग बालकों की योग्यता के अनुसार ही होना चाहिये । इनका आकार, स्पष्टता तथा शुद्धता भी छात्रों की आयु तथा योग्यता के अनुसार होनी चाहिए ।

(११) पाठ्य-पुस्तक सामाजिक अध्ययन के द्वारा प्राप्त लक्ष्यों तथा मूल्यों को ध्यान में रखकर लिखी जानी चाहिये जिससे उसके अध्ययन से उनकी प्राप्ति हो सके ।

२—**श्याम पद** :—सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में श्यामपट का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है । इसके उपयोग से शिक्षक छात्रों के ध्यान को अपनी ओर खींचने में सफलता प्राप्त करता है । इसके द्वारा अध्यापक छात्रों की दो इन्द्रियों को क्रियाशील रखता है जिससे बालक ज्ञान के ग्रहण करने में सफल होते हैं और कक्षा में सक्रिय बने रहते हैं । सामाजिक अध्ययन का शिक्षक

इसका उपयोग पाठ की मुख्य बातों के लिखने तथा उसके सारांश देने के लिये कर सकता है। यही नहीं, वह अपने पाठ को सरल तथा सुबोध बनाने के लिये इस पर रेखाचित्र, मानचित्र, लाक्षणिक चिह्न आदि बना सकता है। शिक्षाशास्त्रियों का विचार है कि श्यामपट पर खींची हुई रेखाएँ (Arrow) सैकड़ों शाब्दिक उदाहरणों से अधिक लाभदायक हैं। इससे वे शाब्दिक उदाहरणों की अपेक्षा पाठ की बातों को शीघ्रता से ग्रहण कर लेते हैं। प्रो० बाइनिंग (Bining) का विचार है कि श्यामपट का उपयोग छात्रों के द्वारा भी कराया जाये। यदि छात्रों से श्यामपट पर रेखा चित्र, सारांश, मानचित्र आदि बनवाये जायें तो उनकी अभिव्यंजना शक्ति का विकास होगा तथा वे उन बातों को सरलता के साथ ग्रहण कर सकेंगे और यह ग्रहण किया हुआ ज्ञान भी स्थायी होगा। श्यामपट का प्रयोग रेखाकृति, शब्दों के उच्चारण, तालिका, चार्ट, तिथि-ज्ञान, समय-तालिका, कार्य निर्धारण, सूचना अंकन, आदेश देने तथा प्रश्न पूछने के लिये भी किया जा सकता है।

(ब) प्रदर्शनात्मक सामग्री

१—मानचित्र:—सामाजिक अध्ययन में मानचित्रों का भी बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। इनके द्वारा छात्रों के सम्मुख अमूर्त वस्तुओं का ज्ञान मूर्त कर दिया जाता है। सामाजिक अध्ययन का शिक्षक इनका उपयोग निम्नलिखित बातों का ज्ञान प्रदान करने के लिये कर सकता है—

(१) मानचित्र के द्वारा शिक्षक छात्रों को राजनैतिक तथा प्राकृतिक दशा के संगठन का सम्यक् ज्ञान करा सकता है।

(२) मानचित्रों का प्रयोग स्थानों के निर्धारण (Location) के लिये किया जा सकता है। यदि सामाजिक अध्ययन का शिक्षक स्थानीय वातावरण के विषय में अध्यापन कर रहा है तो उसके स्थानों को निर्धारित करने में इनके द्वारा सफल होगा तथा उनकी भौगोलिक स्थिति को समझ सकेगा।

(३) मानचित्र के द्वारा क्षेत्रों का तुलनात्मक ज्ञान दिया जा सकता है।

(४) मानचित्रों के द्वारा किसी स्थान के भौगोलिक सम्बन्धों को प्रदर्शित करने में सहायता मिलती है।

(५) मानचित्रों का उपयोग सामाजिक अध्ययन का शिक्षक भौगोलिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक तथा आर्थिक परिवर्तनों को दिखलाने के लिये भी कर सकता है।

(६) अन्त में हम कह सकते हैं कि मानचित्रों का उपयोग विभिन्न प्रदेशों की जातियों, उपज तथा भाषाएँ आदि दिखलाने के लिये भी किया जा सकता है।

मानचित्रों के प्रकार:—

(१) पाठ्य-पुस्तकों के मानचित्र ।

(२) चित्रात्मक मानचित्र :—इन मानचित्रों में विभिन्न वस्तुओं, इमारतों, स्मारकों तथा स्थितियों के चित्र प्रस्तुत किये जाते हैं ।

(३) दीवार मानचित्र (Wall Maps):—ये मानचित्र कक्षा की दीवारों पर अंकित किये जाते हैं । ये छात्र तथा शिक्षक दोनों की दृष्टि से लाभदायक हैं । शिक्षक किसी बात को समझाते समय पूर्ण कक्षा के ध्यान को इनकी सहायता से अपनी ओर आकर्षित कर लेता है ।

यदि सामाजिक अध्ययन का शिक्षक मानचित्रों के उपयोग का वास्तविक लाभ उठाना चाहता है तो उसको बाजार के बने हुए मानचित्रों का उपयोग कम करना चाहिये क्योंकि छात्रों के द्वारा बनाये हुए मानचित्र अधिक लाभदायक सिद्ध होंगे । यदि छात्र मानचित्र स्वयं बनायेंगे तो उनकी अभिव्यंजना शक्ति, कल्पना शक्ति तथा निर्णय शक्ति का विकास होगा । जब तक वे मानचित्रों का बनाना नहीं सीखेंगे तब तक वे उनको पढ़ने में भी सफल नहीं हो सकेंगे । इनके बनाने में सीखने की प्रक्रिया के प्रमुख सिद्धान्त “करके सीखने” का उपयोग होता है । करके सीखा हुआ ज्ञान स्थायी होता है । इसलिये सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को अपने छात्रों से मानचित्र बनवाने चाहिये ।

२—मॉडल :—जब वास्तविक पदार्थ शिक्षक को उपलब्ध नहीं हो पाते हैं तब तक वह वास्तविक पदार्थों के मॉडल या नमूने प्रयोग में लाता है । इनके द्वारा सामाजिक अध्ययन का शिक्षक भौगोलिक, ऐतिहासिक तथा नागरिक शास्त्र के तथ्यों का ज्ञान सुगमतापूर्वक करा सकता है । यदि बने बनाये मॉडल उपलब्ध न हों, तो शिक्षक अपने छात्रों से बनवा सकता है । बालकों के द्वारा बनवाने से उनकी बहुत सी मूल प्रवृत्तियों की संतुष्टि की जा सकती है । मॉडल के द्वारा किसी वस्तु का भीतरी भाग, जो सामान्यतः हमारी आँखों से छिपा रहता है, दर्शनीय बनाया जा सकता है ।

३—चित्र :—मॉडल का मिलना तथा बनाना कठिन और व्ययपूर्ण होता है । प्रत्येक वस्तु का मॉडल न हम बना सकते हैं और न वह प्राप्त ही किया जा सकता है । ऐसी स्थिति में शिक्षक चित्रों के द्वारा इस अभाव को दूर करके अपनी पाठ्य-वस्तु को सरल, सुबोध तथा सजीव बना सकता है । सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में चित्रों का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है । इनकी उपादेयता को कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता । चित्रों का प्रयोग छोटी कक्षाओं में बहुत लाभदायक है । सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को भूगोल तथा इतिहास सम्बन्धी सामग्री पढ़ाते समय इनका प्रयोग सफलतापूर्वक करना चाहिए ।

इतिहास में प्राचीन काल के अस्त्र-शस्त्रों, वस्त्रों, इमारतों, दुर्गों आदि का अध्ययन करने के लिये चित्र प्रयोग में लाने चाहिए। सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को चित्रों का प्रयोग करते समय निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिए :—

(१) चित्र सच्चे प्रतिरूप हों।

(२) चित्रों का आकार कक्षा के अनुसार हो।

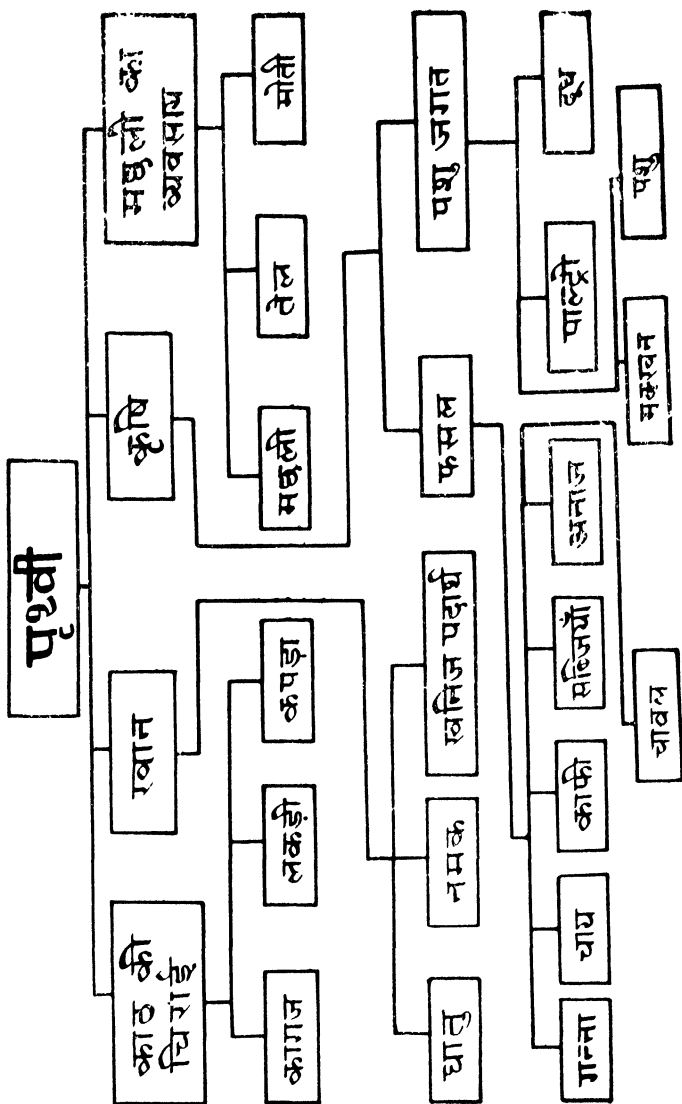
(३) चित्रों के रंग भद्दे न हों।

(४) चित्र स्पष्ट तथा शुद्ध हों। जिस क्रिया, गति तथा भाव को उसके द्वारा दिखाया जा रहा है वह छात्रों को स्पष्टतया प्रदर्शित होनी चाहिए।

(५) अध्यापक को अधिक से अधिक एक पाठ में एक या दो चित्रों का प्रयोग करना चाहिए।

४ — चार्ट :—सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में चार्ट बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। चार्ट किसी घटना अथवा क्रान्ति का क्रमिक विकास दिखलाने के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं। वास्तव में चार्ट वह माध्यम है जिसके द्वारा किसी वस्तु का अन्तर्सम्बन्ध, तथा संगठन, भावों, विचारों तथा विशेष स्थलों को दृश्यात्मक रूप में प्रदर्शित किया जा सके। सामाजिक अध्ययन का शिक्षक इनका उपयोग अपने शिक्षण में पर्याप्त मात्रा में कर सकता है। सामाजिक अध्ययन एक ऐसा विषय है जिसके द्वारा मानवीय सम्बन्धों का वर्णन किया जाता है। इसका शिक्षक चार्टों की सहायता से इन सम्बन्धों को स्पष्ट कर सकता है। परन्तु खेद की बात यह है कि भारतवर्ष में सामाजिक अध्ययन के बने बनावे चार्ट अभी उपलब्ध नहीं हैं क्योंकि इसका पाठ्यक्रम में समावेश अभी हुआ है। अतः सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को चार्टों के निर्माण में स्वयं परिश्रम करना चाहिए तथा छात्रों का भी पूर्ण सहयोग प्राप्त करना चाहिये और इस प्रकार चार्टों का निर्माण करके सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला को सुसज्जित रखना चाहिये जिससे उसके अध्यापन कार्य में समय-समय पर प्रयोगशाला सहायक बन सके।

५ — रेखाकृति :—इसमें रेखाओं तथा प्रतीकों के द्वारा अन्तर्सम्बन्ध स्पष्ट किये जाते हैं। अध्यापक को सदैव बाह्य साधनों पर ही आश्रित नहीं रहना चाहिये। उसे साधन-सम्पन्न होना चाहिये। वास्तविक पदार्थों, नमूनों तथा चित्रों के अभाव में शिक्षक को श्यामपट पर चाक से कुछ रेखाएँ इत्यादि बनाकर पाठ्य-सामग्री के भावों, विचारों तथा सम्बन्धों को स्पष्ट करना चाहिए। इस प्रकार शिक्षक इनकी सहायता से पाठ्य-वस्तु के भावों को दृश्यनीय बन सकता है। नीचे एक सरल रेखाकृति का उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है :—



६—ग्लोब (Globe) :—सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में ग्लोब अत्यन्त आकर्षक तथा उपयोगी उपादान है। इसके द्वारा हम पृथ्वी के आकार का ज्ञान सरलता से दे सकते हैं। ग्लोब के द्वारा उन बातों का स्पष्टीकरण सरलता से किया जा सकता है जो एटलस तथा दीवार मानचित्रों से नहीं किया जा सकता। इसके द्वारा महाद्वीपों तथा महासागरों के पारस्परिक सम्बन्ध, छोटाई-बड़ाई तथा विश्व के मार्गों की न्यूनाधिक दूरी आदि बातों का विवरण सरलता से समझाया जा सकता है। वातावरण का मानव के साथ क्या सम्बन्ध है—इसका स्पष्टीकरण ग्लोब के द्वारा सुगमता से किया जा सकता है। पृथ्वी की आकृति तथा उसकी गति, ऋतुएँ आदि बातें जो सम्पूर्ण पृथ्वी पर निर्भर हैं, बिना ग्लोब की सहायता के नहीं पढ़ाई जा सकती। इसलिये सामाजिक अध्ययन के शिक्षक का यह एक महत्वपूर्ण उपादान है। इसके अभाव में वह अपने छात्रों के साथ पूर्ण न्याय नहीं कर सकता है।

(स) श्रव्य-दृश्य सामग्री

१—रेडियो :—सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में रेडियो की बहुत उपादेयता है। जैसा कि हम पहले देख चुके हैं कि सामाजिक अध्ययन के शिक्षण का एक उद्देश्य बालकों को आधुनिक घटनाओं से परिचित कराना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति में रेडियो बहुत ही सहायक है। रेडियो के द्वारा हम अपने छात्रों को देश-विदेश की सूचनाएँ प्रदान कर सकते हैं। वे इसके द्वारा यह भी जान सकते हैं कि देश-विदेश में क्या हो रहा है। भारतीय शिक्षालयों में रेडियो की व्यवस्था की जाने लगी है और अखिल भारतीय रेडियो ने भी स्कूलों के लिये बालकों के कार्यक्रम प्रसारित करने प्रारम्भ कर दिये हैं। सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को इस उपादान का पूर्ण लाभ उठाना चाहिए जिससे वह अपने छात्रों को विदेशी घटनाओं से सूचित रख सके। शिक्षक का यह परम कर्तव्य है कि कार्यक्रम की समाप्ति के पश्चात् छात्रों से प्रश्न करे जिससे उनके प्राप्त ज्ञान का मूल्याङ्कन हो सके और उन सुनी हुई घटनाओं पर एक छोटा-सा वाद-विवाद करवा दे, जिससे प्राप्त ज्ञान स्थायी बन सके।

२—फिल्म तथा फिल्म खण्ड :—फिल्मों के द्वारा उस विषय सामग्री को सरलता से प्रस्तुत किया जाता है जिसका निर्देशन नहीं हो सकता है। इनका उपयोग अतीत की घटनाओं का निर्देशन तथा ऐतिहासिक भावनाओं को विकसित करने के लिए किया जा सकता है। सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में इन फिल्मों के द्वारा बहुत सहायता प्राप्त होती है। शिक्षक मानवीय सम्बन्धों को स्पष्ट तथा सुबोध रूप से बतलाने के लिये इनका उपयोग कर

सकता है। मानवीय सम्बन्धों का स्पष्टीकरण शाब्दिक वर्णन से ठीक प्रकार से नहीं हो सकता। यदि सामाजिक फिल्मों का प्रयोग इन सम्बन्धों को स्पष्ट करने के लिये किया जाय तो वे इनसे पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जावेंगे और छात्रों के ऊपर इनका उत्तम प्रभाव पड़ेगा और वे इनको अपने व्यवहार में ला सकेंगे। आजकल डाक्युमेन्टरी फिल्मों ने सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में बहुत सहा-प्रदान की है। किन्तु इनका वास्तविक लाभ तभी उठाया जा सकता है जब फिल्म देखने के पश्चात् उन पर वाद-विवाद किया जाय और शिक्षक उन पर अधिक प्रकाश डाले। सामाजिक अध्ययन के कक्ष में प्रोजेक्टर की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे शिक्षक छात्रों को फिल्म दिखा सके। हमारी केन्द्रीय सरकार शिक्षालयों को शैक्षिक तथा डाक्युमेन्टरी फिल्म प्रदान कर रही है। इस कार्य में सेवा प्रसार विभाग (Extension Service Department) भी पर्याप्त सहयोग प्रदान कर रहा है।

३—टेप-रेकार्डर :—सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में टेप-रेकार्डर की बहुत उपादेयता है। इसके द्वारा रेडियो की सीमाओं को दूर किया जा सकता है। रेडियो के कार्यक्रम निश्चित समय पर आते हैं। यदि रात्रि के ९ बजे प्रधान मन्त्री का भाषण आने वाला है तो हम उसका उपयोग नहीं कर सकते। इसके लिये विशिष्ट भावों तथा विचारों को टेप-रेकार्डर में भर लिया जाय तो उसका उपयोग हम विभिन्न समय पर कर सकते हैं। इसके द्वारा हम आधुनिक घटनाओं से छात्रों को परिचित रख सकते हैं।

प्रश्न

1. Discuss the advantages of using aids in the teaching of Social Studies. Mention the main types of aids which can be used.
2. Show the use of the following in the teaching of Social Studies :—
 - (I) Maps.
 - (II) Pictures.
 - (III) Charts
 - (IV) Radio.
 - (V) Globe.
 - (VI) Films

अध्याय ७

सामाजिक अध्ययन का शिक्षक

(Social-Studies Teacher)

शिक्षण एक आध्यात्मिक प्रक्रिया है जिसमें मस्तिष्क का मस्तिष्क से सम्बन्ध स्थापित होता है। इस सम्बन्ध को स्थापित कराने वाला शिक्षक होता है। शिक्षक का शैक्षिक-क्रम में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। हमारा पाठ्य-क्रम, शिक्षालय, फर्नीचर तथा शिक्षण-विधि कितनी ही अच्छी क्यों न हो परन्तु शिक्षक के अभाव में ये सब निरर्थक हैं। शैक्षिक प्रक्रिया के प्रमुख संचालक होने के नाते उसका प्रमुख स्थान है। जॉन एडम्स ने शिक्षक को मनुष्यों का निर्माण कर्त्ता (maker of man) कहा है। शिक्षक वह धुरी है जिसके चारों ओर पूर्ण शैक्षिक व्यवस्था घूमती है। विभिन्न विद्वानों के विचार इसी प्रकार के हैं। उनका कहना है कि शिक्षक निर्विवाद रूप से शैक्षिक-क्रम में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करता है। शिक्षक के महत्त्व को देखने के पश्चात् यह जानना आवश्यक है कि जब शिक्षक का इतना महत्वपूर्ण स्थान है तो उसमें कौन-कौन से गुण होने चाहिए, जिससे वह इस महत्वपूर्ण स्थान को ग्रहण कर सके। परन्तु यहाँ हमारा मन्तव्य सामाजिक अध्ययन के शिक्षक से है। हम उसी के गुणों का विवेचन अगले पृष्ठों में करेंगे। सामाजिक अध्ययन के शिक्षक में हम किसी महान् गुण की कल्पना नहीं करते हैं। उसे हम विश्व-कोष नहीं समझते

हैं वरन् उससे इतना चाहते हैं कि वह अपने विषय का पूर्ण ज्ञान रखे तथा जो गुण अन्य विषयों के शिक्षकों में होते हैं उन गुणों का सामाजिक अध्ययन के शिक्षक में होना आवश्यक है। इनके अतिरिक्त वह निम्नलिखित गुणों को भी अपने में विकसित करने का प्रयत्न करे—

(१) विषय तथा शिक्षण व्यवसाय में निष्ठा—निष्ठा सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करती है। यदि सामाजिक अध्ययन के शिक्षक की निष्ठा विषय तथा व्यवसाय में होगी तो वह अपने छात्रों के व्यक्तित्वों को पूर्णतया विकसित करने में सफल होगा जो उसका मुख्य लक्ष्य है। इसके साथ ही वह अपने विषय का गूढ़तम ज्ञान प्राप्त करने में भी सफल होगा। सामाजिक अध्ययन का शिक्षक निष्ठा के अभाव में मानवीय सम्बन्धों तथा लगाव को नहीं समझ सकता। परन्तु निष्ठा अन्ध-विश्वासी तथा तर्क रहित नहीं होनी चाहिये क्योंकि इससे वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास नहीं होगा जिसको उत्पन्न करना इसका मुख्य उद्देश्य है।

(२) विषय का ज्ञान—सामाजिक अध्ययन के शिक्षक से जिस बात की आशा की जाती है, वह है विषय का ज्ञान। सामाजिक अध्ययन एक ऐसा व्यापक विषय है जिसमें समस्त मानवीय सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। इसका क्षेत्र भी व्यापक है। इसमें इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विषयों में से उन सार तत्त्वों को लिया गया है जिनके द्वारा मानवीय सम्बन्धों तथा लगावों का स्पष्टीकरण किया जा सकता है। सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को जब तक इन सभी विषयों का प्रारम्भिक ज्ञान नहीं होगा तब तक वह अपने छात्रों के साथ न्याय नहीं कर सकेगा। उसे उन सभी बातों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिये जिनका लगाव मानवीय सम्बन्धों से हो। विषय के ज्ञान के साथ-साथ शिक्षक को उसके महत्त्व, उपयोगिता तथा सीमाओं की भी जानकारी रखनी चाहिये।

(३) तत्कालीन घटनाओं का ज्ञान—बाइनिंग तथा बाइनिंग (Bining and Bining) ने लिखा है कि—“शिक्षण एक प्रगतिशील व्यवसाय है और इसलिये यह आवश्यक है कि शिक्षक सदैव विद्यार्थी बना रहे। यद्यपि यह सभी शिक्षकों के लिये सत्य है, परन्तु यह विशेषतः उस शिक्षक के लिये सत्य है जो सामाजिक अध्ययन का शिक्षण करता है। सामाजिक अध्ययन का शिक्षक ही परिवर्तनशील तथा जटिल विश्व को विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करने के लिये उत्तरदायी है। इस दायित्व को पूर्ण करने के लिये उसे वर्तमान को, उसकी

विभिन्न उलझनयुक्त समस्याओं के साथ, भली-भाँति जानना चाहिये ।”^१ यह देखकर हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को समसामयिक घटनाओं का जानना परम आवश्यक है । यदि इनका उसे ज्ञान नहीं होगा तो वह अपने छात्रों के साथ पूर्ण न्याय नहीं कर सकेगा । आधुनिक काल के मानवीय सम्बन्धों को स्पष्ट करने के लिये उसे प्रचलित घटनाओं का ज्ञान होना आवश्यक है । दूसरे, इनकी जानकारी से वह अपने विषय के शिक्षण को रोचक तथा प्रभावशाली बना सकता है ।

(४) उदार दृष्टिकोण—सामाजिक अध्ययन के शिक्षण का एक मुख्य उद्देश्य सामाजिक दृष्टिकोण उत्पन्न करना है । इस उद्देश्य की प्राप्ति तभी की जा सकेगी जब शिक्षक का दृष्टिकोण उदार होगा । इसके लिये वह छात्रों के समक्ष ऐसे आदर्श प्रस्तुत करे जिनसे उनमें उदारता, निष्पक्षता, तार्किकता, बन्धुत्व, सच्चाई, सहकारिता आदि गुणों का विकास हो सके । यदि शिक्षक अन्ध-विश्वासी होगा तो वह इन उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर सकेगा । उसका दृष्टिकोण उदार, प्रगतिशील तथा अन्तर्राष्ट्रीय होना चाहिये ।

(५) शिक्षक का व्यक्तित्व—शिक्षक का व्यक्तित्व सफल शिक्षण का आधार है । व्यक्तित्व (Personality) एक ऐसा शब्द है जिसकी स्थूल रूप से परिभाषा देना कठिन है । विभिन्न विद्वानों ने इसकी विभिन्न परिभाषाएँ दी हैं । उनकी परिभाषाओं में उनका दृष्टिकोण प्रदर्शित होता है । साधारण रूप से व्यक्तित्व का अर्थ ‘आचरण का क्रियात्मक पक्ष’ माना जाता है । व्यक्तित्व के निर्माण में जिन गुणों का हाथ होता है, हम उनको तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं । वे निम्नलिखित हैं:—

(अ) शारीरिक पक्ष (Physical Aspect):—इसके अन्तर्गत वे पक्ष आते हैं जो हमें व्यक्तियों का प्रथम ज्ञान प्रदान करते हैं । इस पक्ष के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों का देखना आवश्यक है ।

(१) वैयक्तिक रूप (Personal Appearance), (२) स्वर, (३) स्वास्थ्य, (४) भाषा ज्ञान ।

1. Teaching is a progressive occupation, and the teacher must ever be a student. Although this is true for all teachers, it is especially true for the one who teaches the Social Studies. It is he who interprets this present, everchanging, Complex world to the pupil. To do this, however, the teacher must understand the present, with its multitudinous perplexing problems.—(Bining and Bining—Teaching the Social Studies in Secondary Schools, Page 199.)

(ब) निष्क्रिय गुण (Passive Virtues):—ये वे गुण हैं जो हमको उस व्यक्ति की ओर आकर्षित करते हैं जो इन्हें रखता है । निष्क्रिय गुणों के अन्तर्गत निम्नलिखित गुण आते हैं:—

(१) मित्रता, (२) सहानुभूति तथा समझदारी (३) शुभचिन्तन Sincerity (४) चतुराई (Tact), (५) निष्पक्षता, (६) आत्म-नियंत्रण, (७) आशावादिता, (८) धैर्य, (९) उत्साह, (१०) साहस ।

(स) प्रबन्धीय योग्यताएँ (Executive Abilities):—ये वे योग्यताएँ हैं जो नेताओं के द्वारा ग्रहण की जाती हैं और इनके बिना नेतृत्व की उपलब्धि असम्भव है । प्रबन्धीय योग्यताओं के अन्तर्गत निम्नलिखित बातें आती हैं—

(१) आत्म-विश्वास, (२) संगठित करने की योग्यता, (३) प्रेरणा शक्ति (Initiative), (४) परिश्रम, (५) व्यवस्थापन (Adaptability), (६) निर्देशन की योग्यता (Directive Ability), (७) साधन सम्पन्नता ।

६—सामाजिक सक्रियता (Social Activeness):—ब्रूबेकर (Brubacher) के इस कथन में कि—“सम्यता तथा समाज की उन्नति शिक्षक की योग्यता पर निर्भर है”, पर्याप्त सत्यता है । शिक्षक भावी नागरिकों का निर्माण करने वाला होता है । शिक्षक को अपनी पाठ्य-वस्तु तथा उद्देश्यों के लिये समाज की ओर जाना पड़ता है । जब तक उसमें सामाजिक सक्रियता का गुण नहीं होगा तब तक वह इन उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं कर सकेगा । इस गुण की प्राप्ति के लिये सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को स्थानीय समाज के कार्यों में सक्रिय भाग लेना चाहिये । स्थानीय समाज की उन्नति का शिक्षक के ऊपर पूर्ण दायित्व है । इसे पूर्ण करने के लिये उसे समाज के उत्सवों तथा कार्यों में कार्य करना चाहिये । वह केवल आदेश ही न दे, बल्कि क्रियाशील भी रहे । यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो अपने छात्रों को सामाजिक कार्यों में भाग लेने की प्रेरणा तथा प्रशिक्षण नहीं दे सकेगा । इस भाँति सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को समाज के रचनात्मक कार्यों में क्रियाशील रहना चाहिये । भारतीय गणतन्त्र अभी शैशवावस्था में ही है । उसकी सफलता तथा स्थायित्व सामाजिक अध्ययन के शिक्षकों पर पर्याप्त रूप से निर्भर है । उन्हें अपने छात्रों में समता, नेतृत्व, न्याय, सहयोग, बन्धुत्व, उत्तरदायित्व पूर्ण करने की भावना, आदि गुणों को उत्पन्न करना चाहिये । इन गुणों को शिक्षक तभी अपने छात्रों में विकसित कर सकता है जब वह स्वयं आदर्शों को उनके समक्ष व्यवहार में प्रस्तुत करने की क्षमता रखता हो ।

७—सामाजिक अध्ययन के शिक्षण का ज्ञान—शिक्षण एक कला है । मध्यकालीन विश्वविद्यालयों ने इस कला के सामान्य सिद्धान्तों को निरूपित

किया। शिक्षक के लिये इन सामान्य सिद्धान्तों तथा विधियों का जानना आवश्यक है। इन विधियों के ज्ञान से शिक्षक अपनी पाठ्य-वस्तु को विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करना सीख लेता है। ये विधियाँ तथा सिद्धान्त शिक्षक के पथ-प्रदर्शक तथा साधन हैं। सामाजिक अध्ययन एक नवीन विषय है। इसके शिक्षक को प्रगतिशील विधियों तथा साधनों का ज्ञान होना चाहिए। वह तभी हो सकता है जब उसको भी प्रशिक्षण प्रदान किया जाय। सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को निम्नलिखित बातों में प्रशिक्षित होना आवश्यक है:—

(अ) व्यावहारिक शिक्षण।

(ब) विधियों का ज्ञान (सामान्य तथा विशेष)।

(स) निम्नलिखित व्यावसायिक विषयों का ज्ञान।

(१) शिक्षा का परिचय, (२) शिक्षा का इतिहास, (३) पाठशालाओं की व्यवस्था के मूल सिद्धान्त, (४) शिक्षा मनोविज्ञान (विशेषतः बाल-मनोविज्ञान) (५) शिक्षा समाजशास्त्र (६) शिक्षा का दर्शन, (७) स्वास्थ्य शिक्षा तथा शिक्षा में मापन (८) नवसिखुवा शिक्षक की समस्याएँ।

इन उपर्युक्त बातों में प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात् शिक्षक को समय-समय पर अभिनवन पाठ्य-क्रम (Refresher Courses) प्रदान किया जाना चाहिए, जिससे वह अपने प्रशिक्षण की बातों को भूल न सके तथा नवीन विधियों का ज्ञान प्राप्त कर सके।

सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को अपने में उपर्युक्त गुणों को उत्पन्न करना चाहिए। अन्त में हम कह सकते हैं कि उसमें सत्य के अनुसन्धान के लिये उत्साह तथा साहस होना चाहिए तथा समाज के सदस्यों तथा उसके कार्यों के लिये भी अटूट श्रद्धा होनी चाहिये। जब उसमें समाज के प्रति अटूट श्रद्धा होगी, तभी वह सफल शिक्षक बन सकेगा।

—: ० :—

प्रश्न

1. "Teacher is the maker of man." In the light of this statement discuss the qualities of Social Studies teacher.
2. Write a short essay on the qualities of Social Studies teacher.
3. "Teacher is the pivot around which the whole educational system moves." In the light of this statement discuss the importance of teacher and give the qualities which must have a Social Studies teacher.

अध्याय ८

सामाजिक अध्ययन में परीक्षा (Examination in Social Studies)

परीक्षा शैक्षिक-प्रक्रिया का एक अभिन्न अङ्ग हो गया है। केवल शैक्षिक प्रक्रिया का नहीं, वरन् जीवन की प्रत्येक प्रक्रिया की परीक्षा एक महत्वपूर्ण तथा अविच्छिन्न अङ्ग है, क्योंकि इसके द्वारा हमें बालक के ज्ञानार्जन (Achievement) का परिचय प्राप्त होता है। इसलिये अध्यापक का यह परम कर्तव्य है कि वह मूल्याङ्कन (Evaluation) के कार्य-क्रम की पूर्ण जानकारी रखे। यदि शिक्षक सफल शिक्षक बनना चाहता है तो उसे मूल्याङ्कन तथा परीक्षा के सम्पूर्ण कार्य-क्रम की ओर समुचित रूप से ध्यान तथा समय देना पड़ेगा। शिक्षण-प्रक्रिया में परीक्षा की बहुत उपयोगिता है। परीक्षा का मुख्य उद्देश्य शिक्षण के अन्तिम परिणामों अथवा निष्कर्षों को परीक्षित करना है।

परीक्षा का अर्थ तथा वर्गीकरण (Meaning of Examination and its Classification)—मुहीउद्दीन के अनुसार “Examination” शब्द का उद्गम ‘Examen’ नामक शब्द से हुआ है जिसका अर्थ है “तराजू का पलड़ा” (Tongue of a balance)। इसका साधारण रूप से प्रयोग ज्ञान या कार्य की व्यवस्थित जाँच अथवा परीक्षा के लिये किया जाता है, चाहे वह

किसी बाह्य शक्ति के द्वारा ली जाय या स्वयं अध्यापकों के द्वारा ली जाय । परीक्षा का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है—

(१) लिखित परीक्षा (Written Examination)

(२) मौखिक परीक्षा (Oral Examination)

(३) प्रयोगात्मक परीक्षा (Practical Examination) ।

(१) लिखित परीक्षा:—इसके अन्तर्गत छात्रों को निश्चित समय में कुछ प्रश्नों के उत्तर लिखने पड़ते हैं । शिक्षा-क्रम में तीन प्रकार की लिखित परीक्षाएँ प्रचलित हैं, वे निम्नलिखित हैं—

(i) परम्परागत अथवा निबन्धात्मक परीक्षा (Traditional or Essay Type)—इसमें प्रश्नों का उत्तर निबन्ध के रूप में देना पड़ता है; अर्थात् हम कह सकते हैं कि प्रश्नों का उत्तर विस्तारपूर्वक निश्चित समय में देना पड़ता है ।

(ii) विवरणात्मक (Dissertation Type)—इसमें किसी निश्चित प्रकरण या समस्या पर अन्वेषण कार्य, स्वतन्त्र रूप से अथवा किसी के पथ-प्रदर्शन में किया जाता है । इस कार्य की योजना लिखित रूप में प्रस्तुत की जाती है ।

(iii) नवीन प्रणाली के प्रश्न (New Type Test)—इनके द्वारा किसी विषय या कार्य की वस्तुनिष्ठता अथवा स्थूलता (Objectivity) की जाँच की जाती है । इसमें छोटे-छोटे प्रश्न रखे जाते हैं और उनके उत्तर भी छोटे होते हैं । इस प्रणाली की परीक्षा (Test) में लिखना कम पड़ता है ।

(२) मौखिक परीक्षा—यह परीक्षा चारित्रिक रूप से वैयक्तिक होती है ; इसके द्वारा बालक की योग्यता का सुगमता से आकलन किया जा सकता है । इसमें छात्र परीक्षक के समक्ष उसके प्रश्नों का उत्तर देता है जिससे परीक्षक उसके गुणों; उदाहरणार्थ—अभिव्यंजना, आत्मविश्वास आदि की जाँच कर लेता है ।

(३) प्रयोगात्मक परीक्षा—इसके अन्तर्गत बालक अपने कार्य का नमूना परीक्षक के समक्ष उपस्थित करता है ।

प्रचलित परीक्षा-प्रणाली के दोष

(१) परीक्षा शिक्षा का साधन है परन्तु आधुनिक काल में यह शिक्षा का ध्येय बन गया है । छात्र पढ़ते हैं, शिक्षक पढ़ाते हैं—किस लिये ? किस लक्ष्य से ? परीक्षा उत्तीर्ण करने व कराने के लिये ।

(२) परीक्षा का बालकों के स्वास्थ्य पर दूषित प्रभाव पड़ता है क्योंकि इस परीक्षा में रटने की प्रवृत्ति पर बल दिया जाता है । इस कारण छात्र

परीक्षा के दिनों में खेलना, टहलना, खाना-सोना आदि त्याग देते हैं और परीक्षा की तैयारी में ही संलग्न रहते हैं ।

(३) इस परीक्षा के द्वारा छात्रों को ज्ञान तो प्रदान कर दिया जाता है परन्तु उस ज्ञान की व्यावहारिकता के विषय में कुछ भी नहीं सिखाया जाता है ।

(४) परीक्षा भयानक स्वप्न बन गई है । इसने विद्यार्थियों के नैतिक स्तर को भी निम्न कर दिया है, क्योंकि परीक्षा उत्तीर्ण करना तथा कराना ही शिक्षा का मुख्य ध्येय हो गया है ।

(५) यह शिक्षालय के कार्य पर भी दूषित प्रभाव डालती है । सभी कार्य इसी की प्राप्ति के लिये बलिदान कर दिये जाते हैं । इसके द्वारा स्कूल का समस्त कार्य शासित किया जाता है ।

(६) इसके द्वारा छात्रों के ज्ञान की वास्तविक जाँच नहीं हो पाती है । इसमें अवसर की प्रधानता रहती है तथा छात्रों का कोई ध्यान नहीं रखा जाता है ।

(७) इसमें परीक्षक का दृष्टिकोण बहुत बड़ा हाथ रखता है । एक ही छात्र के एक ही प्रश्न के उत्तर की जाँच प्रत्येक परीक्षक अपने दृष्टिकोण से करता है, यदि एक ही प्रश्न के उत्तर को एक से अधिक परीक्षक जाँचें तो वे सब भिन्न-भिन्न अङ्क देंगे । उनके द्वारा प्रदान किये हुए अङ्कों में बहुत विविधता होगी । इस विविधता के मुख्य कारण अधोलिखित हैं—

(अ) छात्रों की भाषा, शैली, अभिव्यंजना शक्ति, सुलेख आदि ।

(ब) परीक्षक का पक्षपात उसके न्याय करने में बाधा पहुँचाता है ।

(स) परीक्षक की मनोदशा (Mood) का भी उसके निर्णय पर प्रभाव पड़ता है ।

(८) इस परीक्षा में वैयक्तिकता की प्रधानता होती है ।

(९) यह परीक्षा प्रणाली वैज्ञानिक नहीं है । इसके द्वारा वास्तविकता की जाँच नहीं हो पाती । इसमें अवसर एवं संयोग बहुत बड़ा कार्य करता है ।

निम्नलिखित सुझावों को यदि प्रयोग में लाया जाय तो प्रचलित परीक्षा प्रणाली के उपरोक्त दोषों को दूर किया जा सकता है—

(१) परीक्षकों का चयन ठीक प्रकार से किया जाय । यथासंभव प्रशिक्षित अध्यापक ही चुने जायें ।

(२) वैयक्तिकता को कम करने के लिये वस्तुनिष्ठ परीक्षा (Objective Test) का प्रयोग किया जाय ।

(३) मानसिक योग्यता की जाँच के लिये बुद्धि परीक्षा (Intelligence

Tests) का सहारा लिया जाय। इसके साथ ही बालकों की वृत्तियों तथा रुचियों की जाँच के लिये अभिज्ञापक प्रश्नावली (Personality Inventory), अभिरुचि परीक्षाएँ (Aptitude Test) प्रयोग में लाई जायँ।

(४) बाह्य परीक्षा अधिक न ली जायँ।

(५) प्रश्न अत्यन्त स्पष्ट, सीधे, निश्चित उपयुक्त तथा छोटे होने चाहिये।

(६) प्रश्न विषय के अधिक से अधिक भाग का प्रतिनिधित्व करें।

(७) अङ्क प्रदान करते समय परीक्षक के व्यक्तिगत पक्षपात आदि को अधिक अवसर न दिया जाय। इसके लिये अवैयक्तिक अङ्क प्रदान करने की प्रथा को अपनाया जाय। इसमें हम अङ्क न देकर A, B, C आदि श्रेणियों में छात्रों को रखें। इसके अतिरिक्त प्रश्न का आदर्श उत्तर बनाकर उसे प्रयोग में लाया जा सकता है। यह परीक्षकों का पथ-प्रदर्शक के रूप में कार्य करेगा।

उत्तम परीक्षा के गुण

(Qualities of a good Examination)

(१) स्थूलता अथवा वस्तुनिष्ठता (Objectivity)—प्रश्न के उत्तर को चाहे एक ही परीक्षक जाँचे अथवा अनेक, उनके माप में भिन्नता न हो। प्रश्न ऐसे होने चाहिये जिनके उत्तर एक ही हों, जिससे परीक्षक का व्यक्तिगत पक्षपात, उसकी मनोदशा, छात्रों की भाषा, शैली आदि का प्रभाव उसके निर्णय पर न पड़ सके।

(२) पुष्टता (Validity)—जिस वस्तु-विशेष का माप हम परीक्षा रूपी इस कसौटी से करना चाहते हैं, उसका हम किस सीमा तक माप कर सकते हैं, अर्थात् हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि जिस वस्तु-विशेष की जाँच करना हमारा मुख्य ध्येय है उसकी जाँच किस सीमा तक इसके द्वारा हुई; अर्थात् उसी की जाँच की गई है, अथवा किसी अन्य वस्तु की। इसका पुष्टीकरण परीक्षा का उत्तम गुण है।

(३) विवस्तता (Reliability)—परीक्षा के द्वारा हम जिस वस्तु को मापना चाहते हैं, वह किस सीमा तक शुद्ध और सम्यक् रूप से मापी जा सकती है, जिससे हम उसके ऊपर विश्वास कर सकें। यह विश्वस्तता भी परीक्षा का महत्त्वपूर्ण गुण है।

(४) परीक्षा का उद्देश्य नैदानिक (Diagonostic) हो।

(५) परीक्षा सुविधाजनक हो; अर्थात् उसके व्यवहार में असुविधाओं तथा कठिनाइयों का सामना न करना पड़े। उसका प्रत्येक शिक्षक प्रयोग कर सके।

(६) परीक्षा प्रामाणिक (Standardized) हो।

परीक्षा के उद्देश्य

(Purposes of Examination)

(१) पथ-प्रदर्शन (Guidance) के लिये परीक्षा परमावश्यक है ।

(२) छात्रों के ज्ञान अर्जन (Achievement) की माप के लिये भी इसकी आवश्यकता है जिससे उनको आगे की शिक्षा दी जा सके । उनके क्रमिक ज्ञानार्जन का परिचय प्राप्त करने के लिये भी यह अनिवार्य है ।

(३) छात्रों के वर्गीकरण के लिये भी परीक्षा अनिवार्य है । इसके अभाव में हम उनका वर्गीकरण नहीं कर सकते ।

(४) जीवन में स्तर (Standard) स्थापित करने के लिये यह अपेक्षित है, जिससे समाज की संतुष्टि की जा सके । यह सामाजिक तथा आर्थिक जीवन-स्तर स्थापित करने के लिये अनिवार्य है ।

(५) सीखने की क्रिया तथा शिक्षण के प्रोत्साहन के लिये भी इसकी आवश्यकता होती है । इसके द्वारा छात्रों को पढ़ने के लिए उत्प्रेरित (Motivate) किया जा सकता है ।

(६) शिक्षक, शिक्षण-विधि, पुस्तक, पाठ्य-क्रम तथा विषय-सूची की उपयोगिता की जाँच करने के लिये अत्यन्त अनिवार्य है ।

(७) छात्रों की असावधानी, विशिष्ट योग्यता, कमी तथा अभिरुचि का ज्ञान इसके द्वारा प्राप्त किया जा सकता है ।

नवीन प्रणाली की जाँच

(New Type Tests)

मनोविज्ञान ने शिक्षा को महत्वपूर्ण योग प्रदान किया है । मनोविज्ञानिकों ने परीक्षा की कुछ नवीन विधियों का प्रयोग समस्त विषयों में लोकप्रिय हो गया है । इन विधियों में वे सब विशेषताएँ विद्यमान हैं, जो परीक्षाओं में होनी चाहिये । सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में नवीन प्रणाली की जाँचों का प्रयोग निबन्धात्मक परीक्षा के साथ-साथ, प्रचुरता से होना चाहिये, क्योंकि इन परीक्षाओं द्वारा सत्यासत्य, तथ्य-ज्ञान, विचार ज्ञान, व्यक्तित्व ज्ञान, निर्णय, ज्ञान शक्ति तथा अभिव्यंजना शक्ति की जाँच की जा सकती है । हम यहाँ पर कुछ प्रकार की जाँचों का वर्णन उदाहरणों सहित करेंगे ।

नवीन प्रणाली की जाँच या वस्तुपरक जाँच के प्रश्नों को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं । प्रथम, अभिस्वीकारात्मक (Recognition) प्रश्न, तथा स्मरण (Recall) प्रश्न ।

अभिस्वीकारात्मक प्रश्न उन्हें कहते हैं, जिनके ठीक उत्तर को प्रश्न में दिये गये कई उत्तरों से पहचान कर निकालना पड़ता है। उदाहरणार्थ— महात्मा गान्धी की मृत्यु १८५७, १९१६, १९४२, १९४७, १९४८, १९५८ ई० में हुई थी।

स्मरण प्रश्न:—इसके अन्तर्गत वे प्रश्न आते हैं, जिनके उत्तर विद्यार्थी स्मरण से देते हैं। ये प्रश्न सीधे तथा स्पष्ट होते हैं। उदाहरणार्थ—भारतवर्ष कब स्वतन्त्र हुआ था ? भारतवर्ष कब गणतन्त्र राज्य घोषित किया गया था ? भारतवर्ष के प्रथम राष्ट्रपति कौन थे ?

स्मरण प्रश्न दो प्रकार के होते हैं:—

(अ) रिक्त स्थान पूरक प्रश्न (Completion Test) :—इन प्रश्नों में अधूरे वाक्य दिये जाते हैं। इनमें बालकों को रिक्त स्थानों की उपयुक्त शब्दों द्वारा पूर्ति करनी पड़ती है। उदाहरणार्थ:—

(१) माउण्ट ऐवरेस्ट विश्व में सबसे ऊँचा.....है।

(२) हमारे देश के राष्ट्रपति.....हैं।

(३) बाबर ने पानीपत के मैदान में.....को हराया था।

(ब) ऐसे प्रश्न जिनके उत्तर स्मरण के आधार पर प्रत्यक्ष विधि से दिये जा सकते हैं। इनको सरल स्मरण (Simple Recall Type) प्रश्न कहते हैं, उदाहरणार्थ—

(१) भारत का संविधान कब लागू हुआ था ?

(२) हमारे देश का प्रधान मन्त्री कौन है ?

(३) महात्मा गान्धी का जन्म स्थान कहाँ है ?

अभिस्वीकारात्मक प्रश्न निम्नलिखित प्रकार के होते हैं:—

(अ) सत्यासत्य प्रश्न।

(ब) अपवर्त्य-चयन की जाँच (Multiple Choice Test)

(स) निर्णयात्मक प्रश्न।

(द) तुलनात्मक या प्रतिद्वन्दात्मक प्रश्न (Matching Type of Questions)

(य) क्रम-निर्धारणात्मक प्रश्न।

(अ) सत्यासत्य प्रश्न:—इस प्रकार के प्रश्नों में छात्रों को चिह्नों द्वारा उत्तर देने के लिये कहा जाता है कि दिये हुए कथन सत्य हैं या असत्य, उदाहरणार्थ—

प्रश्न—निम्नलिखित कथनों को पढ़ो और सत्य कथन के सम्मुख R तथा असत्य कथन पर F लिखो।

(१) भारतीय प्रधान मंत्री का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा होता है ।

(२) अकबर लोदी वंश का प्रतापी राजा था ।

(३) विश्व में सबसे अधिक रबर मलाया में पायी जाती है ।

(४) विश्व में सबसे अधिक लोहा भारतवर्ष में पाया जाता है ।

(५) अशोक ने अपने भाइयों के साथ अरुद्धा व्यवहार किया था ।

(ब) अपवर्त्य-चयन की जाँच:—इसमें छात्रों को अनेक उत्तरों में से उपयुक्त उत्तर को छाँटना पड़ता है, उदाहरणार्थ—

(१) पानीपत का प्रथम युद्ध १५५६, १५२७, १५२६, १७५७, १९६३, १७६१ ई० में हुआ था ।

(२) भारत का संविधान १८८५, १९४२, १९४७, १९५०, १९४८, १९५२, १९६० ई० में लागू हुआ था ।

(३) भारतवर्ष में सबसे अधिक कपास नागपुर, यू० पी०, पंजाब, बरार में होती है ।

(स) निर्णयात्मक प्रश्न:—इन प्रश्नों में छात्रों को विभिन्न उत्तरों में से उपयुक्त उत्तर का निर्णय करना पड़ता है, उदाहरणार्थ—

इब्राहीम लोदी पानीपत के मैदान में हार गया था, क्योंकि—

(i) उसके पास सेना कम थी ।

(ii) उसके पास रण-कौशल की कमी थी ।

(iii) उसके सेनापति अयोग्य थे ।

(iv) उसके पास खान पदार्थों का अभाव था ।

(द) तुलनात्मक प्रश्न :—इनमें छात्रों को दो सूचियों के विषयों की समानता या सम्बन्ध स्थापित करने के लिये कहा जाता है । ये विषय बिना किसी क्रम के अनुसार दिये जा सकते हैं, उदाहरणार्थ—

पानीपत का तृतीय युद्ध	१९४७ ई०
प्लासी का युद्ध	१८५७ ई०
प्रथम स्वतन्त्रता युद्ध	१७५७ ई०
फीरोज गान्धी की मृत्यु	१७६१ ई०
भारतीय स्वतन्त्रता प्राप्ति	१९६० ई०

(य) क्रम-निर्धारणात्मक प्रश्न :—इनमें घटनाओं तथा विषयों को छात्रों से क्रम में रखवाया जाता है, उदाहरणार्थ :—

निम्नलिखित व्यक्तियों के नामों को कालक्रम के अनुसार रखो :—

(अ) शाहजहाँ, (ब) शेरशाह, (स) बाबर, (द) पृथ्वीराज चौहान, (य)

राजेन्द्र प्रसाद, (र) अशोक, (ल) सरदार वल्लभभाई पटेल, (व) चन्द्रगुप्त मौर्य ।

सामाजिक अध्ययन में छात्रों की प्रगति की जाँच निम्नलिखित बातों में की जानी चाहिये :—

(१) सामाजिक अध्ययन के तथ्यों तथा संस्थाओं के ज्ञान की जाँच ।

(२) सामाजिक वृत्तियों, गुणों, कुशलताओं, अभिरुचियों तथा क्षमताओं की जाँच ।

(३) सामाजिक समस्याओं पर स्वतन्त्र चिन्तन, तर्क तथा निर्णय करने की शक्तियों की जाँच ।

प्रथम प्रकार के ज्ञान की जाँच हम निबन्धात्मक तथा नवीन प्रणाली के प्रश्नों के द्वारा कर सकते हैं । अन्तिम दोनों प्रकार के ज्ञान की परीक्षा के लिये सामाजिक अध्ययन का शिक्षक विभिन्न परीक्षाओं की सहायता ले सकता है,

उदाहरणार्थ—अभिज्ञापक प्रश्नावली (Personalily Inventory), प्रश्नोत्तरी (Questionnaire), अभिरुचि परीक्षाएँ (Aptitude Test) तथा व्यक्तित्व जाँच (Personality Test); जैसे—T. A. T., C. A. T. आदि । इनके अतिरिक्त शिक्षक स्वयं उनकी क्रियाओं का निरीक्षण करेगा तथा उनका साक्षात्कार (Interview) लेगा । अध्यापक वास्तविक स्थितियों का निरीक्षण करके ही उनके सामाजिक गुणों तथा कुशलताओं का पता लगावेगा । अन्त में हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययन का शिक्षक अपने छात्रों की प्रगति, ज्ञानार्जन का परिचय तथा उनके व्यक्तित्व का ज्ञान और सामाजिक गुणों की जाँच उपरोक्त सभी प्रणालियों के द्वारा ही कर सकता है । शिक्षक का यह परम कर्तव्य है कि वह इस मूल्यांकन के सम्पूर्ण कार्य-क्रम का पूर्ण ज्ञान रखे । तभी वह सफल शिक्षक कहलाने का अधिकारी होगा और अपने छात्रों को लाभ पहुँचा सकेगा ।

—: ० :—

प्रश्न

1. What are the defects of the existing system of Examination ? Give suggestions for the improvement.
2. What are the qualities of a good test.
3. Discuss the importance of Examination in Social Studies. What type of test will be used by the Social Studies Teacher for the evaluation of the pupils ?

अध्याय ६

नागरिकशास्त्र के शिक्षण के लक्ष्य तथा लाभ

(Aims and Values of Teaching Civics)

शताब्दियों की दासता ने भारतवासियों को बहुत सी सुन्दर बातों से वंचित रखा है। उनमें नागरिकता के गुणों का सम्यक् विकास नहीं हो सका। परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत ने अपने को प्रजातन्त्रीय गणतन्त्र राज्य घोषित किया। जैसा कि हम प्रथम अध्याय में देख चुके हैं कि नागरिकशास्त्र नागरिक के कर्त्तव्यों तथा अधिकारों की व्याख्या करता है। प्रजातन्त्रीय शासन व्यवस्था की सफलता के लिये सजग एवं आदर्श नागरिकों की आवश्यकता होती है। इस कारण नागरिकशास्त्र का अध्ययन हमारे प्रजातन्त्र के लिये, जो अभी अपने शैशवकाल में है, परम आवश्यक है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिये हमें इस विषय को पाठ्य-क्रम में महत्त्वपूर्ण स्थान देना चाहिये। जब इस विषय की भारतवर्ष के लिये अत्यन्त आवश्यकता है तो स्वतः ही यह प्रश्न उठता है कि नागरिकशास्त्र के शिक्षण के क्या लक्ष्य होने चाहिए तथा इसके क्या लाभ हैं। लक्ष्य एक क्रियाशील एवं चेतन अभिप्राय होता है जब कि लाभ उस लक्ष्य की प्राप्ति के मार्ग में होने वाला अनुभव है। लक्ष्य सदैव हमारे समक्ष रहता है। हमारा लक्ष्य एक हो सकता है परन्तु इसकी प्राप्ति के प्रयत्नों से हमें अनेक अनुभव प्राप्त हो सकते हैं। नीचे नागरिक शास्त्र के शिक्षण के

लक्ष्यों तथा लाभों का विवेचन दिया जा रहा है जिनको ध्यान में रखकर इस विषय को पाठ्य-क्रम में रखना चाहिये ।

नागरिकशास्त्र के शिक्षण के लक्ष्य

(Aims of Teaching Civics)

(१) **आदर्श नागरिकता (Ideal Citizenship)** :—नागरिकशास्त्र के शिक्षण का मुख्य लक्ष्य आदर्श नागरिकता प्राप्त करना है । इसके शिक्षण से छात्रों में उन गुणों का विकास करना है जिनके द्वारा वह आदर्श नागरिक बन सके । आदर्श नागरिकता प्रजातन्त्रीय सरकार की सुरक्षा तथा सफलता के लिये अति आवश्यक है, क्योंकि किसी सरकार की सुरक्षा, स्थायित्व तथा सफलता उसके नागरिकों की भक्ति तथा समझदारी पर आधारित है । जैसे उसके नागरिक होंगे उसी प्रकार की सरकार होगी । इसलिये नागरिकों के लिये यह जानना आवश्यक है कि नागरिक के राज्य के प्रति क्या कर्तव्य हैं ? उनके क्या अधिकार हैं ? नागरिकशास्त्र इन अधिकारों तथा कर्तव्यों के ज्ञान के साथ-साथ उनको यह भी सिखाता है कि इन अधिकारों तथा कर्तव्यों का उपभोग इस प्रकार करना चाहिए जिससे मानव समाज का कल्याण हो । छात्रों को दूसरे के अधिकारों को आदर देने की भावना प्रदान करने के लिये प्रशिक्षित करना चाहिए जिससे वे आदर्श नागरिकता प्राप्त कर सकें । आदर्श नागरिकता के द्वारा हम अधिक से अधिक मानवों की अधिक से अधिक भलाई कर सकते हैं ।

(२) **प्रो० बार्डनिंग (Bining)** ने नागरिकशास्त्र के शिक्षण का प्रमुख लक्ष्य अच्छे नागरिक तथा उच्च श्रेणी का नागरिक चरित्र (Civic Character) उत्पन्न करना बताया है । इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये छात्र विभिन्न शासकीय साधनों, जैसे—स्थानीय, राजकीय तथा संघीय सरकारों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करें । एक युवक के लिये इनका ज्ञान आवश्यक है जिससे वह अपने आगामी जीवन में इन साधनों का प्रभावशाली एवं सफल कार्यकर्ता बन सके । इन साधनों का स्थायित्व केवल समाज कल्याण के दृष्टिकोण से है, यदि इनके द्वारा इस उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होती है तो वे निरर्थक हैं ।^१

(३) **राजनैतिक जागरूकता (Political Consciousness)** :—नागरिकशास्त्र के शिक्षण का एक अन्य लक्ष्य छात्रों को राजनीतिक सजगता तथा चेतना प्रदान करना है । इसका अर्थ नागरिकों में राजनीतिक सक्रियता तथा सजगता उत्पन्न करना है । आज के छात्रगण कल के नागरिक हैं जिन पर समाज

के निर्माण तथा उसकी उन्नति का भार है। किसी भी राष्ट्र में प्रजातन्त्र की सफलता के लिये राजनीतिक जागरूकता का होना परमावश्यक है। इसको उत्पन्न करने के लिये छात्रों को नागरिक के अधिकारों तथा कर्तव्यों का ज्ञान देना अनिवार्य है, तथा इसके साथ ही इनके अनुसार सही-सही आचरण करने के लिये भी बल देना चाहिए। नागरिकशास्त्र का शिक्षक विभिन्न पाठ्य-क्रम-सहगामी-क्रियाओं का संगठन करके छात्रों में व्यावहारिक रूप से राजनीतिक सजगता को उत्पन्न कर सकता है।

(४) राष्ट्रीय चरित्र (National Character) :—नागरिकशास्त्र का शिक्षण ऐसे दृष्टिकोण से किया जाय जिससे छात्रों में राष्ट्रीय दृष्टिकोण उत्पन्न हो सके; अर्थात् उनके राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण हो सके। वास्तविकता में बच्चे को हम जो विचार तथा भाव प्रदान करेंगे वे ही उसके आगामी जीवन की आधार शिला होंगे। इसलिये नागरिकशास्त्र के शिक्षण से हमको छात्रों को ऐसे विचार प्रदान करने चाहिए जिससे उनके राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण हो सके और समस्त राष्ट्र का हित कर सकें। परन्तु ये विचार अन्तर्राष्ट्रीयता के माग में बाधक न हों, क्योंकि समस्त मानव समाज एक कुटुम्ब है जिसमें सब को सहयोग, प्रेम, सहानुभूति तथा सहकारिता के साथ रहना चाहिये।

(५) अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास (Development of International Out look) :— छात्रों में अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना का विकास करना नागरिकशास्त्र का मुख्य लक्ष्य है। वैज्ञानिक आविष्कारों ने सम्पूर्ण विश्व को एक बना दिया है। कोई भी राष्ट्र आत्म-निर्भर नहीं है। एक-दूसरे से उन्हें सहायता लेनी ही पड़ती है। इन सम्बन्धों के आधार प्रेम, सहानुभूति, सहयोग तथा सहकारिता होने चाहिये। विश्व को तृतीय महायुद्ध के भय से इस भावना के द्वारा ही बचाया जा सकता है। नागरिकशास्त्र हमें 'रहो तथा रहने दो' (Live and let live) का सिद्धान्त सिखाता है। इसके द्वारा हमको अपने छात्रों में अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास करना चाहिये। इस शास्त्र के द्वारा छात्रों में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना विकसित करनी चाहिये।

(६) मानसिक शक्तियों का विकास (Development of Mental powers) :—नागरिक शास्त्र के शिक्षण का एक अन्य लक्ष्य बालकों की मानसिक शक्तियों का विकास करना है, उदाहरणार्थ—कल्पना, तर्क, आलोचना स्मरण तथा निर्णय आदि शक्तियाँ। नागरिक शास्त्र में ऐसी कोई पाठ्य-वस्तु नहीं है जो तर्क रहित हो। इसके अध्ययन से आलोचना, तर्क, कल्पना तथा निर्णय आदि शक्तियों का पूर्ण विकास किया जा सकता है। इस शास्त्र के

द्वारा छात्रों को सत्य तथा असत्य वस्तुओं में भेद करना सिखाया जाता है। जो सत्य है उसी को ग्रहण करने के लिये बल दिया जाता है। छात्रों को नागरिक शास्त्र में ऐसे बहुत से अवसर प्राप्त होते हैं जहाँ उन्हें अपने निर्णय तथा कल्पना शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। समस्याओं का हल निकालने में उनकी चिन्तन शक्ति का भी विकास होता है।

(७) वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास (Development of Scientific out look) :—वैज्ञानिक युग की यह एक प्रबल माँग है कि छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न किया जाय। नागरिकशास्त्र इस माँग को पूर्ण करने में बहुत सहायता प्रदान करता है। इस कारण इसके शिक्षण का एक मुख्य लक्ष्य यह भी है कि छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित किया जाना चाहिए जिससे वे अन्धविश्वासी न बन सकें तथा अवैज्ञानिक वस्तुओं का त्याग करने में समर्थ हो सकें। प्रत्येक बात को तथ्य तथा प्रमाणों सहित स्वीकृत करने में समर्थ हो सकें। यह तभी किया जा सकता है जब उनकी निर्णय तथा तर्क शक्तियाँ विकसित हों।

(८) प्रजातंत्र की शिक्षा के लिये नागरिकशास्त्र का शिक्षण परमावश्यक है। यह शास्त्र छात्रों को नागरिकों के कर्तव्यों तथा अधिकारों का ज्ञान प्रदान करता है। इसके साथ ही वह यह भी सिखाता है कि हमें अपने कर्तव्यों तथा अधिकारों का प्रयोग किस प्रकार करना चाहिये। नागरिकशास्त्र उनको व्यावहारिक शिक्षा देकर आदर्श नागरिक बनाता है जिससे भविष्य में अपने प्रजातंत्रीय शासन को सुचारु रूप से चला सकें।

एडम्स वेस्ले (Adams Wesley) ने नागरिकशास्त्र के शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य तथा लाभ प्रस्तुत किये हैं :—

- (१) सरकार की आवश्यकता को समझने की शक्ति प्रदान करना।
- (२) सरकार के ढाँचे का ज्ञान प्रदान करना।
- (३) राजनैतिक दलों तथा उनके कार्यों का ज्ञान प्रदान करना।
- (४) राष्ट्रों के सहयोग के महत्त्व का ज्ञान देना।
- (५) नागरिक के कर्तव्यों तथा अधिकारों का ज्ञान कराना।
- (६) प्रजातन्त्र के लिये दृढ़ विश्वास उत्पन्न करना।
- (७) जनहित की भावना तथा विश्वशान्ति को स्थापित करने की क्षमता उत्पन्न करना।

(८) इस शास्त्र के ज्ञान से बालक राजनैतिक समस्याओं का हल करना सीख जाता है।

(६) बालक स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों तथा उनके प्रति कर्तव्यों और अधिकारों का ज्ञान प्राप्त करता है।

(१०) छात्र इसके द्वारा नागरिक उत्तरदायित्वों को समझने में समर्थ हो जाता है।

(११) इस शास्त्र के ज्ञान से उनमें सहयोग, सहकारिता, सहनशीलता, धैर्य, निष्पक्षता आदि गुणों का विकास होता है जिससे वे आदर्श नागरिक बनने में सफल होते हैं और अपनी प्रजातन्त्रीय शासन व्यवस्था की सुरक्षा करने में समर्थ होते हैं।

नागरिकशास्त्र के शिक्षण के लाभ

(Values of Teaching Civics)

(१) माध्यमिक शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा का एक उद्देश्य, चरित्र-निर्माण निर्धारित किया है। नागरिक शास्त्र चरित्र-निर्माण में बहुत सहायता प्रदान करता है। छात्रों में इस शास्त्र के द्वारा सहयोग, सहकारिता, उत्तरदायित्व पूर्ण करने की भावना, प्रेम, सहानुभूति, नेतृत्व, सहनशीलता, धैर्य आदि गुणों का विकास किया जा सकता है जो चरित्र निर्माण के आवश्यक तत्व हैं। यह इस शास्त्र का मुख्य लाभ है।

(२) नागरिक शास्त्र के अध्ययन से नागरिकों में समाज सेवा, पारस्परिक सहयोग और अपने से भिन्न विचारों, विश्वासों, भक्तियों तथा भावनाओं के प्रति सहनशीलता, आदर तथा सामंजस्य की भावनाएँ विकसित होती हैं। ये भावनाएँ आदर्श समाज के संगठन के लिये आवश्यक हैं।

(३) नागरिक शास्त्र का ज्ञान सामाजिक समस्याओं को सुलझाने की शक्ति प्रदान करता है, उदाहरणार्थ—हमारा राष्ट्र छुआछूत, पर्दा प्रथा, निरक्षरता, वर्णव्यवस्था, स्त्रियों की समाज में हीन दशा, बाल विवाह, साम्प्रदायिकता आदि समस्याओं से ग्रसित है। नागरिक शास्त्र के ज्ञान से छात्र इनका हल निकालने में सफलीभूत होंगे।

(४) राजनीतिक सजगता तथा सक्रियता के अतिरिक्त नागरिक शास्त्र हमें ऐसी बातें भी सिखाता है कि हमको साफ तथा स्वच्छता के साथ रहना चाहिये और इसके लिये न केवल अपने घर में ही वस्त्र पड़ीस, ग्राम, नगर, राज्य आदि में भी स्वच्छता के साथ रहने का प्रचार करना चाहिए और स्वास्थ्य के नियमों का पालन करना चाहिये। अस्वस्थ मनुष्य का जीवन फलीभूत नहीं कहला सकता क्योंकि शारीरिक रोगों के कारण वह जीवन में सुख का आनन्द

नहीं उठा सकता है। इन सब के ज्ञान से मनुष्य समाज हित तथा व्यक्तित्व का विकास करने में सफलता प्राप्त करता है।

(५) इसके शिक्षण का एक अन्य लाभ यह है कि इसके ज्ञान से मानव अपनी जटिल समस्याओं को सुलभाने में सफल होता है तथा वह वैज्ञानिक आविष्कारों का प्रयोग मानवता के कल्याण के लिये करना सीख जाता है।

(६) नागरिक शास्त्र के अध्ययन से छात्र सफल राजनैतिक जीवन व्यतीत करना सीख जाते हैं। वे इस शास्त्र के सिद्धान्तों का अपने जीवन क्षेत्र में प्रयोग करके अपने जीवन को सुखद बनाने में सफल होते हैं। इसके साथ ही वे अपनी सरकार को सफलता तथा स्थायित्व प्रदान करते हैं।

(७) इस शास्त्र के शिक्षण से छात्रों में सहानुभूति, सहयोग, प्रेम आदि गुणों का विकास होता है। इसके अध्ययन से मनुष्य इन बातों के ज्ञान की प्राप्ति करता है कि सहयोग तथा सहकारिता के साथ रहने से विद्वेष, वैषम्य तथा कलह को दूर किया जा सकता है। छात्र अपने जीवन में इनका व्यवहार करके सफल सामाजिक जीवन व्यतीत कर सकते हैं। सफल सामाजिक जीवन का मुख्य लक्षण शान्ति है। शान्ति तभी स्थापित हो सकती है जब हम अपने कर्तव्यों का भली भाँति पालन करें तथा दूसरे के अधिकारों में हस्तक्षेप न करें। इन सब का व्यावहारिक ज्ञान नागरिक शास्त्र के द्वारा प्रदान किया जाता है।

(८) नागरिक शास्त्र के अध्ययन से छात्रों में समाज हित को यथार्थ हित मानने की भावना उत्पन्न की जाती है। इसी भावना के द्वारा वे सामाजिक संघर्षों को दूर करके आदर्श समाज की स्थापना करने में कृतकार्य होंगे। यह नागरिक शास्त्र की प्रमुख देन है।

अन्त में हम कह सकते हैं कि नागरिक शास्त्र के द्वारा छात्रों में उन गुणों का विकास किया जाता है जो मानव समाज के कल्याण के लिये बहुत लाभदायक हैं। इन गुणों के विकास से वे जनहितकारी तथा विवेकशील नागरिक बन जाते हैं और मानव समाज का हित करने में पूर्ण सहयोग देते हैं। उपरोक्त हम जिन गुणों तथा आदर्शों का वर्णन कर चुके हैं यदि हम उनका अपने राष्ट्र के नागरिकों में विकास करना चाहते हैं तो हमें नागरिक शास्त्र को माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा में अनिवार्य विषय बनाना चाहिये, जिससे कि उसके अध्ययन से उपरोक्त लक्ष्यों तथा लाभों को प्राप्त किया जा सके।



प्रश्न

1. Enumerate the claims of including Civics as separate Subject of the School Curriculum. —(B. T., 1959)
2. Make out a case for or against the inclusion of civics as an independent subject at the High School Stage, bringing out clearly modern trends in the matter. —(B. T., 1955)
3. In what way has the value of teaching civics in schools increased with the achievement of Independence? How should this teaching be different from what it was in pre-Independence days? —(B. T., 1953)
4. What are the aims of teaching Civics in the schools? Discuss.

अध्याय १०

नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु के चयन तथा संगठन के सिद्धान्त

(Principles of Selection and Organization of the
Subject matter of Civics)

गत अध्याय में हमने नागरिक शास्त्र के लक्ष्यों का विवेचन किया है। इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये एक उपयुक्त पाठ्य-क्रम का होना परम आवश्यक है। इसके बिना हम नागरिकशास्त्र के निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं कर सकते अतः यह देखना आवश्यक है कि नागरिक शास्त्र के पाठ्य-क्रम में किन-किन विषयों, सूचनाओं, क्रियाओं आदि को रखा जाय जिनके अध्ययन से नागरिकशास्त्र के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। परन्तु स्वतः ही यह प्रश्न उठता है कि इस पाठ्य-सामग्री का चयन किन आधारों पर किया जाय। इसके उत्तर में निम्न-लिखित सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया जा सकता है, जिनके द्वारा नागरिक-शास्त्र की पाठ्य-सामग्री का चयन किया जाना चाहिए:—

(१) लचीलेपन का सिद्धान्त (Principle of Flexibility):—प्रकृति के समान मनुष्य भी प्रगतिशील है। वह अपने अस्तित्व के लिये जन्म से ही अनेकों प्राकृतिक शक्तियों से लड़ता रहा है; अर्थात् दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि मानव प्रारम्भ से ही अपने अस्तित्व के लिये अनेकों शक्तियों से

संघर्ष करता है और उन पर विजय प्राप्त करके ही अपने चारों तरफ के वातावरण को अपने अनुकूल बनाने में सफलता प्राप्त करता है। इस संघर्ष में वह जिन अनुभवों तथा तथ्यों की प्राप्ति करता है उनको भी पाठ्य-क्रम में स्थान मिलना चाहिये। यदि पाठ्य-क्रम में लचीलापन नहीं होगा तो उसमें मानवीय अनुभवों को स्थान नहीं मिल सकेगा और शिक्षा के मुख्य लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं हो सकेगी। शिक्षा का एक मुख्य कार्य यह है कि मानवीय अनुभवों को संग्रहीत करके सुरक्षित रखना तथा उनको आने वाली सन्तति को प्रदान करना। यदि हमारे पाठ्य-क्रम में नवीन अनुभवों के लिये स्थान प्रदान किया जायेगा तो शिक्षा अपने प्रथम कार्य, अर्थात् अनुभवों को सुरक्षित रखना, को पूर्ण कर सकेगी। प्रयोजनवाद के अनुसार बालक अपने मूल्य (Values) स्वयं निर्धारित करता है। इस सिद्धान्त के अनुसार भी पाठ्य-क्रम में इन मूल्यों या अनुभवों को स्थान प्रदान किया जाय। इनको स्थान प्रदान करने के लिये हमारा पाठ्य-क्रम लचीला होना चाहिये।

(२) क्रिया का सिद्धान्त (Principle of Activity):—शिक्षा विशारदों का विचार है कि शिक्षा के पाठ्य-क्रम में चार एच (Four H) को स्थान मिलना चाहिए; अर्थात् स्वास्थ्य (Health), मस्तिष्क (Head), हाथ (Hand), तथा हृदय (Heart) की शिक्षा बालकों को दी जानी चाहिए। प्रयोजनवाद के अनुसार भी पाठ्य-क्रम में हाथ तथा मस्तिष्क की शिक्षा का समन्वय होना चाहिए। क्योंकि बालक प्रकृति के अनुसार सक्रिय होता है, इसलिये यह अनिवार्य है कि उसको क्रियाशील बनाये रखने के लिये पाठ्य-क्रम में विभिन्न क्रियाओं को स्थान दिया जाय। नागरिक-शास्त्र में भी बहुत से ऐसे विषय हैं जिनको बालक सूक्ष्म निरीक्षण के अभाव में ग्रहण नहीं कर सकता है, उदाहरणार्थ—विधान सभा की कार्यप्रणाली आदि। इस कारण नागरिक शास्त्र के पाठ्य-क्रम में विभिन्न क्रियाओं को चुना जाना चाहिए।

(३) उपयोगिता का सिद्धान्त (Principle of Utility):—इस सिद्धान्त के अनुसार उन तथ्यों का चयन किया जाना चाहिए जो छात्रों के लिये उपयोगी हैं। इस सिद्धान्त का प्रयोग करके शैक्षिक जीवन के उपयोगिता (Precise) नामक अंग की संतुष्टि की जाय। ए० एन० ह्वाइटहेड (A. N. White head) ने शैक्षिक जीवन को तीन भागों में विभाजित किया—(१) कौतूहल (Romance), (२) उपयोगिता (Precise), तथा (३) सामान्यीकरण (Generalization)। नागरिकशास्त्र के उन्हीं तथ्यों का चयन किया जो शैक्षिक जीवन की दूसरी अवस्था की संतुष्टि करें। इस अवस्था पर बालक उपयोगिता में विश्वास करता है। वह उसी वस्तु को ग्रहण करना चाहता है

जो उसके लिये उपयोगी है। दूसरे, नागरिकशास्त्र का एक मुख्य लक्ष्य अच्छे नागरिक उत्पन्न करना है। अतः इस लक्ष्य की पूर्ति के लिये जो सामग्री उप-युक्त हो उसी को पाठ्य-क्रम में रखा जाय।

(४) औपचारिकता का सिद्धान्त (Principle of Formality):—इस सिद्धान्त के अनुसार नागरिकशास्त्र के पाठ्य-क्रम में उन विषयों को रखा जाय, जिनके ज्ञान से छात्रों में वह योग्यता तथा क्षमता विकसित हो जाय जिससे वे अपने पूर्वजों की सभ्यता तथा संस्कृति को बनाये रख सकें तथा उसमें वृद्धि करके अपनी सन्तति को प्रदान कर सकें। इसके साथ ही वह इन विषयों का अध्ययन औपचारिक रूप से कर सकें।

(५) रुचि का सिद्धान्त (Principle of Interest):—इस सिद्धान्त के अनुसार उन्हीं तथ्यों का चयन किया जाना चाहिए जो बालक की रुचि के अनु-सार हों। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि बालक की रुचियों, वृत्तियों, योग्यताओं तथा कुशलताओं के अनुसार पाठ्य-सामग्री का चयन किया जाय। आधुनिक शिक्षा की प्रवृत्ति के अनुसार पाठ्यक्रम बाल-केन्द्रित (Child-Centred) होना चाहिये। इसलिये उसी सामग्री का चयन किया जाय जो बालकों की प्रकृति के अनुसार हो।

(६) चयन का सिद्धान्त (Principle of Selectivity):—इस सिद्धान्त के अनुसार संस्कृति तथा सामाजिक जीवन के उन्हीं मुख्य तत्त्वों को चुना जाना चाहिए जो प्रत्यक्ष रूप से बालक को सामाजिक जीवन को समझने और उसमें व्यवस्थित होने में सहायक हों। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि नागरिक शास्त्र के पाठ्य-क्रम के लिये उन विषयों, सूचनाओं आदि को चुना जाना चाहिए जो सामाजिक जीवन की व्याख्या तथा स्पष्टीकरण करते हैं।

(७) एक-केन्द्रीय विकास सिद्धान्त (Principle of Concentric Growth):—इस सिद्धान्त के अनुसार पहले उन तथ्यों को रखना चाहिये जो छात्र के बहुत ही समीपवर्ती हैं। फिर उससे दूर तथा फिर उससे दूर तक अर्थात् जिस प्रकार एक केन्द्र से विभिन्न अर्द्धव्यासों के द्वारा खींचे गये वृत्तों में क्षेत्र का ही अन्तर रहता है उसी प्रकार नागरिक शास्त्र की पाठ्य-सामग्री का चयन करते समय बालक को केन्द्र मानकर विभिन्न विषयों की सूची बनाई जाय, उदाहरणार्थ—बालक को सर्वप्रथम परिवार का ज्ञान दिया जाय क्योंकि वह उसके सबसे अधिक समीप है तथा उससे वह परिचित है। फिर पड़ोस, ग्राम, नगर, जिला, राज्य और विश्व की शिक्षा दी जाय। ऐसा नहीं करना चाहिये कि पहले उसे राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का ज्ञान दिया जाय और बाद में ग्राम, पड़ोस आदि की शिक्षा प्रदान की जाय।

इस प्रकार का व्यवहार बालक के मानसिक विकास के अनुसार होगा। इसमें हम बालक की निकटता तथा समीपता को आधार बनाकर चलते हैं।

तथ्यों का संगठन (Organization of Facts)

पाठ्य-वस्तु के पश्चात् उसको इस प्रकार से संकलित किया जाय जिससे छात्रों को उसको आत्मसात् करने में किसी कठिनाई का सामना न करना पड़े। स्वतः ही यह प्रश्न उठता है कि इस सामग्री को किन सिद्धान्तों के अनुसार संगठित करना चाहिए जिससे बालक उसको सरलता तथा सुगमता से आत्मसात् कर सके। इसके उत्तर में हम निम्नलिखित सिद्धान्तों या आधारों को प्रस्तुत करते हैं :—

(१) एकीकरण का सिद्धान्त (Principle of Integration) :—इस सिद्धान्त के अनुसार चयन की हुई पाठ्य-वस्तु को इस प्रकार संगठित किया जाय जिससे उस सामग्री का राजनीतिशास्त्र, इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र तथा दूसरे सामाजिक विज्ञानों से सम्बन्ध स्थापित किया जा सके। यह सम्बन्ध शीर्षात्मक तथा अनुप्रस्थीय दोनों प्रकार से स्थापित होना चाहिये। एक कक्षा में प्राप्त की हुई सामग्री दूसरी कक्षा की सामग्री को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करे। इस प्रकार का सम्बन्ध शीर्षात्मक समन्वय कहलाता है। जब एक पाठ्य-वस्तु दूसरे विषयों की पाठ्य-वस्तुओं में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करती है तब वह अनुप्रस्थीय सम्बन्ध कहलाता है। नागरिक शास्त्र की पाठ्य-वस्तु को इस प्रकार संकलित किया जाय जिससे छात्र दोनों प्रकार के समन्वय सम्बन्धों का लाभ उठा सके तथा पाठ्य-वस्तु को सरलता एवं सुगमता से ग्रहण कर सके। इस प्रकार स्थापित किये हुए अन्तर्सम्बन्धों को हम एकीकरण कहते हैं।

(२) नागरिक शास्त्र की पाठ्य-सामग्री तथा विषयों के संगठन का एक अन्य आधार परिस्थिति है। इसका अर्थ है कि उसके संगठन में उन ठोस परिस्थितियों को आधार बनाना चाहिये जिनके सम्पर्क में बालक रहता है। उसका अध्ययन घर तथा पड़ोस से प्रारम्भ किया जाय, न कि राष्ट्र तथा अन्तर्राष्ट्र से।

(३) पाठ्य-वस्तु का संकलन इस प्रकार होना चाहिए कि वह बालकों की वैयक्तिक विशेषताओं, रुचियों, प्रवृत्तियों, योग्यताओं तथा कुशलताओं की पूर्ति तथा विकास के लिये अवसर प्रस्तुत करे।

(४) नागरिक शास्त्र की पाठ्य-सामग्री को इस प्रकार संगठित किया

जाय जिससे बालक शिक्षा के स्थानान्तरण के लाभों से वंचित न रह सके। इसका अर्थ यह है कि पाठ्य-वस्तु इस प्रकार संकलित की जाय जिसको ग्रहण करके उसका प्रयोग दूसरे विषय के ज्ञानार्जन करने में किया जा सके। समान तत्त्वों के आधार पर इस सिद्धान्त के अनुसार ज्ञानार्जन किया जाता है।

हम नीचे विभिन्न कक्षाओं के पाठ्य-क्रम की रूपरेखा प्रस्तुत कर रहे हैं।

कक्षा ६

(१) स्थानीय सरकार का संगठन तथा कार्य :—(अ) ग्राम, (ब) नगर (स) जिला। इनके अधिकारी तथा उनके कार्य।

(२) स्थानीय संस्थाएँ :—(अ) ग्राम पंचायत, (ब) नगरपालिका, तथा (३) अन्तरिम जिला परिषद्। इनका संगठन तथा कार्य।

(३) कहानियाँ जिनके द्वारा स्वदेश प्रेम, सत्यता, सहयोग, सहकारिता, दया, सहानुभूति, त्याग आदि गुणों का विकास किया जा सके।

(४) अच्छी आदतों के निर्माण के लिये प्रायोगिक कार्य :—घर, ग्राम पड़ोस तथा शिक्षालय की सफाई।

(५) स्वास्थ्य के नियमों का सामान्य परिचय।

कक्षा ७

(१) गुणों तथा आदतों के विकास के लिये प्रायोगिक कार्य।

(२) स्वास्थ्य के नियमों का विस्तृत परिचय।

(३) प्रदेश की सरकार :—

(i) व्यवस्थापिका सभा का संगठन तथा कार्य।

(ii) कार्यपालिका का संगठन तथा कार्य।

(iii) न्यायपालिका का संगठन और उसके कार्य।

(iii) केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों में सम्बन्ध।

(४) आर्थिक तथा सामाजिक समस्याएँ।

कक्षा ८

(१) गुणों तथा आदतों का प्रशिक्षण।

(२) केन्द्रीय सरकार का संक्षिप्त अवलोकन।

(i) केन्द्रीय व्यवस्थापिका का संगठन तथा कार्य।

(ii) केन्द्रीय कार्यपालिका का संगठन तथा कार्य।

(iii) सर्वोच्च न्यायालय का संगठन, क्षेत्र तथा कार्य।

(iv) राज्यों की सरकारों से सम्बन्ध।

(३) अन्तर्राष्ट्रीय संगठन का संक्षिप्त अवलोकन :—

(i) लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना, संगठन तथा कार्य ।

(ii) संयुक्तराष्ट्र संघ की स्थापना, संगठन तथा कार्य ।

हाई स्कूल कक्षाओं; अर्थात् कक्षा ६ व १० के पाठ्य-क्रम को दो प्रश्न-पत्रों में बाँटा जाय, उनकी विषय-सूची निम्नलिखित हैं—

प्रथम प्रश्नपत्र—नागरिकशास्त्र के सिद्धान्त (Principle of Civics)s

(१) नागरिकशास्त्र—अर्थ, विषय-विस्तार तथा महत्त्व ।

(२) नागरिकशास्त्र का अन्य शास्त्रों से सम्बन्ध ।

(३) व्यक्ति तथा समाज, संघ समुदाय और राज्य ।

(४) नागरिक और नागरिकता—अधिकार तथा कर्त्तव्य, नागरिकता की प्राप्ति तथा विलोम ।

(५) राज्य—मुख्य अङ्ग तथा कार्य ।

(६) सरकार तथा इसके विविध रूप—उनकी परिभाषा तथा गुण दोष ।

(७) सरकार के अङ्ग—व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्याय-पालिका । इनके परस्पर सम्बन्ध ।

(८) कानून तथा स्वतन्त्रता ।

(९) राजनैतिक दल तथा जनमत ।

(१०) मताधिकार तथा निर्वाचन प्रणाली ।

द्वितीय प्रश्न-पत्र—भारतीय नागरिकता तथा शासन (Indian Citizenship and Administration) :—

(१) भारत का संक्षिप्त वैधानिक विकास ।

(२) भारत के संविधान की विशेषताएँ ।

(३) भारतीय नागरिकता तथा नागरिक के मूल अधिकार ।

(४) राज्य की नीति के निर्देशक तत्त्व ।

(५) संघीय व्यवस्थापिका—प्रेसीडेन्ट, लोकसभा तथा राज्य परिषद् ।

(६) संघीय कार्यपालिका—प्रेसीडेन्ट, उपराष्ट्रपति तथा मन्त्रि परिषद् ।

(७) संघीय न्यायपालिका ।

(८) राज्यों का शासन ।

(९) संघ तथा राज्यों का अधिकार, विभाजन तथा सम्बन्ध ।

(१०) जिले का शासन प्रबन्ध ।

- (११) स्थानीय संस्थाएँ ।
- (१२) भारत में राजनैतिक दल ।
- (१३) भारतीय समाज की सामाजिक तथा आर्थिक समस्याएँ तथा उनके सुधार ।
- (१४) भारत तथा संयुक्त राष्ट्र संघ ।

—: • :—

प्रश्न

1. What principles would guide you in selecting and organizing the Subject matter of Civics ? Discuss fully.
- 2, What place would you give to Civics in the Junior and Senior High School Curriculum ? Draw up briefly a Syllabus for the same.
3. Give a critical estimate of the Syllabus in Civics for High School classes. Suggest improvement. —(B. T., 1958)

अध्याय ११

नागरिकशास्त्र के शिक्षण की विधियाँ

(Methods of Teaching Civics)

शिक्षण विधि से यह तात्पर्य है कि किसी विषय के ज्ञान को छात्रों को किस प्रकार प्रदान किया जा सकता है। किसी विषय के शिक्षण में विधि का वही महत्व है जो किसी निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचने के लिये सत्य मार्ग का है। जिस प्रकार सत्य मार्ग के अभाव में एक व्यक्ति निर्दिष्ट स्थान पर नहीं पहुँच सकता उसी प्रकार विधि के अभाव में ज्ञान प्रदान नहीं किया जा सकता है। नागरिकशास्त्र के शिक्षण में हमारा मुख्य कार्य छात्रों को उसके सिद्धान्तों तथा नियमों से परिचित कराना है, जिससे उसके लक्ष्यों की प्राप्ति हो सके। इसके लिये निम्नलिखित शिक्षण-विधियों का प्रयोग किया जाता है :—

(अ) निरीक्षण विधि (Observation Method) :—ज्ञानार्जन का वह सुबोध तथा प्रभावशाली साधन है जिसके द्वारा बालक स्वयं क्रियाशील रहकर किसी वस्तु या तथ्य का पता लगता है। जो ज्ञान छात्र निरीक्षण तथा अवलोकन द्वारा प्राप्त करता है, वह स्थायी होता है तथा उसके सम्पूर्ण ज्ञान का एक भाग बन जाता है। इस प्रकार निरीक्षण करके ज्ञानार्जन की विधि को हम निरीक्षणात्मक विधि के नाम से पुकारते हैं। इसमें शिक्षक स्वयं न बताकर छात्रों को निरीक्षण करने के लिये उत्तेजित करता है और छात्र पर्यावलोकन

तथा निरीक्षण करके स्वयं ज्ञानार्जन करते हैं। नागरिकशास्त्र का शिक्षक इस विधि का उपयोग प्रायः शिक्षा के सभी स्तरों पर कर सकता है। परन्तु इसका उपयोग प्रारम्भिक और माध्यमिक कक्षाओं में अधिक लाभदायक सिद्ध होगा, क्योंकि इस स्तर पर छात्रों को सामाजिक संस्थाओं तथा दशाओं का ज्ञान कम होता है। इस विधि के प्रयोग से छात्र उनका निरीक्षण तथा पर्यावलोकन करके वस्तुनिष्ठ ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। दूसरे, छात्रों को पुस्तक तथा व्याख्यान के आधार पर दिये हुए सिद्धान्त कम समझ में आते हैं तथा अस्थायी रहते हैं। इन सिद्धान्तों को हम इस विधि की सहायता से सुगम, सरल तथा बोधगम्य बना सकते हैं। नागरिकशास्त्र के शिक्षक का यह परम कर्तव्य है कि अपने छात्रों से सामाजिक संस्थाओं तथा समुदायों का अवलोकन करावे। इस विधि के निम्नलिखित गुण हैं :—

(१) इसमें छात्रों की अवलोकन, निर्णय, चिन्तन तथा स्वतंत्रतापूर्वक व्यंजना शक्ति का विकास होता है।

(२) इसके प्रयोग से शिक्षालय, घर तथा समाज के बीच उत्तम सम्बन्ध स्थापित किये जा सकते हैं।

(३) इस विधि के द्वारा छात्रों को सामाजिक संस्थाओं तथा समुदायों की समानताओं तथा असमानताओं का ज्ञान सुगमतापूर्वक हो जाता है।

(४) इसके प्रयोग से छात्र विषय का प्रत्यक्ष रूप से ज्ञान प्राप्त करते हैं। शिक्षक को इस विधि के प्रयोग में अधोलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए :—

(१) शिक्षक जिस संस्था या समुदाय व वस्तु का छात्रों को निरीक्षण कराना चाहता है उसे उनको दिखाने से पूर्व स्वयं निरीक्षण कर लेना चाहिये। उदाहरणार्थ—यदि नागरिकशास्त्र का शिक्षक संसद की कार्यवाही का अवलोकन कराना चाहता है तो उसे सर्वप्रथम स्वयं निरीक्षण कर लेना चाहिये। यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो उसे अपने लक्ष्य में सफलता नहीं मिलेगी।

(२) निरीक्षण कराते समय शिक्षक छात्रों को स्वतंत्रतापूर्वक निरीक्षण करने की आज्ञा दे दे, परन्तु साथ ही साथ वह उनका पथ-प्रदर्शन अवश्य करता रहे।

(३) शिक्षक उनके प्रश्नों का भी उत्तर देता रहे तथा उनसे स्वयं प्रश्न करता रहे। प्रश्न ऐसे होने चाहिए जिनसे छात्रों को वस्तु के ज्ञानार्जन में सहायता मिले तथा वे उनका पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर सकें।

(४) निरीक्षण करने के पश्चात् शिक्षक बालकों के ज्ञान की जाँच करे

तथा सम्बन्धित विषय पर एक छोटा सा वाद-विवाद करवा दे। तदुपरान्त उसे स्वयं विषय की गहन, सूक्ष्म एवं विस्तृत विवेचना करनी चाहिए।

(५) विवेचना करने के पश्चात् शिक्षक छात्रों से उस निरीक्षण की हुई वस्तु के सम्बन्ध में उनके शब्दों में उसके विषय में लिखवाये जिससे उनकी अभिव्यंजना शक्ति का विकास हो सके तथा वह अपनी सामग्री को व्यवस्थित रूप में संगठित करना सीख सकें।

(ब) कथात्मक विधि (Story-Telling Method) :—छोटी कक्षाओं में कहानी कहना ही नागरिकशास्त्र सिखाने की सर्वोत्तम विधि है। प्लेटो (Plato) ने भी इस विधि को छोटे बानकों के लिये लाभदायक तथा उपयुक्त बतलाया था। बालक स्वभावतः कहानीप्रिय होते हैं। कल्पना की उड़ान में उनकी बहुत सी नैसर्गिक प्रवृत्तियों का विकास होता है। मानव बाल्यावस्था तथा वृद्धावस्था दोनों ही में कहानी सुनने तथा कहने में रुचि दिखलाता है। कुछ मनुष्यों में कहानी कहने की कला जन्मजात होती है और कुछ व्यक्ति प्रयत्न करके सीख लेते हैं। नागरिकशास्त्र के शिक्षक को इस कला का जानना आवश्यक है। यदि उसमें यह कला स्वाभाविक रूप से नहीं है तो उसे प्रयत्न करके अर्जित करना चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो वह सफल शिक्षक नहीं हो सकेगा तथा अपने छात्रों के साथ पूर्ण न्याय न कर सकेगा। शिक्षक को नागरिकशास्त्र के ऐसे विषयों का चयन कर लेना चाहिए जो कहानी के रूप में कहे जा सकें उदाहरणार्थ—सहयोग, नेतृत्व, स्वदेश प्रेम, सत्यता, सहानुभूति, दया, त्याग आदि गुणों को विकसित करने वाली कहानियाँ। इस विधि की सफलता शिक्षक के निम्नलिखित गुणों पर निर्भर है :—

(१) शिक्षक जिस कहानी को अपने छात्रों को सुनाना चाहता है उसकी पाठ्य-वस्तु पर उसका पूर्ण अधिकार हो।

(२) कथावाचक निजत्व की भावना से ग्रसित नहीं होना चाहिए। उसको छात्रों में घुलमिल जाना चाहिए तभी वह कहानी में सफलता प्राप्त कर सकेगा।

(३) कथावाचक को कहानी की पाठ्य-वस्तु में रुचि लेनी चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो वह अपने छात्रों की रुचि को कहानी में उत्पन्न करने में असफल रहेगा।

(४) कहानी कहने का ढंग रुचिकर, स्वाभाविक तथा भावपूर्ण होना चाहिए अर्थात् उसमें कृत्रिमता नहीं आनी चाहिए।

(५) उसको अभिनय कला का भी ज्ञान होना चाहिए जिससे वह भावा-नुसार अपने हाव-भाव प्रदर्शित करने में सफल हो सके। इसके साथ ही

उसमें स्वर को भावों के अनुसार उतार-चढ़ाव करने की सामर्थ्य होनी चाहिए। यदि उसमें यह शक्ति नहीं होगी तो वह जिन गुणों को उस कहानी के द्वारा छात्रों में विकसित करना चाहता है, उत्पन्न करने में सफल नहीं हो सकेगा।

(६) कहानी बालकों के मानसिक स्तर, रुचि, अवस्था के अनुकूल होनी चाहिए। यदि ५ वर्ष का बालक है तो उसकी रुचि के अनुसार परियों की कहानी सुनानी चाहिये क्योंकि वह कौतूहल की अवस्था में है। इसलिये उसके कौतूहल तथा कल्पना प्रवृत्ति की संतुष्टि की जाय। यदि १२ वर्ष का बालक है तो उसको क्रियाशील पात्रों की कहानी सुनानी चाहिये क्योंकि इस अवस्था का बालक उपयोगिता तथा सक्रियता में विश्वास करता है और स्वभाव से बर्बर होता है। उसकी विधायकता तथा विनाशात्मक प्रवृत्तियों को संतुष्ट करने के लिये कहानी द्वारा अवसर प्रस्तुत किये जायें।

(७) शिक्षक को कहानी क्रमानुसार सुनानी चाहिए।

(८) कथावाचक को कहानी सुनाने के लक्ष्य को न भूल जाना चाहिये। यदि शिक्षक छात्रों में सहयोग के गुण को विकसित करने के ध्येय से कोई कहानी सुना रहा है तो उसे सदैव यह ध्येय अपने मस्तिष्क में रखना चाहिये और उसको प्राप्त करने के लिये सदैव सतर्क रहना चाहिये।

(९) शिक्षक को कहानी सुनाने में छात्रों की सहायता लेनी चाहिए। उनको सतर्क तथा सक्रिय बनाये रखने तथा अपनी विषय वस्तु को बोधगम्य बनाने के लिए प्रश्नों तथा सहायक सामग्री का भी उपयोग करते रहना चाहिए। श्याम पट पर कहानी की प्रमुख बातों तथा स्थलों को भी लिखता रहे जिससे छात्र बाद में उसका उपयोग कर सकें।

कथा-पद्धति के लाभ (Advantages of Story-Telling Method):—

(१) इस विधि के द्वारा जो ज्ञान दिया जाता है, उसे वे शीघ्रता तथा सुगमता पूर्वक ग्रहण कर लेते हैं क्योंकि छोटे बालकों में कौतूहल की भावना तथा कल्पना-प्रियता अधिक होती है तथा वे स्वभाव से ही कहानी-प्रिय होते हैं।

(२) इसके द्वारा बालकों में नागरिक तथा सामाजिक गुणों का विकास किया जा सकता है। जो आदर्श नागरिक बनने में उपयोगी सिद्ध होंगे।

(३) इसके द्वारा बच्चों की रुचि तथा अवधान को विषय-वस्तु में केन्द्रीभूत किया जा सकता है तथा उनमें तन्मयता और एकाग्रता को विकसित किया जाता है।

(४) इस विधि के द्वारा छात्रों की कल्पना, स्मरण तथा चिन्तन शक्तियों का विकास होता है।

(५) इस विधि से छात्र अपने गुप्त भावों को प्रकाशित करने का अवसर प्राप्त करते हैं।

(स) अभिनयात्मक विधि (Dramatic Method):—इस विधि से छात्रों को दो लाभ प्राप्त होते हैं। एक तो वे अपने पाठ को स्मरण कर लेते हैं दूसरे इसके द्वारा उनको काम करने के अवसर प्राप्त होते हैं। छोटे बालकों में अनुकरण व क्रियाशीलता की प्रवृत्तियों का प्राधान्य होता है। इस विधि के प्रयोग से बालकों की रुचि को विषय में जागृत किया जाता है तथा वे विषय का सरलता तथा सुगमता से अधिक ज्ञान प्राप्त करते हैं तथा इस प्रकार अर्जित किया हुआ ज्ञान स्थायी रहता है क्योंकि क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन से इन्द्रियाँ, सजग तथा सक्रिय रखी जाती हैं। इस विधि से बालकों का मनोरंजन भी पूर्णरूप से होता है। इसके अतिरिक्त यह विधि मनोवैज्ञानिक है। इसमें छात्र 'स्वक्रिया द्वारा ज्ञानार्जन' करता है तथा 'खेल द्वारा सीखने के सिद्धान्त' का भी अनुकरण किया जाता है। इस विधि के प्रयोग के लिये नागरिक शास्त्र में बहुत से अवसर उपलब्ध हैं। शिक्षक अपने छात्रों से महान् पुरुषों के कार्यों का, अन्तरिम जिला परिषद की बैठक, पार्लियामेण्ट की कार्य-विधि, आदि का अनुकरण (Mock Trial) करवा सकता है। इससे एक तो उनकी कार्य-विधियों का स्पष्ट तथा शुद्ध ज्ञान प्राप्त हो जायगा तथा दूसरे उनकी मूल प्रवृत्तियों की संतुष्टि भी हो जायगी। अरनेस्ट हॉर्न (Ernest Horn) का विचार है कि इस विधि के प्रयोग से छात्रों में नेतृत्व सहयोग, क्रियात्मक परिश्रम करने के भाव (Creative efforts) तथा प्रेरणा शक्ति का विकास किया जा सकता है। जो आदर्श नागरिक के प्रमुख गुण हैं उनको प्राप्त किये बिना वह आदर्श नागरिक कहलाने का अधिकारी नहीं है।

अभिनयात्मक विधि के लाभ (Advantages of Dramatic Method) :—

- (१) इस विधि के द्वारा बालक का मानसिक विकास होता है।
- (२) कार्य के परिवर्तन से हम बालकों में विषय के प्रति रुचि विकसित कर सकते हैं। इस विधि से विषय में रुचि उत्पन्न की जाती है।
- (३) यह विधि स्वक्रिया द्वारा शिक्षा प्राप्त करने के लिये अनेक अवसर

प्रदान करती है, जिसमें नागरिकशास्त्र रोचक, सुबोध, सुगम तथा सजीब बन जाता है।

(४) इस विधि के प्रयोग से शिक्षक, शिक्षण के सिद्धान्तों के अनुसार अपने छात्रों को शिक्षा प्रदान करता है।

(५) इस विधि के द्वारा छात्रों में विषय-ग्राह्यता, आत्म-विश्वास तथा आत्माभिव्यञ्जना शक्ति विकसित की जाती है।

(६) इसके द्वारा बालकों की लज्जाशील प्रवृत्ति तथा भिन्नता को दूर किया जाता है। इसके अतिरिक्त छात्र बोलने की कला (Art of Speaking) भी सीख जाते हैं तथा उन्हें योग्य नागरिक बनाया जा सकता है।

(७) इसके द्वारा बालकों को नैतिक तथा सामाजिक शिक्षा प्रदान की जाती है। बालकों में अनुकरण की प्रवृत्ति स्वाभाविक होती है। वह जिस पात्र का अभिनय करते हैं उसके अनुसार अपने को बनाने का प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार अभिनय के द्वारा महान् पुरुषों तथा समाज सुधारकों के कार्यों के अभिनय कराये जाये जा सकते हैं, जो कि उनमें नैतिक तथा सामाजिक गुणों का विकास करने में विशेषतः सहायता प्रदान करेंगे। ये गुण उन्हें योग्य नागरिक बनाने में सहायक सिद्ध होंगे। इसके अतिरिक्त वे जीवन की समस्याओं को सुलझाने में भी सहायता करेंगे।

अरनेस्ट हॉर्न ने अपनी पुस्तक "Methods of Intruction in the Social Studies" में इस विधि की सफलता के लिये शिक्षक में निम्नलिखित गुणों का होना अनिवार्य बताया है—

(१) शिक्षक नाटक तथा संवाद लिखने की कला से परिचित हो तथा इसके साथ ही वह रंगमंच के निर्माण तथा उसकी उपयुक्त सामग्री, पोशाक, भाषा आदि का भी ज्ञान रखे।

(२) अभिनयात्मक प्रकरणों के चयन की योग्यता रखें।

(३) अभिनय के गुणों; अर्थात् सरलता, प्रामाणिकता (Authencity) आदि का ज्ञान रखे। यदि वह इन गुणों का ध्यान नहीं रखेगा तो वह इस विधि को ठीक प्रकार से संचालित करने में सफलता नहीं प्राप्त कर सकेगा।

(४) शिक्षक इस कला में रुचि ले तथा निजत्व की भावना से ग्रसित न हो।

नोल्टन (Knowlton) का कथन है कि शिक्षक को नाट्यकला तथा उन व्यावहारिक समस्याओं का कुछ ज्ञान होना चाहिए जो नाटकों की योजना तथा संचालन में बाधा स्वरूप आती है।

(द) तुलनात्मक विधि—यह विधि सर्वप्रथम अरस्तू (Aristotle) द्वारा प्रतिपादित की गई थी। नागरिकशास्त्र के शिक्षण में यह विधि बहुत ही उप-

योगी है। नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु मानव तथा उसके द्वारा संगठित की हुई संस्थाएँ हैं। इस शास्त्र में ऐसे बहुत से विषय हैं जिनमें पर्याप्त मात्रा में साम्यता तथा विभिन्नता दोनों ही पाई जाती हैं। इस साम्यता तथा विविधता को शिक्षक तुलनात्मक विधि के द्वारा सरलता से सुबोध बना सकता है। इस विधि के अनुसरण से हम विविध समाजों, समुदायों, तथा संस्थाओं का तुलनात्मक शिक्षण प्रदान कर सकते हैं। इस विधि के प्रयोग करने में हमें निम्न-लिखित बातों का सदैव ध्यान रखना चाहिये—

(१) हम केवल एक ही समाज अथवा संस्था की विवेचना करके ही किसी निश्चित निर्णय पर न पहुँच जायें।

(२) जिन संस्थाओं अथवा समाजों की तुलना की जाय वे सम्यता, संस्कृति आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक दृष्टिकोण से समान हों।

(५) वादविवाद प्रणाली (Discussion Method)—नागरिकशास्त्र के शिक्षण में यह विधि बहुत उपयोगी है। इस विधि के अनुसार छात्रों को समस्याएँ दी जाती हैं और शिक्षक उनके विषय में संक्षिप्त रूपरेखाएँ प्रस्तुत करता है तथा छात्रों को समस्याओं की सामग्री के उपलब्ध सूत्रों को बता देता है। छात्र व्यक्तिगत रूप से समस्याओं का अध्ययन, तैयारी तथा आयोजन करते हैं। इसके पश्चात् समस्या पर वाद-विवाद किया जाता है। यह वाद-विवाद औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों ही रूपों में किया जा सकता है। इसमें प्रत्येक छात्र अपने स्वतन्त्र विचार तथा तर्क प्रस्तुत करने का अधिकारी होता है। इस विधि में शिक्षक का कार्य केवल पथ-प्रदर्शन का होता है। इसमें वाद-विवाद के द्वारा निर्णय बनाये जाते हैं। नागरिकशास्त्र एक सामाजिक विषय है। इसमें समस्याओं की कोई कमी नहीं है। छात्रों के सम्मुख सामाजिक समस्याएँ, जैसे—जातिपाँति, विधवा विवाह, बहुविवाह, नारियों की समाज में हीन दशा आदि तथा राजनैतिक समस्याएँ; जैसे—सुरक्षा समस्या, राज्य के प्रति नागरिकों के कर्तव्य आदि प्रस्तुत की जा सकती हैं। जिनका समाधान वाद-विवाद विधि से करवाया जा सकता है। इस विधि की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं।

(१) इस विधि के द्वारा सामूहिक शिक्षण के दोषों को दूर किया जा सकता है।

(२) इसमें छात्र स्वक्रिया के द्वारा सीखते हैं। इस प्रकार प्रजनन विद्या हुआ ज्ञान स्थायी हो जाता है।

(३) छात्र समस्या-समाधान की रीति से परिचित हो जाते हैं जिसके ज्ञान से वे अपने व्यावहारिक जीवन में सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

(४) इस विधि के द्वारा छात्रों का मानसिक विकास होता है। उनकी चिन्तन, स्मरण, निर्याय तथा तर्क शक्तियों का विकास होता है।

(५) छात्र इसके द्वारा अपने विचारों को क्रम में रखना सीख जाते हैं। दूसरे, उनकी अभिव्यंजना शक्ति का भी विकास होता है।

(२) योजना विधि (Project Method) :—प्रो० बैलार्ड (Ballard) ने प्रोजेक्ट को इस प्रकार परिभाषित किया है, “प्रोजेक्ट वास्तविक जीवन का एक छोटा सा भाग है जिसको शिक्षालय में प्रतिपादित किया जाता है।” (“A Project is a bit of real life that has been imparted into the school.”) इस परिभाषा से स्पष्ट होता है कि योजना वास्तविक जीवन में रहकर पूर्ण की जाती है अर्थात् वह अपने स्वाभाविक वातावरण में ही पूर्ण की जाती है।

प्रो० बाईनिंग तथा बाईनिंग का मत है कि यह विधि नागरिकशास्त्र के शिक्षण के लिये बहुत ही उपयोगी है, क्योंकि इस शास्त्र में इतिहास की अपेक्षा इस विधि के प्रयोग के लिये पर्याप्त अवसर प्राप्त होते हैं। नागरिकशास्त्र के शिक्षण में इस विधि का प्रयोग रचनात्मक तथा समस्यात्मक कार्यों के लिये किया जा सकता है। चाहे ये कार्य छात्रों को वैयक्तिक रूप से दिये जायें या सामूहिक रूप से। रचनात्मक तथा समस्यात्मक योजनाओं को छात्रों के मानसिक स्तर तथा क्षमताओं के अनुसार निर्धारित किया जाता है। वैयक्तिक रूप से नागरिकशास्त्र का शिक्षक चार्ट, मॉडल, मानचित्र, रेखाकृति, चित्र आदि का निर्माण करा सकता है। सामूहिक तथा वैयक्तिक दोनों ही रूपों से समस्यात्मक प्रोजेक्ट दिये जा सकते हैं—

उदाहरणार्थ—वयस्कों की संस्थाओं का संगठन तथा उनकी कार्यविधियों का निरीक्षण, शिक्षालयों की सफाई, कृषकों की समस्याएँ, संसद की बैठक का पर्यावलोकन, सामाजिक समस्याएँ, राजनीतिक समस्याएँ। इस प्रकार के प्रोजेक्टों से छात्रों में सहनशीलता, सहयोग, उत्तरदायित्व पूर्ण करने की भावना आदि गुणों का विकास होता है जो आदर्श नागरिक के बनाने में बहुत ही सहायक होते हैं।

योजना विधि के लाभ (Advantages of Project Method) :—

(१) इस विधि के द्वारा बच्चों को सहयोग के साथ रहने, विचार करने तथा कार्य करने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है जिससे वे समान अभिप्रायों को प्राप्त करने में सफल होते हैं। इसके द्वारा छात्रों में उत्तम सामाजिक आदतों तथा गुणों का विकास किया जाता है जिससे वे प्रजातान्त्रिक समाज में सफलतापूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर सकें तथा योग्य नागरिक बन सकें।

(२) इस विधि के द्वारा विभिन्न विषयों में सरलता से समन्वय स्थापित किया जा सकता है तथा पाठ्य-क्रम में एकीकरण (Integration) स्थापित किया जा सकता है। क्योंकि प्रोजेक्ट एक अभिप्राय युक्त क्रिया होती है जिसको समाज में रहकर पूर्ण किया जाता है। इस प्रकार पाठ्य-क्रम का वास्तविक जीवन से सम्बन्ध स्थापित होता है जो इसका महत्वपूर्ण गुण है।

(३) इसके द्वारा रटने की प्रक्रिया को समाप्त किया जाता है और छात्रों को चिन्तन, तर्क तथा निर्णय के आधार पर समस्या सुलझाने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है। इस प्रकार उनमें स्वाध्याय की आदत का निर्माण होता है।

(४) इस विधि के प्रयोग से कक्षा-शिक्षण के दोषों को दूर किया जाता है। इसमें छात्र वैयक्तिक तथा सामूहिक रूप से अपनी योग्यता, रुचि तथा क्षमता के अनुसार कार्य करता है। दूसरे, वह इसमें स्वक्रिया द्वारा ज्ञानार्जन करता है और इस प्रकार का ज्ञान स्थायी होता है।

(५) यह विधि सीखने के सिद्धान्तों पर आधारित है, उदाहरणार्थ—अभ्यास, तत्परता तथा परिणाम का नियम। इस कारण यह विधि मनो-वैज्ञानिक है।

(६) इस विधि के द्वारा छात्रों को श्रम करने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है जिससे वे श्रम के महत्व को समझ सकें और विश्व के श्रमिकों का आदर कर सकें।

(७) इस विधि के अन्तर्गत शिक्षालय के जीवन को वास्तविक जीवन से सम्बन्धित किया जाता है। वे अपनी योजनाओं की पूर्ति सामाजिक वातावरण में करते हैं जिससे वे व्यावहारिक जीवन की शिक्षा प्राप्त कर लेते हैं और बाद में उनको जीवन की कठिनाइयों को सुलझाने में कोई आपत्ति नहीं होती। इस सम्बन्ध के कारण बालक स्वयं अपने मूल्यों (Values) का निर्माण करता है।

(८) छात्रों में इसके द्वारा सतत् प्रयत्नशीलता तथा रचनात्मक सक्रियता का विकास होता है।

योजना विधि की सीमाएँ तथा दोष (Demerits and Limitations of Project Method)

(१) इस विधि के द्वारा शिक्षण करने से ज्ञान खण्डों में प्रदान किया जाता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि इसके द्वारा क्रम तथा तारतम्य के साथ ज्ञान प्रदान नहीं किया जाता।

(२) इस विधि के द्वारा शिक्षण करने में समय बहुत लगता है। नागरिक-शास्त्र को इतना समय, समय तालिका में प्राप्त नहीं होता।

(३) एक आक्षेप इसके विरुद्ध यह लगाया जाता है कि शिक्षालय का सम्पूर्ण कार्य निष्क्रम कर दिया जाता है।

(४) नागरिकशास्त्र की पुस्तकें योजनाओं के आधार पर नहीं लिखी गई हैं। इस कारण योजनाओं की सामग्री नहीं मिल पाती है।

(५) भारत जैसे निर्धन देश के लिये यह विधि व्यय पूर्ण है।

(ल) कथनात्मक विधि (Narrative Method) :—कथन के द्वारा छात्र पर्याप्त मात्रा में ज्ञान अर्जित करते हैं। छात्रों की रुचियों तथा उनकी सीखने की प्रक्रिया को इसके द्वारा प्रोत्साहित किया जाता है। कथन का मुख्य ध्येय किसी अप्रत्यक्ष वस्तु का ज्ञान छात्रों को प्रदान करना है। इस विधि के द्वारा वर्णित वस्तु तथा सामग्री को सरल, सुगम, स्पष्ट तथा सुबोध बनाया जाता है। प्रत्येक बात या तथ्य प्रश्नों द्वारा छात्रों से नहीं निकलवाया जा सकता है। अतः प्रश्नोत्तर रीति (Technique) की पूर्ति कथन द्वारा की जाती है। जब न प्रश्न पूछने से तथा न व्याख्या और विवृति करने से, हमारा मन्तव्य सफल होता है तब उस समय कथन हमारी सहायता करता है। सामाजिक विषयों के शिक्षण में इस विधि का उपयोग बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। नागरिकशास्त्र के शिक्षण के लिये इस विधि का प्रयोग शिक्षा के सभी स्तरों पर किया जा सकता है। केवल शिक्षक के कथन में ही विविधता होगी। प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्राध्यापकों द्वारा इस प्रणाली का मुख्य रूप से प्रयोग से किया जाता है। वे इस विधि का प्रयोग शिक्षण की अन्य रीतियों तथा सहायक साधनों के साथ करते हैं। ज्ञानात्मक पाठ (Lesson Knowledge) के लिये यह विधि बहुत ही उपयुक्त है। नागरिकशास्त्र में इस विधि के प्रयोग के लिये पर्याप्त मात्रा में अवसर प्राप्त होते हैं; उदाहरणार्थ—राज्य के तत्त्व, व्यक्ति तथा समाज, समुदाय और संघ, नागरिकता आदि ऐसे विषय हैं जिनको इस विधि के द्वारा सरलतापूर्वक स्पष्ट किया जा सकता है। कथन को रोचक, ग्राह्य तथा सुबोध बनाने के लिये शिक्षक द्वारा प्रश्नों, चार्ट, मॉडल, मानचित्र, चित्र, शाब्दिक उदाहरण आदि का सहारा लेना चाहिये। कथन करते समय शिक्षक को अधोलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिये।

(१) कथन बच्चों की आयु तथा मानसिक स्तर के अनुसार होना चाहिए। तथा शिक्षक कथन करते समय उनके अवधान विस्तार का ध्यान रखे।

(२) कथन क्रमबद्ध होना चाहिये।

(३) शिक्षक को प्रश्न करने की रीति को जानना चाहिए जिससे वह छात्रों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर सके तथा कथन की सफलता की भी जाँच कर सके ।

(४) कथन की भाषा तथा शैली छात्रों के मानसिक स्तर तथा आयु के अनुसार होनी चाहिये ।

(५) कथन के द्वारा काल्पनिकता उत्पन्न की जाय जिससे छात्र उस वस्तु का चित्र अपने मन में बना सकें ।

(६) शिक्षक का स्वर तथा उच्चारण शुद्ध होना चाहिये क्योंकि छात्रों में अनुकरण प्रवृत्ति अधिक होती है । यदि वह शब्दों का उच्चारण अशुद्ध करेगा तो बालक भी उसकी अनुकृति करेंगे ।

(म) प्रयोगशाला विधि —(Laboratory Method):—शिक्षा में वैज्ञानिक प्रवृत्ति ने प्रत्येक विषय के लिये अपनी प्रयोगशाला स्थापित करने को बाध्य किया है । जिस प्रकार भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र आदि वैज्ञानिक विषयों के लिये प्रयोगशालाओं की आवश्यकता है, उसी प्रकार सामाजिक विषयों के लिये भी आधुनिक काल की विचारधारा के अनुसार प्रयोगशाला होना आवश्यक है । नागरिक शास्त्र भी एक विज्ञान है जिसके लिये एक पृथक् विशेष कक्ष या प्रयोगशाला की आवश्यकता है । इस कक्ष के द्वारा उस विषय का वातावरण स्थापित किया जाता है जो उसकी शिक्षा के लिये अति आवश्यक है । आधुनिक शैक्षिक विचारधारा के अनुसार शिक्षक का यह परम कर्तव्य है कि वह छात्रों के लिये ऐसा वातावरण या ऐसी स्थिति उत्पन्न करे जिसमें छात्र स्वक्रिया द्वारा ज्ञान अर्जित कर सकें । विशेष कक्ष या प्रयोगशाला वह साधन है जिसके द्वारा नागरिकशास्त्र का शिक्षक बच्चों की शिक्षा के लिये उपयोगी स्थिति तथा वातावरण उत्पन्न कर सकता है । यह प्रश्न स्वतः ही उठता है कि नागरिक-शास्त्र की प्रयोगशाला में किन-किन वस्तुओं का होना आवश्यक है ? इसके उत्तर में हम निम्नलिखित बातों को प्रस्तुत कर सकते हैं—

(१) साधारण कक्ष से एक बड़ा कक्ष होना चाहिये जिसमें एक समय में ३० या ४० बालक स्वाध्ययन कर सकें ।

(२) छात्रों के लिए मेज तथा कुर्सियाँ होनी चाहिए । मेज ऐसी हों जिन पर छात्र सुगमता से अपना प्रयोगिक कार्य कर सकें ।

(३) श्यामपट ।

(४) संगठन-चार्ट, तालिका-चार्ट, मॉडल, चित्र, मानचित्र, रेखाकृतियाँ आदि ।

(५) सूचनापट ।

(६) पुस्तकों की अलमारियाँ :—विषय से सम्बन्धित पाठ्य-पुस्तकों सहायक पुस्तकों तथा विशेष अध्ययन योग्य पुस्तकों होनी चाहिए। शिक्षकों के अध्ययन के उपयुक्त भी पुस्तकों होनी चाहिए।

(७) पत्र-पत्रिकाएँ।

(८) रेडियो तथा टेलीविजन।

(९) फिल्म तथा प्रोजेक्टर।

इस विधि के प्रयोग के लिए शिक्षक कार्यों का निर्धारण करता है। छात्रों को निर्धारित कार्यों के विषय में संक्षिप्त रूपरेखा तथा उसकी सामग्री के उपलब्ध सूत्रों का ज्ञान शिक्षक द्वारा दिया जाता है। इसके पश्चात् छात्र वैयक्तिक रूप से अपना-अपना कार्य करते हैं। निर्धारित कार्य के लिए समय भी निर्धारित कर दिया जाता है। छात्रों को इस अवधि में उस कार्य को पूर्ण करना पड़ता है। इस विधि के अन्तर्गत छात्र वैयक्तिक योग्यताओं के अनुसार कार्य करते हैं। जो छात्र अपने कार्य को अवधि से पहले पूर्ण कर लेता है उसे दूसरा कार्य दे दिया जाता है। इस विधि के द्वारा वर्तमान परीक्षा प्रणाली के दोषों को दूर किया जा सकता है। इन कार्यों की पूर्ति के आधार पर छात्रों को एक कक्षा से दूसरी कक्षा के लिये उन्नति प्रदान की जाती है प्रयोगशाला में प्रत्येक छात्र की उन्नति का लेखा (Progress Report) रहता है जिसमें शिक्षक उनके विकास को लिखता रहता है। इस विधि के प्रयोग से सामूहिक शिक्षा के दोषों को दूर किया जा सकता है।

(५) इकाई विधि (Unit Method) :—इस विधि के लिए अध्याय ५ को देखिए।

—: ० :—

प्रश्न

1. What are the different methods of teaching Civics at the various stages of education ?
2. Discuss the importance of Story-Telling Method in the teaching of Civics. Discuss its merits fully.
3. What is the Project Method ? How it can be used in the teaching of Civics ? Illustrate your answer with examples.
4. Discuss the importance of Laboratory Method in the teaching of Civics. Discuss its essential qualities.
5. Which method do you think better for High School Classes and why ? Give reasons in the support of your answer.

अध्याय १२

नागरिकशास्त्र के शिक्षण की रीतियाँ

(Techniques of Teaching Civics)

पिछले अध्याय में उन विधियों का वर्णन किया गया है जो नागरिकशास्त्र के शिक्षण के लिये प्रयोग में लायी जाती हैं। इन विधियों के अन्तर्गत कुछ रीतियों का प्रयोग नागरिकशास्त्र के अध्यापन में किया जाता है। ये रीतियाँ ज्ञानार्जन में बहुत ही उपयोगी हैं। विभिन्न रीतियाँ, विभिन्न उद्देश्यों के लिये, भिन्न-भिन्न अवसरों पर प्रयोग में लायी जाती हैं। वस्तुतः इन सबका अभिप्राय ज्ञानार्जन को प्रभावशाली, ग्राह्य, बोधगम्य तथा रोचक बनाना होता है। नागरिक शास्त्र के शिक्षण में उपयुक्त होने वाली रीतियाँ नीचे दी जा रही हैं :—

(अ) प्रश्न करना (Questioning) :—नागरिकशास्त्र के शिक्षण में प्रश्नों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके द्वारा सीखने की प्रक्रिया को प्रभावोत्पादक बनाया जाता है। इनके द्वारा छात्र या छात्र समूह को किसी समस्या, प्रकरण, प्रचलित घटना आदि के विषय में विचार करने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है। प्रश्नों का परम्परागत ध्येय जाँचना था। परन्तु आधुनिक शैक्षिक प्रक्रिया में प्रश्न महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त करते हैं तथा बहुत से प्रयोजनों की पूर्ति करते हैं। प्रश्नों के मुख्य प्रयोजनों को नीचे दिया जा रहा है :—

- (१) छात्रों के कौतूहल तथा रुचि को कार्य के प्रति जाग्रत करना ।
- (२) निर्धारित कार्य के लिये उत्प्रेरणा प्रदान करना ।
- (३) सीखने की प्रक्रिया में इनके द्वारा पथ-प्रदर्शन करना ।
- (४) विचार-प्रक्रिया को प्रोत्साहित करना ।
- (५) छात्रों की आवश्यकताओं, अभिरुचियों तथा तात्कालिक समस्याओं का ज्ञान प्राप्त करना ।
- (६) अन्वेषण तथा अनुसन्धान के लिए उत्साहित करना ।
- (७) इनके द्वारा तथ्यों का ज्ञान तथा अनुभवों को संगठित करने में सहायता प्रदान करना ।
- (८) कार्य के मुख्य बिन्दुओं पर प्रकाश डालना ।
- (९) वैयक्तिक शिक्षा प्रदान करना ।
- (१०) मौखिक रूप से अभिव्यंजना शक्ति का विकास करना ।
- (११) छात्रों के ज्ञान के पुनर्विलोकन तथा प्रयोग के लिये अवसर प्रदान करना ।
- (१२) अर्जित ज्ञान तथा उन्नति को मापना ।
- (१३) छात्रों के दोषों तथा कठिनाइयों का पता लगाना ।

प्रश्नों का वर्गीकरण (Classification of Questions) :—

मानसिक प्रक्रियाओं के आधार के अनुसार हम प्रश्नों का निम्नलिखित रूप से वर्गीकरण कर सकते हैं । इस प्रकार के प्रश्नों के द्वारा मानसिक प्रक्रियाएँ उत्तर देते समय उत्तेजित तथा प्रखर होती हैं :—

- (१) स्मृति (Memory) को उत्तेजित करने वाले प्रश्न ।
- (२) संगठन (Organizing Questions) करने वाले प्रश्न ।
- (३) तर्कात्मक (Reasoning) प्रश्न ।
- (४) सूचनात्मक (Informative Questions) प्रश्न ।
- (५) मूल्याङ्कन (Evaluating Questions) करने वाले प्रश्न ।
- (६) तुलनात्मक (Comparative) प्रश्न ।
- (७) विश्लेषणात्मक (Analytic) प्रश्न ।
- (८) विचारोत्तेजक (Thought Provoking) प्रश्न ।
- (९) व्याख्यात्मक (Interpretative) प्रश्न ।
- (१०) निर्णयात्मक (Judicative) प्रश्न ।

शिक्षण प्रक्रिया के आधार पर हम प्रश्नों का निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकरण कर सकते हैं :—

- (१) प्रस्तावना (Introductory Questions) के प्रश्न ।
- (२) विकासात्मक (Developing Questions) प्रश्न ।
- (३) जाँच तथा पुनर्वृत्त्यात्मक (Testing and Recapitulatory Questions) प्रश्न ।

एक अन्य आधार के अनुसार प्रश्नों का वर्गीकरण निम्नलिखित रूप से भी किया जा सकता है :—

- (१) विवरणात्मक (Detailed) ।
- (२) प्रकरणात्मक (Topical) ।
- (३) समस्यात्मक (Problematic) ।

कुछ ऐसे भी प्रश्न हैं जिनको अध्यापक को शिक्षण में व्यवहार में नहीं लाना चाहिए । ये केवल नागरिकशास्त्र के शिक्षक के लिये ही नहीं, वरन् किसी भी विषय के अध्यापक को प्रयुक्त नहीं करना चाहिये । वे अधोलिखित हैं :—

- (१) उत्तर सूचक (Leading) प्रश्न ।
- (२) प्रत्यक्ष (Direct) प्रश्न जिनमें उत्तर 'हाँ' या 'नहीं' में आता हो ।
- (३) रिक्तस्थान पूरक (Elliptical) प्रश्न ।
- (४) प्रतिध्वन्यात्मक (Echo) प्रश्न ।
- (५) स्वीकारक (Coroborative) प्रश्न ।
- (६) अनिर्दिष्टात्मक (Vague) प्रश्न ।
- (७) कौशलयुक्त (Trick) प्रश्न ।

अच्छे प्रश्नों के लक्षण (Qualities of Good Questions) :—

- (१) प्रश्न निश्चित तथा संक्षिप्त होने चाहिये ।
- (२) साधारण भाषा में स्पष्ट रूप से रखे जायें ।
- (३) प्रश्नों की भाषा बालक के मानसिक स्तर तथा व्यक्तता के अनुसार हो ।
- (४) प्रश्न समस्त छात्रों को चिन्तन करने के लिये प्रोत्साहित करें चा वह एक से ही पूछा जाय ।
- (५) प्रश्न का एक मुख्य प्रयोजन हो ।
- (६) वे एक केन्द्रीय विचार से सम्बन्धित हों ।
- (७) वाद-विवाद को प्रोत्साहित करने वाले हों ।

प्रश्न करने की कला (Technique of Questioning) :—

- (१) शिक्षक का प्रश्न करने का ढंग परिणामों की प्रभावोत्पादकता पर प्रत्यक्ष रूप से प्रकाश डाले ।

(२) शिक्षक प्रथमतः समस्त कक्षा के समक्ष अपना प्रश्न रखे और उसके पश्चात् किसी भी छात्र को उसका उत्तर देने के लिये सम्बोधित करे।

(३) प्रश्नों का वितरण समस्त कक्षा में किया जाय जिससे छात्रों का व्यक्तिगत रूप से सहयोग प्राप्त किया जा सके। शिक्षक इस बात का भी ध्यान रखे कि उस छात्र से भी प्रश्न पूछे जो कार्य में अरुचि दिखा रहा है।

(४) प्रश्न की भाषा का दुहराना दोषपूर्ण है।

(५) प्रश्न करने के पश्चात् छात्रों को सोचने के लिये समय दिया जाय।

(६) प्रश्न पर्याप्त आत्म-विश्वास के साथ किये जायें।

(७) प्रश्न सजीवता, स्फूर्ति और तारतम्य के साथ किये जायें।

(ब) कार्य निर्धारण (Assignment) :—कार्य-निर्धारण दो प्रकार का होता है। प्रथम, परम्परागत कार्य-निर्धारण जो पाठ्य-पुस्तकों पर आधारित होते हैं तथा दूसरे आधुनिक कार्य-निर्धारण जो छात्रों की रुचियों, आवश्यकताओं तथा योग्यताओं पर आधारित होते हैं। प्रथम प्रकार के कार्य-निर्धारण में शिक्षक छात्रों को पाठ्य-पुस्तक के कुछ पृष्ठ या पाठ निर्धारित कर देते थे। परन्तु आधुनिक कार्य-निर्धारण में छात्रों को योजनाओं (Projects), समस्याओं, इकाइयों की सूची में से अपनी योग्यता, रुचि तथा आवश्यकता के अनुकूल चुनना पड़ता है। इनका विकेन्द्रीकरण छोटे-छोटे प्रकरणों, क्रियाओं तथा मुख्य प्रतिवेदन कार्य-निर्धारणों के रूप में किया जा सकता है। मुफात (Moffatt) ने अपनी पुस्तक "Social Studies Instruction" में लिखा है कि—“आज का कार्य-निर्धारण एक ऐसी क्रिया या कार्य है जिससे कार्य करने के सम्बन्ध में बालक या बालकों के वर्ग तथा शिक्षक में समझौता रहता है।” (“To-day's assignment might be defined as an agreement between the pupil (or group) and the teacher of work to be done.”) उसने आगे कहा है कि कार्य-निर्धारण के लिये अभ्यास-पुस्तिकाओं (Work Books), गाइड शीट (Guide Sheet), स्क्रेप बुक्स (Scrap Books) तथा रूप रेखाओं के बनाने के कार्य दिये जायें। यदि पाठ्य-पुस्तकों के आधार पर ही कार्य-निर्धारण किया जाय तो वह ऐसा होना चाहिए जिससे छात्रों को विचार करने के लिये अवसर प्रदान किये जाय। अन्त में हम कह सकते हैं कि कार्य-निर्धारण के द्वारा नागरिकशास्त्र का शिक्षक सीखने की प्रक्रिया को प्रभावोत्पादक बना सकता है।

(स) अभ्यास (Drill) :—यह रीति थॉर्नडाइक (Thorndike) के अभ्यास के नियम (Law of Exercise) पर आधारित है। इस नियम के

अनुसार छात्र किसी तथ्य की जितनी आवृत्ति करेगा वह उतना ही उसके मस्तिष्क में स्थायी होगा। इस प्रकार अभ्यास शब्द का अर्थ पुनरावृत्त्यात्मक या आवृत्तिमूलक कार्यों से है, जिनमें बिना किसी प्रयास के बालक अभिव्यक्ति करता है। एम० पी० मुफात (M. P. Mooffatt) का कथन है कि अभ्यास के द्वारा छात्रों में आदतों का निर्माण, कुशलताओं की प्राप्ति तथा उनको किसी परीक्षा के लिए तैयार किया जा सकता है। अभ्यास की रीति का नागरिक-शास्त्र में कितनी सीमा तक प्रयोग किया जा सकता है—यह पाठ्य-वस्तु के ऊपर निर्भर है। जितने उस पाठ्य-वस्तु में स्मरण तथा ग्रहण करने के लिये अवसर होंगे, उतनी ही सीमा तक उनका प्रयोग किया जा सकता है। नागरिक-शास्त्र में हम इस रीति का प्रयोग किसी प्रकरण की रूपरेखा को ग्रहण करने, किसी प्रश्न के उत्तर को स्मरण करने, मानचित्र, चार्ट, मॉडल, रिपोर्ट आदि तैयार करने लिये कर सकते हैं।

(ब) विवृति (Exposition) :—इसका अर्थ पाठ्य-वस्तु की किसी मुख्य बात को सरल, सुगम तथा बोधगम्य बनाना। इसके लिये नागरिकशास्त्र के शिक्षक को अपने निर्धारित उद्देश्य को छात्रों के समक्ष स्पष्ट कर देना चाहिए। दूसरे, उसे छात्रों के अनुसार विवृति करते समय भाषा का प्रयोग करना चाहिए। उदाहरणों तथा दृष्टान्तों के प्रयोग से उसे विवृति को स्पष्ट, बोधगम्य तथा रोचक बनाना चाहिये।

(ग) निरीक्षित-अध्ययन (Supervised Study) :—यह अध्ययन कक्षा या प्रयोगशाला में पूर्व निर्धारित कार्य के सम्बन्ध में किया जाता है और उसका शिक्षक के द्वारा निरीक्षण किया जाता है। इस अध्ययन का दूसरा नाम निर्देशित अध्ययन (Directed Study) भी है। इसमें अध्यापक के द्वारा छात्रों में स्वाध्याय की आदत का निर्माण किया जाता है। नागरिकशास्त्र का शिक्षक अपने छात्रों की, जो किसी समस्या का हल निकालने तथा किसी योजना या या इकाई को पूर्ण करने में संलग्न है, सहायता कर सकता है। इस प्रकार की सहायता उनमें विभिन्न आदतों, कुशलताओं तथा सहयोग की भावनाओं को विकसित करेगी जो कि समुदाय में रहकर सीखने के लिये बहुत ही आवश्यक है। शिक्षक पुस्तकालय में छात्रों को अध्ययन सामग्री के स्रोतों की ओर इंगित करके भी सहायता दे सकता है। इस प्रकार की सहायता तथा निर्देशनों के द्वारा नागरिकशास्त्र का शिक्षक शिक्षण प्रक्रिया को सफल तथा सुबोध बना सकता है जिसमें बालक स्वेच्छानुसार अध्ययन करके अपनी ज्ञान पिपासा को शान्त कर सकता है। छात्रों में इस रीति के द्वारा उन सामाजिक गुणों और आदतों का निर्माण किया जा सकता है जो आदर्श नागरिकता की प्राप्ति में सहायक सिद्ध

होंगी। परंतु इस रीति का उपयोग नागरिकशास्त्र का शिक्षक सफलतापूर्वक तभी कर सकता है जब उसके पास प्रयोगशाला तथा पुस्तकालय की सुव्यवस्था हो।

—: ० :—

प्रश्न

1. What are the techniques of Teaching Civics ? Discuss.
2. "The acquisition of a good style of questioning may be laid down definitely as one of the essential ambitions of a young teacher." Examine the statement, bringing out clearly the essentials of good questioning.

अध्याय १३

शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुतीकरण (Presentation of Civics at Different Stages)

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षा के विभिन्न स्तरों का निम्नलिखित आदर्श प्रस्तुत किया है—

- (१) प्राइमरी स्तर—(६—११ वर्ष) इस स्तर में ५ कक्षाएँ रखी हैं।
- (२) जूनियर हाई स्कूल स्तर अथवा पूर्व माध्यमिक स्तर—(११+—१४ वर्ष) इस स्तर में कक्षा ६, ७ तथा ८ आती हैं।
- (३) उच्चतर माध्यमिक स्तर—(१४+—१७ वर्ष) इस स्तर के अन्तर्गत ९, १० तथा ११ वीं कक्षाएँ आती हैं।
- (४) विश्वविद्यालय स्तरीय शिक्षा—इसमें प्रथम डिग्री कोर्स, मास्टर डिग्री कोर्स तथा अनुसन्धान कार्य आते हैं।

नागरिकशास्त्र का शिक्षण प्रथम तीन स्तरों पर किया जाता है। इसका प्रस्तुतीकरण करते समय निम्नलिखित सामान्य सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिये—

- (१) नागरिकशास्त्र का जो भी तथ्य छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जाय वह सुनिश्चित तथा बोधगम्य होना चाहिए।

(२) नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु को प्रस्तुत करते समय शिक्षक को सदैव छात्रों की आयु, उनके मानसिक स्तर, विकास, आवश्यकताओं तथा रुचियों का ध्यान रखना चाहिये। यदि शिक्षक इनका ध्यान नहीं रखेगा तो वह सफलता के साथ विषय-वस्तु को प्रस्तुत नहीं कर सकेगा।

(३) नागरिकशास्त्र के जिन नियमों तथा सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया जाय उनकी व्यावहारिकता पर बल अवश्य दिया जाना चाहिये। इसके अभाव में उनका कोई मूल्य नहीं है। छात्र अनुकरण के द्वारा बहुत कुछ सीखते हैं। नागरिकशास्त्र के शिक्षक का यह परम कर्तव्य है कि वह अपने छात्रों के समक्ष आदर्श आचरण प्रस्तुत करे जिससे उनका अनुकरण करके वे अपने को आदर्श बनाने में सफल हो सकें।

(४) नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का जीवन की ठोस परिस्थितियों से सम्बन्ध स्थापित किया जाय जिससे छात्र बाह्य जीवन का ज्ञान उपलब्ध कर सकें।

(५) निरर्थक तथा जटिल बातों का विस्तृत शिक्षण दूर किया जाय; अर्थात् 'सरल से कठिन की ओर' नामक सूत्र को अपनाकर नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु को प्रस्तुत किया जाय। वही तथ्य छात्रों को सर्वप्रथम दिये जाने चाहिये जो उसके निकटवर्ती हैं फिर क्रमशः उससे दूर के तथ्य प्रदान किये जायें।

प्राइमरी स्तर पर नागरिकशास्त्र का प्रतिपादन

इस स्तर के छात्र कहानी कहना तथा सुनना अधिक पसंद करते हैं। नागरिकशास्त्र के जिन आदर्शों को छात्रों में विकसित करना है वह कहानियों के द्वारा ही विकसित किये जायें। कहानियाँ वे ही चुनी जायें जो क्रियाशील हों; अर्थात् जिनके द्वारा छात्रों को सक्रिय बनाया जा सके क्योंकि इस स्तर के छात्र क्रियाशील रहना पसन्द करते हैं; इस स्तर के बालकों का मानसिक स्तर विकसित नहीं होता है, इसलिये वे ही कहानियाँ चुनी जायें जो बालकों के मानसिक स्तरों तथा रुचियों के अनुकूल हों। ये कहानियाँ ऐतिहासिक व्यक्तियों की तथा काल्पनिक भी हो सकती हैं। इस स्तर पर पाठ्य-पुस्तक का प्रयोग बहुत कम किया जाय। यदि किया भी जाय तो उनकी पाठ्य-पुस्तकें सचित्र होनी चाहिये। कहानी कहने में शिक्षक को सरल भाषा तथा छोटे वाक्य-विन्यास प्रयोग में लाने चाहिये। इस स्तर पर छात्रों को अधिक से अधिक व्यावहारिक शिक्षा देने का प्रयत्न करना चाहिए। छात्रों में जिन गुणों तथा आदतों का निर्माण किया जाय वे व्यावहारिक रूप से को जायें। यदि अनुशासन का गुण विकसित करना है तो उन्हें शाब्दिक उदाहरण देने की अपेक्षा उन्हें कृषि कार्य करने के

लिए पंक्ति में भेजा जाय तथा प्रार्थना आदि के समय पंक्ति में संतुलित ढंग से खड़ा किया जाय। ड्रिल आदि कार्यों के द्वारा उन्हें अनुशासित किया जा सकता है।

इन कहानियों को बोधगम्य तथा बालकों के ध्यान को आकर्षित करने के लिए सहायक-सामग्री का उपयोग करना चाहिए। शिक्षक इसमें चित्रों, मॉडल तथा मानचित्र आदि का उपयोग कर सकता है। इस स्तर पर जो चित्र दिखाए जायें वे क्रिया युक्त होने चाहिए। इनका चयन करते समय शिक्षक को सतर्क रहना चाहिए क्योंकि यदि वह भद्दे चित्रों का चयन करता है तो उनका बुरा प्रभाव पड़ेगा। जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं कि इस स्तर के छात्रों में अनुकरण प्रवृत्ति अधिक होती है। इस स्तर पर श्यामपट का भी प्रयोग किया जाना चाहिए। कहानी की मुख्य बातों, नामों, उच्चारण तथा सारांश के लिए इसका प्रयोग किया जाय। इस पर शिक्षक मोटा तथा एक-सा लिखे जिससे छात्रों को दिखलाई पड़े। इस स्तर के शिक्षक को अपना लेख सुन्दर बनाना चाहिए। यह स्तर वह आधारशिला है जिस पर बालक के भावी जीवन की नींव डाली जाती है। यदि शिक्षक का लेख भद्दा है तो वे भी उसका अनुकरण करेंगे जो उनके विकास के लिए हानिकारक होगा। शिक्षक को अपने आचरण के द्वारा छात्रों के सम्मुख आदर्श प्रस्तुत करना चाहिये जिससे वे उनका अनुकरण करके अपना आदर्श बना लें। शिक्षक को मेले, हाट, आदि का पर्यावलोकन कराना चाहिये।

जूनियर हाई-स्कूल स्तर पर नागरिकशास्त्र का प्रतिपादन

इस स्तर के छात्र किशोरावस्था के निकट पहुँचने लगते हैं। उनकी स्मरण शक्ति, अनुभव, तर्क-शक्ति तथा निर्णयशक्ति का विकास पर्याप्त मात्रा में होने लगता है। इस स्तर के छात्र वास्तविकता में अधिक आस्था रखते हैं। वे उसी सिद्धान्त या तथ्य को ग्रहण करते हैं जो उपयोगी होते हैं। इस प्रकार इस स्तर का छात्र यथार्थवादी होता है। इसमें प्राइमरी स्तर के छात्रों की अपेक्षा काल्पनिकता कम होती है। प्राइमरी स्तर के बालक में कौतूहल अथवा काल्पनिकता अधिक होती है। इस स्तर के छात्रों का व्यावहारिक ज्ञान भी बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त उनका शब्द ज्ञान भी विस्तृत होता है। इन सब स्थितियों को ध्यान में रखकर नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुतीकरण किया जाना चाहिये।

जैसा कि हम ऊपर देख चुके हैं कि प्राइमरी स्तर का बालक कहानी

कहना तथा सुनना पसन्द करता है और इस स्तर पर कहानी पद्धति को अपनाना लाभदायक होता है। परन्तु जूनियर स्तर पर इस पद्धति का पूर्णतया त्याग नहीं करना चाहिये बल्कि इसका प्रयोग यथास्थान करते रहना चाहिये तथा इसके साथ नागरिकशास्त्र के शिक्षक को निरीक्षणात्मक, कथनात्मक, प्रश्नोत्तर रीति, अभिनयात्मक, योजना (प्रोजेक्ट) आदि विधियों का भी प्रयोग करना चाहिये। शिक्षक को पंचायतघर, उसकी कार्यविधि, नगरपालिका की कार्य विधि आदि का निरीक्षण कराना चाहिये जिससे छात्र उनका पूर्णतया ज्ञान प्राप्त कर सकें और उन्हें बाह्य जगत का भी अनुभव प्राप्त हो सकेगा।

इस स्तर पर पाठ्य-पुस्तकों का उपयोग किया जाना चाहिये। इस स्तर की पाठ्य-पुस्तक में शाब्दिक तथा प्रदर्शनात्मक दोनों प्रकार के उदाहरणों का उपयोग किया जाना चाहिये। पाठ्य-पुस्तक के अतिरिक्त छात्रों को अन्य सहायक पुस्तकों के अध्ययन के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये। इस स्तर पर भी प्रायोगिक कार्य जारी रहेगा जिससे छात्र आदर्शों की प्राप्ति स्वयं कर सकें।

इस स्तर पर भी सहायक सामग्री का उपयोग किया जाना चाहिये। श्यामपट का उपयोग प्राइमरी स्तर की अपेक्षा अधिक किया जायगा। शिक्षक इसका उपयोग रेखाचित्र, मानचित्र, सारांश, प्रश्न, पाठ या प्रकरण की रूप-रेखा, लाक्षणिक चित्र आदि के लिये कर सकता है। श्यामपट का उपयोग छात्रों के द्वारा भी करवाया जाय। इसके अतिरिक्त चित्रों, मॉडल, मानचित्र तथा रेखाचित्रों का भी उपयोग पाठ्य-सामग्री को बोधगम्य तथा स्पष्ट करने के लिये किया जाना चाहिये। इस स्तर के चित्रों में भी क्रियाशीलता होनी चाहिये। इस स्तर पर छात्रों के द्वारा चित्र, मानचित्र, मॉडल आदि बनवाये जायेंगे जिससे वे सक्रिय रहें तथा उनका कक्ष भी सुसज्जित हो सके। जूनियर-स्कूल के छात्रों के लिये रेडियो, फिल्म आदि का भी प्रयोग किया जाना चाहिये।

इस स्तर के छात्रों को गृहकार्य भी दिया जाना चाहिये। परन्तु यह उनकी रुचि तथा योग्यता के अनुसार दिया जाना चाहिये। यदि ऐसा नहीं किया जायगा तो उसका प्रभाव हानिकारक होगा। अध्यापक उनके गृहकार्य को जाँचे और उनकी त्रुटियों को सुधारने के लिए आदेश दे। श्यामपट सारांश को विकसित भी करवाया जा सकता है। इससे उनकी अभिव्यंजना शक्ति का विकास होगा तथा अपने विचारों को क्रमबद्ध करना सीख जायेंगे।

माध्यमिक स्तर पर नागरिकशास्त्र का प्रतिपादन

इस स्तर पर बालक किशोरावस्था में पदार्पण करता है। उसमें समस्त दृष्टिकोणों से पर्याप्त अन्तर आ जाता है। उसका मानसिक, शारीरिक, सामा-

जिक, नैतिक, शब्द-ज्ञान आदि सभी का विकास हो जाता है। इस स्तर का बालक स्वयं क्रिया करके किसी निर्णय पर पहुँचना चाहता है। इस स्तर को नियमीकरण की अवस्था भी कहते हैं। वह अपने व्यक्तित्व को प्रदर्शित करना चाहता है, इसके लिए वह समाज में अपने को अभिस्वीकार करवाना चाहता है। इन समस्त तथ्यों को ध्यान में रखकर हमें नागरिकशास्त्र की उपयुक्त पाठ्य सामग्री प्रस्तुत करनी चाहिए। इस स्तर पर शिक्षक को कथनात्मक प्रणाली, वाद-विवाद प्रणाली, समस्या विधि तथा इकाई विधि को अपनाना चाहिये। बालकों को प्रश्न पूछने, तर्क करने को भी उत्साहित करना चाहिये। इन विधियों के अपनाने से वह स्वक्रिया द्वारा विश्लेषण तथा स्वयं नियमीकरण कर सकेगा।

इस स्तर पर पाठ्य-पुस्तक का उपयोग अनिवार्य है जिससे छात्र अपनी इकाई की रूपरेखा बनाने तथा निर्धारित कार्य को पूर्ण करने में सहायता ले सकें। इसके अतिरिक्त उनमें स्वाध्ययन की आदत का निर्माण करने के लिये विभिन्न सहायक पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं तथा सूत्र पुस्तकों के पढ़ने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये। यह कार्य शिक्षक के निरीक्षण में होना चाहिये। शिक्षक प्रयोगशाला या पुस्तकालय में उनका पथ-प्रदर्शन करे और वैयक्तिक कठिनाइयों को सुलभाये। गृहकार्य भी ऐसा देना चाहिये जिससे उसको पूर्ण करने में छात्र अन्य पुस्तकों की सहायता लें।

व्यवस्थित तथा अव्यवस्थित वाद-विवाद समय-समय पर करवाये जायें जिससे उनकी अभिव्यंजना, तर्क तथा निर्णय शक्तियों का विकास हो सके। इस स्तर पर विभिन्न संगठनों की कार्यविधियों के नकली अधिवेशन छात्रों द्वारा करवाये जाने चाहिये। इसके अतिरिक्त इस स्तर पर विभिन्न प्रदर्शनात्मक उदाहरणों का प्रयोग किया जाय। इस स्तर पर शिक्षक विवृति तथा शाब्दिक और लाक्षणिक उदाहरणों की सहायता से अपनी पाठ्य-वस्तु को बोधगम्य तथा स्पष्ट कर सकता है। इस स्तर पर साधारण चित्रों का प्रयोग किया जाय परन्तु ये ऐसे होने चाहिये जिनमें बालक को अपनी विचार-प्रक्रिया का उपयोग करना पड़े। रेखाचित्र, चार्ट, मॉडल आदि का भी प्रयोग किया जाना चाहिए। इसके साथ ही इनका निर्माण छात्रों द्वारा करवाया जाय।

इस स्तर पर रेडियो, फिल्म, टेपरिकार्डर, समाचार पत्र, कार्टून आदि का भी उपयोग पर्याप्त मात्रा में किया जाना चाहिये क्योंकि इस स्तर के शिक्षक का मुख्य कर्तव्य यह है कि वह अपने छात्रों को तात्कालिक घटनाओं से परिचित कराये। इनके ज्ञान के बिना छात्र अपने को आदर्श नागरिक बनाने में सफल नहीं हो सकेंगे तथा अपने समाज का भी पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकेंगे।

इनके ज्ञान से शिक्षक छात्रों को, समाज तथा विश्व के प्रति उनके क्या कर्त्तव्य हैं तथा उनको ऐसी परिस्थितियों में क्या करना चाहिये, आदि तथ्यों से अवगत कराता है। इस स्तर पर श्याम पट का भी प्रयोग पर्याप्त रूप से किया जाना चाहिये।



प्रश्न

1. How will you make use of black-board at different stages in Civics ? Discuss fully.
2. What principles would you bear in mind in the presentation of Civics at different stages ? Discuss.
3. What is the value of class discussion and supervised study at the Secondary Stage ?

अध्याय १४

नागरिकशास्त्र के शिक्षण में सहायक सामग्री (Material Aid in the Teaching of Civics)

प्रगतिशील शिक्षा में बालक को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। प्राचीन काल में शिक्षक अपने मुख के द्वारा ज्ञान को बालकों के कानों तक पहुँचाता मात्र था। परन्तु इस प्रगतिशील विचारधारा के अनुसार बालक सक्रिय होकर शिक्षा प्राप्त करता है। चूँकि ज्ञानेन्द्रियाँ ज्ञानार्जन के मुख्य द्वार हैं, अतः इन द्वारों को सक्रिय रखने के लिये विभिन्न विधियाँ अपनाई जाती हैं जिनके द्वारा बालक स्वक्रिया करके सीख सके। जैसा कि हम अध्याय ५ में देख चुके हैं कि विधि वह सत्य मार्ग है जिसके द्वारा मानव अपने निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचने में समर्थ होता है। विधि को सफल तथा रोचक बनाने के लिये हम विभिन्न साधनों का प्रयोग करते हैं, ये विभिन्न साधन ही शिक्षण की सहायक सामग्री कहलाते हैं। सहायक सामग्री शिक्षा के वे साधन हैं जिनके द्वारा छात्रों के लिये दुर्बोध विषय को सरल, सुबोध तथा रोचक बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त इन साधनों के प्रयोग से छात्रों के अवधान को पाठ्य-वस्तु की ओर आकर्षित करके बालक को क्रियाशील बनाया जाता है जिससे वह सक्रिय रहकर ज्ञानार्जन कर सके। नागरिक शास्त्र के शिक्षण में उपयोग होने वाली सामग्री को हम निम्नलिखित विभागों में विभाजित कर सकते हैं :—

(अ) परम्परागत सहायक सामग्री :—पाठ्य-पुस्तक, श्यामपट आदि ।

(ब) प्रदर्शनात्मक सहायक सामग्री :—वास्तविक वस्तु, मॉडल, चित्र, चार्ट, रेखाकृति, मानचित्र, सूचना-पट आदि ।

(स) श्रव्य-दृश्य सामग्री :—रेडियो, फिल्म आदि ।

(अ) परम्परागत सहायक सामग्री

(क) पाठ्य-पुस्तक :—भारतीय शिक्षालयों में पाठ्य-पुस्तक को बहुत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है । पाठ्य-पुस्तक के माध्यम से छात्र विभिन्न विद्वानों के संचित विचारों को प्राप्त करते हैं । शिक्षक का यह महत्वपूर्ण साधन है जिसके द्वारा वह ज्ञानार्जन करा सकता है । पाठ्य-पुस्तक के विरुद्ध विद्वानों का मत है कि इस साधन के द्वारा छात्रों में रटने की प्रवृत्ति विकसित की जाती है । उन्हें स्वतंत्र तथा स्वस्थ चिन्तन, तर्क तथा निर्णय करने की लिये अवसर प्राप्त नहीं होते हैं । इन तर्कों में सत्यता अवश्य प्रतीत होती है परन्तु ये दोष उसके दुरुपयोग के कारण उत्पन्न होते हैं । पाठ्य-पुस्तक की आवश्यकता हमें यहाँ तक कि ड्यूवी तथा मौरिसन की योजना तथा इकाई पद्धतियों में भी होती है । इकाई की पूर्ण तैयारी के लिये पाठ्य-पुस्तक अत्यन्त आवश्यक है । हर्ल आर० डंगलस (Harl R. Douglgs) ने पाठ्य-पुस्तकों के महत्व को इस प्रकार प्रदर्शित किया है, “शिक्षकों के बहुमत ने अंतिम विश्लेषण के आधार पर पाठ्य-पुस्तक को ‘वे क्या और किस प्रकार पढ़ावेंगे’ का आधार शिला बतलाया है ।” दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि शिक्षकों के द्वारा क्या तथा किस प्रकार पढ़ाया जाय, इन सब का आधार पाठ्य-पुस्तक ही है । (“In the last analysis, with great majority, the text book is a potent determinant of what and how they will teach.”) प्रो० बॉर (Barr) तथा बर्टन (Burton) ने पाठ्य-पुस्तक के महत्व के विषय में कहा है कि—“संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में पाठ्य-पुस्तक एक महत्वपूर्ण शैक्षिक साधन है ।” (“The text book is probably the most important educational tool in this country. [U. S. A.]”) यदि यह बात अमेरिका के विषय में सत्य है तो हम कह सकते हैं कि यह भारतवर्ष के लिये बहुत ही सत्य है ।

भारतीय पाठ्य-पुस्तकों की स्थिति बड़ी शोचनीय है । यद्यपि भारतीय शैक्षिक कार्य-क्रम में पाठ्य-पुस्तकों को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है । इनकी शोचनीय अवस्था के विषय में शिक्षा माध्यमिक आयोग (Secondary Education Commission) का विचार है कि—“हम आधुनिक स्कूलों की

पाठ्य-पुस्तकों के स्तर से बहुत ही असंतुष्ट हैं और हमारा विचार है कि इनमें आमूल सुधार किये जाने चाहिये।" ("We are greatly dissatisfied with the present standard of production of school books and consider it essential that this should be radically improved.")

हमारे शिक्षालयों की पाठ्य-पुस्तकों का एक मुख्य दोष यह है कि उनकी तैयारी शिक्षण-विधि के अनुसार नहीं की जाती। जिस शिक्षण-विधि को स्कूल में अध्यापकों द्वारा अपनाया जाय उसी के अनुसार पुस्तक में पाठ्य-वस्तु चयन करके प्रस्तुत की जाय तथा उसकी व्यवस्था अध्यायों तथा पाठों में विधि के अनुसार होनी चाहिये। उदाहरणार्थ—यदि शिक्षालय में इकाई विधि को अपनाया गया है तो पुस्तकें इसी विधि के अनुसार लिखी जायँ जिससे अध्यापक तथा छात्र दोनों इकाई के पूर्ण करने में पाठ्य-पुस्तक का उपयोग सफलतापूर्वक कर सकें। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि पाठ्य-पुस्तक इकाई विधि के आधार पर लिखी जाय। यहाँ तक कि पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुतीकरण भी शिक्षण-विधि के अनुसार होना चाहिये। इन समस्त आवश्यक बातों का हमारे शिक्षा नयों के विधियों की पाठ्य-पुस्तकों में अभाव है।

पाठ्य-पुस्तक की तैयारी में पाठ्य-वस्तु का चयन, व्यवस्था आदि भी एक समस्या है। पाठ्य-वस्तु का चयन तथा व्यवस्था छात्रों के मानसिक स्तर, आयु, रुचि तथा योग्यता के अनुसार होनी चाहिये। परन्तु हमारे स्कूलों की पाठ्य-पुस्तकों में इसका अभाव पाया जाता है। इस अभाव को दूर करने के लिये लेखक को पाठ्य-वस्तु के चयन तथा संगठन के सिद्धान्तों का जानना अनिवार्य है। इसके साथ ही लेखक योग्य तथा अनुभवहीन नहीं होना चाहिये वरन् उसे बालमनोविज्ञान, बालविकास के सिद्धान्तों, शिक्षण-विधियों तथा अनुसंधान कार्य का भी ज्ञान हो।

पाठ्य-पुस्तक के लिखने में भाषा तथा शैली की भी एक समस्या है। किस प्रकार पाठ्य-वस्तु को प्रस्तुत किया गया है। हमारी पाठ्य-पुस्तकों में यह समस्या बहुत ही प्रबल है। भाषा तथा शैली का प्रयोग छात्रों के मानसिक स्तर तथा उनके शाब्दिक ज्ञान के अनुसार होना चाहिये। पाठ्य-पुस्तक में सरल तथा सीधे वाक्यों का प्रयोग किया जाना चाहिये। छोटी कक्षाओं के बालकों की पाठ्य-पुस्तकों में जटिल वाक्य नहीं होने चाहिये। दूसरे, पाठ्य-पुस्तक में सरल, छोटे तथा सुव्यवस्थित परिच्छेदों का प्रयोग किया जाना चाहिये। तीसरे, छोटी कक्षाओं की पाठ्य-पुस्तकों में कठिन शब्दों का प्रयोग कम किया जाय।

पाठ्य-पुस्तक के निर्माण में उदाहरणों का समुचित रूप से प्रयोग होना चाहिये । परन्तु भारतीय पाठ्य-पुस्तकों में यह एक दोष है, उनमें इनका उचित प्रयोग नहीं किया जाता । इनका भी उपयोग छात्रों की रुचि, अवस्था तथा योग्यता के अनुसार होना चाहिये । इसके अतिरिक्त पाठ्य-वस्तु की दुर्बोधता तथा उपयुक्तता के अनुसार इनका उपयोग होना चाहिये । इनका महत्त्व तभी प्राप्त किया जा सकता है जब ये छात्रों के ज्ञानार्जन में सहायता प्रदान करें । इनका उपयोग करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिये तभी इनका वास्तविक लाभ प्राप्त किया जा सकता है :—

(१) दिये गये उदाहरण सरल हों ।

(२) प्रदर्शनात्मक उदाहरण उपयोगी तथा प्रभावशाली रंगों में प्रस्तुत किये जायें और उनकी संख्या भी पर्याप्त होनी चाहिये । रंगों का उपयोग छात्रों की अवस्था, रुचि तथा मानसिक स्तर के अनुसार होना चाहिये ।

(३) उनके द्वारा तथ्य स्वयं प्रस्तुत किये जायें, अर्थात् आत्म-प्रदर्शित होने चाहिये । इसमें शिक्षक को बताने की कोई आवश्यकता न पड़े ।

(४) छात्रों के लिये उपयुक्त तथा उपयोगी हों ।

(५) छात्रों को उनके द्वारा वाद-विवाद के लिये प्रोत्साहित किया जाय जिससे उनका शाब्दिक ज्ञान तथा अभिव्यञ्जना शक्ति विकसित की जा सके ।

(६) उनमें कलात्मक सौन्दर्य को भी स्थान दिया जाय जिससे उनकी सौन्दर्यानुभूति करने की शक्ति को विकसित किया जा सके ।

हमारी पाठ्य-पुस्तकों का एक दोष यह भी है कि उनकी आकृति तथा शैक्षिक साधन उचित प्रकार के नहीं हैं । पुस्तक की बाह्य आकृति भी बालक की रुचि, योग्यता तथा अवस्था के अनुसार होनी चाहिये । शैक्षिक साधन अर्थात् अभ्यास के लिये प्रश्न, उपयोगी सहायक पुस्तकें, अनुक्रमणिका आदि भी छात्रों की योग्यता के अनुसार होनी चाहिये ।

नागरिकशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक के चयन में शिक्षक को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिये :—

(१) पाठ्य-पुस्तक की बाह्य-आकृति :—टाइप, जिल्द, कागज, पंक्तियों की संख्या, शब्दों के बीच की दूरी, आकार, मारजिन की चौड़ाई, प्रदर्शनात्मक सामग्री, अनुक्रमणिका, सहायक पुस्तकें आदि ।

(२) विषय सूची :— उनकी ग्राह्यता, महत्त्व तथा क्षेत्र ।

(३) प्रस्तुतीकरण :—

(i) जिसके द्वारा छात्रों में पढ़ने की आदतों का निर्माण तथा कुशलताओं का विकास हो ।

- (ii) दूसरे विषयों की पाठ्य-सामग्री से सह-सम्बन्ध स्थापित करता हो ।
- (iii) वर्ग तथा वैयक्तिक विभिन्नताओं के उपयुक्त हो ।
- (iv) निर्देशित अध्ययन के लिये अवसर प्रदान करने वाला हो
- (v) छात्रों की रुचि को विषय के प्रति जागृत करे ।
- (vi) सीखने के नियमों के अनुकूल हो ।
- (vii) शिक्षण सूत्रों (Maxims) के अनुसार हो ।

(४) शैक्षिक साधन :—अभ्यास के लिये प्रश्न, निर्देश तथा सहायक पुस्तकों की सूची, जाँच, प्रस्तावना आदि ।

(५) उदाहरण :—शाब्दिक तथा प्रदर्शनात्मक उदाहरण, उनकी उप-मुक्तता तथा पर्याप्त संख्या ।

(६) उद्देश्य :—

- (i) शिक्षा के उद्देश्यों से सामंजस्य ।
- (ii) नागरिक गुणों तथा आदतों का निर्माण ।
- (iii) प्रजातन्त्रीय आदर्शों तथा मूल्यों का ज्ञान ।
- (iv) उत्तरदायित्व की भावना का विकास ।
- (v) दूसरों के अधिकारों के प्रति आदर तथा सम्मान की भावना का विकास ।

(vi) छात्रों को विभिन्न अनुभवों को प्रदान करना ।

(vii) सामाजिक गुणों का विकास करना जिससे वे समाज में अपना उपयुक्त स्थान ग्रहण कर सकें तथा आदर्श समाज स्थापित करने की भी सामर्थ्य प्रदान की जाय ।

(viii) मानवीय आदर्शों को प्राप्त करने की शक्ति प्रदान करना जिससे वे मानव समाज के उपयोगी सदस्य बन सकें तथा विश्व में शान्ति स्थापित करने में सहायता प्रदान कर सकें ।

(७) पाठ्य-वस्तु की व्यवस्था :—

- (i) छात्रों की रुचि, अवस्था तथा योग्यता के अनुकूल ।
- (ii) समस्याओं के अनुकूल व्यवस्था की जाय ।
- (iii) पाठ्य-सामग्री में मनोवैज्ञानिक क्रम स्थापित किया जाय ।

(८) लेखक :—उसका अनुभव तथा प्रसिद्धि, योग्यता तथा प्रकाशन, और मनोविज्ञान का ज्ञान (विशेषतः बालमनोविज्ञान) तथा प्रशिक्षण अर्थात् प्रगतिशील विचारधाराओं तथा शिक्षण-विधियों का ज्ञान होना आवश्यक है ।

(९) पुस्तक का मूल्य ।

नागरिकशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक कैसी हो ?

नागरिकशास्त्र की उत्तम पाठ्य-पुस्तक में निम्नलिखित गुण होने चाहिये—

(१) पुस्तक की बाह्य-आकृति सुन्दर हो। प्रारम्भिक स्तर की पाठ्य-पुस्तक चित्रमय होनी चाहिये क्योंकि इस अवस्था के बालक रंग बिरंगे चित्रों को पसन्द करते हैं। माध्यमिक स्तर की पाठ्य-पुस्तक की आकृति सरल तथा साधारण होनी चाहिये।

(२) पुस्तक की जिल्द सुदृढ़ होनी चाहिये।

(३) पुस्तक में चिकना कागज प्रयुक्त किया जाय। यदि उसमें प्रदर्शनात्मक सामग्री का उपयोग किया जा रहा है तो उसमें आर्ट पेपर का प्रयोग किया जाना चाहिये। पुस्तक का टाइटल छात्रों की अवस्था के अनुसार हो। छपाई साफ तथा शुद्ध होनी चाहिये। प्रारम्भिक छात्रों की पाठ्य-पुस्तकों में मोटा टाइटल प्रयुक्त किया जाय जिससे पढ़ने में छात्रों की आँखों पर जोर न पड़े।

(४) पुस्तक में पाठ्य-वस्तु निर्धारित पाठ्य-क्रम के अनुसार पूर्ण हो।

(५) जिस स्तर के लिये पाठ्य-पुस्तक हो उसकी पाठ्य-वस्तु उस स्तर के शिक्षण के उद्देश्यों अथवा लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक हो। नागरिकशास्त्र के शिक्षण का मुख्य लक्ष्य आदर्श नागरिक उत्पन्न करना है। इसके लिये उसकी पाठ्य-वस्तु ऐसी होनी चाहिये जिससे उनमें उत्तरदायित्व पूर्ण करने की भावना, सहयोग, सहनशीलता, नेतृत्व, धैर्य, आदि गुणों का विकास हो जाय।

(६) पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुतीकरण ऐसे ढंग से किया जाय जिससे बालकों में समस्याओं को हल करने की योग्यता स्वतः आ जाय तथा पढ़ने की आदतों और कुशलताओं का निर्माण हो जाय।

(७) पुस्तक की प्रस्तावना ऐसी हो जिसे देखकर पाठक उसके गुणों तथा पाठ्य-विषयों के विषय में संक्षिप्त ज्ञान प्राप्त कर सकें।

(८) विषय का संगठन इस प्रकार होना चाहिए जिससे छात्रों को दूसरे विषयों की सानुबन्धता का ज्ञान हो जाय। पुस्तक का संगठन समीपवर्ती सिद्धान्त के अनुसार हो।

(९) भाषा तथा शैली छात्रों के अनुकूल होनी चाहिये।

(१०) माध्यमिक स्तर की पाठ्य-पुस्तक प्रकरणों, इकाईयों, समस्याओं तथा योजनाओं के रूप में होनी चाहिये।

(११) पुस्तक में चित्रों, चार्ट, ग्राफ, मानचित्र आदि का भी प्रयोग किया जाय। अधिकार-सम्बन्धी लगावों को समझाने के लिये संगठन चार्ट नागरिक-शास्त्र की पाठ्य-पुस्तक में प्रयुक्त किये जायें।

(१२) प्रत्येक पाठ, अध्याय या प्रकरण के अन्त में अभ्यास के लिये कुछ प्रश्न दिये जाने चाहिये जिससे छात्र उनका उपयोग कर सकें।

(१३) सहायक तथा निर्देश पुस्तकों की सूची दी हुई हो। परन्तु इनमें उन्हीं पुस्तकों को स्थात प्राप्त होना चाहिये जो छात्रों के लिये उपयुक्त हैं। अनुक्रमणिका का होना भी अनिवार्य है।

(१४) अन्त में, पाठ्य-पुस्तक का मूल्य भी कम होना चाहिए।

(ख) श्यामपट :—यह शिक्षण का एक महत्वपूर्ण साधन है जिसके द्वारा नागरिक शास्त्र का शिक्षक छात्रों की दो ज्ञानेन्द्रियों को एक साथ क्रियाशील बनाये रख सकता है। जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं, ज्ञानेन्द्रियाँ ही ज्ञानार्जन के द्वार हैं जिनके द्वारा बालक ज्ञान प्राप्त करता है। आधुनिक युग में श्यामपट शिक्षक की ही सम्पत्ति नहीं रही है बल्कि यह शिक्षक तथा छात्र दोनों की सम्पत्ति बन गई है। नागरिकशास्त्र का शिक्षक इसका प्रयोग निम्नलिखित बातों के लिए कर सकता है :—

- (१) किसी नाम या शब्द को महत्व देने के लिए।
- (२) सारांश देने के लिये।
- (३) योजना की रूपरेखा लिखने के लिये।
- (४) किसी वस्तु या तथ्य का सम्बन्ध स्पष्ट करने के लिये।
- (५) पुनर्विलोकन के लिये।
- (६) किसी वस्तु के क्रम या व्यवस्था को स्पष्ट करने के लिये।
- (७) चार्ट, ग्राफ, रेखाकृति, लाक्षणिक उदाहरण प्रदर्शित करने के लिये।
- (८) किसी वस्तु या तथ्य का वर्गीकरण दिखाने के लिये।
- (९) नियम लिखने के लिये।
- (१०) मुख्य निर्देश देने के लिये।
- (११) विषय-सूची प्रस्तुत करने के लिये।
- (१२) महत्वपूर्ण प्रश्न पूछने के लिये।

नागरिक शास्त्र के शिक्षक को श्यामपट का प्रयोग करते समय निम्न-लिखित बातों का ध्यान रखना चाहिये :—

(१) श्यामपट पर सुन्दर तथा एक-सा लिखना चाहिए। इसके अतिरिक्त जो भी बात वह श्यामपट पर लिखे वह क्रम में होनी चाहिये जिससे छात्रों में भी क्रम में लिखने की आदत बन जाय।

(२) श्यामपट पर लिखे शब्दों का आकार ऐसा होना चाहिये जिनको समस्त कक्षा आसानी से देख सके। उसे छोटे-छोटे शब्द नहीं लिखना चाहिये।

(३) शिक्षक को लिखते समय श्यामपट को ढक नहीं लेना चाहिये बल्कि उसे ४५° के कोण पर खड़ा होकर लिखना चाहिये। यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो कक्षा में अनुशासनहीनता आने के अवसर उत्पन्न हो जायेंगे।

(४) शिक्षक को श्यामपट पर लिखने के पश्चात् एक ओर खड़ा होना चाहिये अथवा कक्षा का निरीक्षण करना चाहिये और उनकी वैयक्तिक कठिनाइयों को सुलझाना चाहिये जिससे प्रत्येक बालक उस लिखी हुई वस्तु को ठीक प्रकार से देख सके।

(५) जो कुछ भी शिक्षक श्यामपट पर लिखे उसे अपने मुख से साथ-साथ बोलता चले।

(ब) प्रदर्शनात्मक सहायक सामग्री

(क) वास्तविक पदार्थः—१९ वीं शताब्दी के अन्त में वास्तविक पदार्थों के प्रयोग के ऊपर बहुत अधिक बल दिया गया, क्योंकि इनके द्वारा बालकों को विश्व का ज्ञान सरलता से दिया जा सकता। इसके पक्ष में दूसरा तर्क यह दिया गया कि इनके द्वारा बालक को ज्ञानेन्द्रिय शिक्षा (Sensory Education) प्रदान की जाती है। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों के परीक्षणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि इनके द्वारा दिया हुआ ज्ञान शीघ्रता के साथ ग्राह्य कर लिया जाता है तथा वह स्थायी भी होता है और नागरिकशास्त्र के शिक्षक को इन पदार्थों का प्रयोग बहुत ही उपयोगी है, क्योंकि ये उसके शिक्षण में रोचकता प्रदान करते हैं। यदि नागरिक शास्त्र का शिक्षक संसद के विषय में शिक्षण प्रदान कर रहा है तो वह अपने छात्रों को संसद भवन का पर्यावलोकन कराकर सुगमता से ज्ञान दे सकता है। पंचायत, नगरपालिका, अन्तरिम जिला परिषद आदि का निरीक्षण कराकर उसी स्थल पर उनका ज्ञान दे सकता है। वास्तविक वस्तुओं द्वारा प्रदान किया हुआ ज्ञान बहुत ही उपयोगी सिद्ध होता है।

(ख) मॉडलः—शिक्षक को वास्तविक पदार्थों की उपलब्धि सदैव संभव नहीं होती। इस कारण उनकी प्रतिमूर्ति बनाकर या बनवाकर शिक्षक प्रयोग में ला सकता है। ये प्रतिमूर्ति मॉडल या नमूने कहलाते हैं। इसमें तीन पहलू होते हैं, जो वातें चित्र द्वारा दृश्यनीय नहीं बनायी जा सकतीं उनको मॉडल या नमूनों के द्वारा दृश्यनीय बनाया जा सकता है। इसके द्वारा छात्रों को किसी वस्तु का भीतरी तथा बाह्य दोनों आकारों का सूक्ष्म ज्ञान प्रदान किया जा सकता है। नागरिक शास्त्र का शिक्षक अपने शिक्षण में विभिन्न वास्तविक पदार्थों के मॉडल प्रयोग में ला सकता है। भारतवर्ष में बने बनाए प्रतिरूपों की बहुत कमी है। परन्तु नागरिकशास्त्र के शिक्षक को अपना अतिरिक्त

समय देकर छात्रों के द्वारा विभिन्न प्रतिरूपों (Models) का निर्माण करवाना चाहिये। इससे छात्रों की रचनात्मक प्रवृत्ति की संतुष्टि भी हो जायगी और वे स्वक्रिया द्वारा भी ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। इससे एक लाभ यह भी होगा कि नागरिकशास्त्र की प्रयोगशाला भी सुसज्जित हो जायगी और छात्र स्व-निर्मित वस्तुओं को देखकर गर्वान्वित भी होंगे। शिक्षक प्रतिरूप मिट्टी, गत्ता, प्लास्टिक आदि के बनवा सकता है।

(ग) चित्र:—वास्तविक पदार्थों के प्रतिरूप या नमूने बनाने में समय तथा धन दोनों बहुत लगते हैं। इनके अभाव को चित्रों के द्वारा पूर्ण किया जा सकता है। नागरिकशास्त्र के शिक्षक का महत्वपूर्ण उपकरण चित्र है। नागरिक-शास्त्र का शिक्षक चित्रों का प्रयोग, बालकों को वास्तविकता का ज्ञान देने, रुचि तथा प्रयास को जागृत करने, कल्पना शक्ति को उद्बुद्ध करने तथा ग्रहण शक्ति को सहायता देने के लिये कर सकता है। इनका प्रयोग कक्षा के सभी छात्रों के लिये उपयोगी है परन्तु मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि निम्न योग्यता वाले छात्रों के लिये तो ये बहुत ही लाभदायक हैं। इनके द्वारा छात्रों में विचारों की शुद्धता, स्पष्टता तथा संगठन करने की शक्ति उत्पन्न की जाती है जो प्रतियोगिता के द्वारा अच्छे प्रकार से नहीं की जा सकती। नागरिक शास्त्र के शिक्षक को चित्रों का उपयोग करने से पूर्व चित्र में निम्नलिखित गुणों को देख लेना चाहिये:—

(i) महत्व:—चित्र के द्वारा किसी महत्वपूर्ण घटना, स्थल, स्मारक आदि को स्पष्ट किया जाय। सरलता से उपलब्ध तथ्यों के लिये चित्रों का उपयोग नहीं किया जाना चाहिये।

(ii) समानुपात:—जिस किसी वस्तु या यदार्थ का चित्र प्रदर्शित करना है वह उसी के अनुपात के अनुसार चित्रित की जानी चाहिये। यदि अनुपात नहीं रखा जायगा तो चित्र बेढंगा सा प्रतीत होगा। दूसरे, चित्र में कक्षा के आकार के अनुसार भी अनुपात स्थापित किया जाना चाहिये।

(iii) शुद्धता:—चित्र के द्वारा छात्रों को शुद्धता प्रदान की जाय तथा चित्र भी शुद्ध हो। उसमें यदि भद्दापन होगा तो उसका प्रभाव छात्रों पर विपरीत पड़ेगा। इसलिये चित्र में शुद्धता का होना अनिवार्य है।

(iv) चित्र जिस कठिन बिन्दु या बात को स्पष्ट करे वह छात्रों की अवस्था तथा कक्षा के स्तर के अनुसार होनी चाहिये। यदि ऐसा नहीं किया जायगा तो चित्र द्वारा मनोवाञ्छित मनोरथ सफल नहीं हो सकेगा।

(v) स्पष्टता:—चित्र के द्वारा जिस वस्तु का प्रदर्शन किया जाना है वह स्पष्ट रूप से होना चाहिये।

(vi) **सौन्दर्यपूर्णः**—चित्र में छात्रों की अवस्था के अनुकूल रङ्ग प्रयोग में लाने चाहिये। छोटी कक्षाओं के बालक चटकीले रङ्गों के चित्रों को अधिक पसंद करते हैं और बड़ी कक्षाओं के छात्र साधारण तथा सरल चित्रों को अधिक पसंद करते हैं। इसके अतिरिक्त चित्र का क्रम आकर्षक होना चाहिये जो छात्रों की रुचि तथा ध्यान को अपनी ओर आकर्षित करे तथा उन्हें उसी के अनुसार प्रयास करने के लिये प्रोत्साहित करे। इसके साथ ही चित्र में कलात्मक सौन्दर्य की भी भूलक होनी चाहिये।

(vii) **अर्थपूर्ण चित्रः**—चित्र स्वाभाविक रूप से व्याख्यात्मक तथा निवर्चनात्मक होना चाहिये; अर्थात् इसकी व्याख्या करने के लिये शिक्षक को कुछ नहीं कहना पड़े बल्कि छात्र उसके प्रश्नों का उत्तर उसको देखकर ही देते रहें।

(viii) चित्र प्रमाणयुक्त (Authentic) होना चाहिये।

(ix) चित्र के द्वारा बालकों की विचार प्रक्रिया, तर्क तथा निर्णय शक्ति को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।

नागरिक शास्त्र का शिक्षक चित्रों का प्रयोग निम्नलिखित बातों के लिये कर सकता है:—

(१) अपने नये पाठ की प्रस्तावना को स्पष्ट करने के लिये कर सकता है। इसके अतिरिक्त किसी इकाई या प्रकरण को प्रारम्भ करने के लिये भी प्रयोग में ला सकता है।

(२) किसी कठिन या मुख्य बिन्दु अथवा तथ्य को स्पष्ट करने के लिये उपयोग में ला सकता है।

(३) अपने पाठ का विकास करने के लिये भी प्रयोग कर सकता है।

(४) अन्त में, हम कह सकते हैं कि वह छात्रों की उपलब्धि की भी जाँच चित्रों के द्वारा कर सकता है; अर्थात् वह ऐसे चित्र उपयोग में ला सकता है जिनके द्वारा पठित ज्ञान की जाँच की जा सके।

नागरिक शास्त्र के शिक्षक को चित्रों का उपयोग करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिये:—

(१) चित्र कक्षा में उपयुक्त स्थान पर ही टाँगे जायें जहाँ से प्रत्येक छात्र उनको भली प्रकार देख सकें अर्थात् छात्रों की आँखों पर उसे देखने में जोर न पड़े।

(२) चित्र टाँगते समय खड़खड़ाने का शब्द न हो।

(३) चित्र जादूगर के समान नहीं प्रदर्शित किये जायें बल्कि शिक्षक उन चित्रों पर प्रश्न करे और उन्हें देखने का अवसर प्रदान करे।

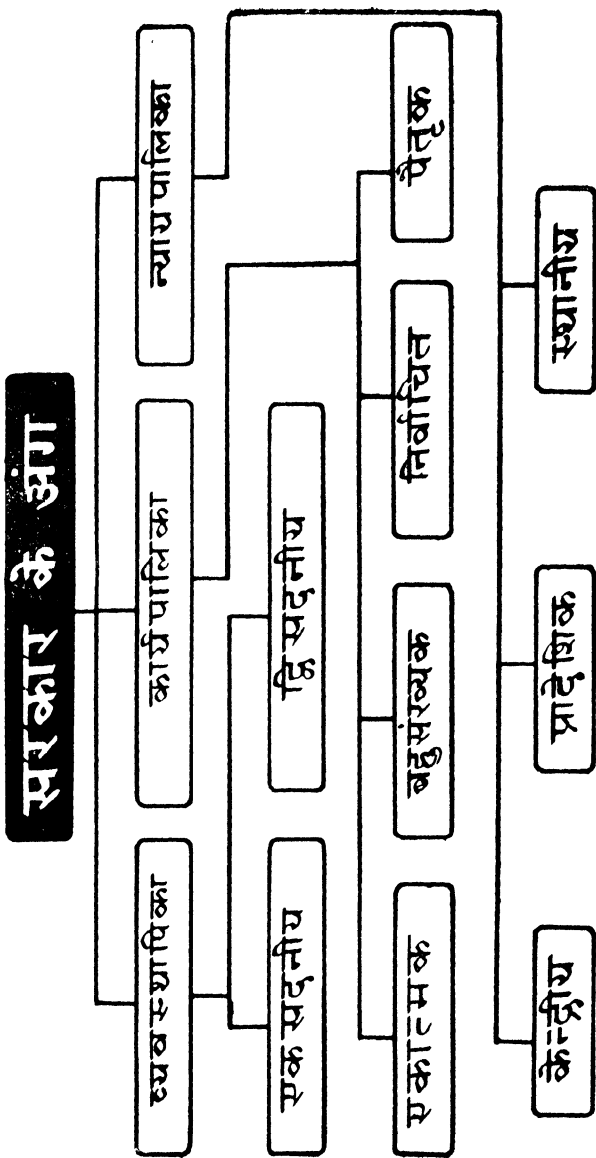
(४) चित्रों का उपयोग उपयुक्त स्थान तथा समय पर ही होना चाहिये।

चित्रों को प्रदर्शित करने के पश्चात् उनको उचित प्रकार से उतारकर उचित स्थान पर रखे । वह सदैव कक्षा में न टँगा रहे ।

(५) पुनरावृत्ति की अवस्था पर विकासात्मक चित्र नहीं रहने चाहिये ।

(घ) चार्ट—चार्ट वास्तविकता का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं बल्कि तथ्यों को लाक्षणिक रूप में प्रस्तुत करते हैं । इसके अतिरिक्त इनके द्वारा नियमों तथा सम्बन्धों को स्पष्ट किया जाता है । नागरिकशास्त्र के शिक्षण में चार्ट का महत्त्व पूर्ण स्थान है । नागरिकशास्त्र का शिक्षक इनका उपयोग कार्य-संबंधी सम्बन्धों (Functional Relationship) को स्पष्ट करने के लिये कर सकता है । इनको स्पष्ट करने के लिये वह संगठन-चार्ट प्रयोग में ला सकता है । उदाहरणार्थ—केन्द्रीय सरकार का संगठन, न्यायपालिका का संगठन, नगरपालिका का संगठन प्रादेशिक सरकार का संगठन, कार्यपालिका का संगठन, संयुक्त राष्ट्र संघ का संगठन आदि को स्पष्ट करने के लिये संगठन चार्ट प्रयोग में ला सकता है ।

(ङ) रेखाकृति—रेखाकृति चार्ट से अधिक सरल होते हैं परन्तु इनको समझाने के लिये हमें छात्रों को पहले से ही तैयार करना पड़ता है क्योंकि रेखाकृति में रेखाओं तथा प्रतीकों के द्वारा सम्बन्ध स्पष्ट किये जाते हैं । रेखाकृति के द्वारा किसी बात को संक्षिप्त रूप से प्रदर्शित किया जा सकता है । नागरिकशास्त्र में इनके उपयोग के लिये बहुत अवसर हैं—उदाहरणार्थ—अधिकार तथा कर्तव्यों को रेखाकृति के द्वारा संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है । नीचे एक सरल रेखाकृति दी जा रही है—



(च) मानचित्र—मानचित्र का नागरिकशास्त्र के शिक्षण में महत्वपूर्ण स्थान है। नागरिकशास्त्र में इसके प्रयोग के लिये बहुत अवसर उपलब्ध हैं। मानचित्रों का मुख्य ध्येय राज्यसीमा का ज्ञान, स्थानों को स्थानापन्न करना भौगोलिक सम्बन्धों को स्पष्ट करना आदि हैं। यदि नागरिकशास्त्र का शिक्षक इस साधन का उपयोग नहीं करेगा तो उसके तथ्य वायुमंडल में ही रहेंगे जो बालकों को ग्राह्य नहीं हो सकेंगे। यदि नागरिकशास्त्र का शिक्षक संयुक्त राष्ट्र संघ के विषय में पढ़ा रहा है तो उसे मानचित्र का उपयोग अवश्य करना चाहिये जिससे वह छात्रों को उन स्थानों से अवगत करा सके जहाँ उसके कार्यालय स्थित हैं। भारतवर्ष के पुनर्संज्जित राज्यों को समझाने के लिए मानचित्र का उपयोग अनिवार्य हो जाता है। जब तक वह मानचित्र का उपयोग नहीं करेगा तब तक अपने छात्रों को उनकी राज्य सीमाओं तथा राजधानियों को नहीं बता सकेगा और वे गृहण भी नहीं किए जा सकेंगे। नागरिकशास्त्र का शिक्षक अपने छात्रों से मानचित्र बनवाये और उनको अपनी प्रयोगशाला में रखे जिनका उपयोग शिक्षण में समय-समय पर किया जा सकता है।

(छ) सूचना-पट (Bulletin Board)—नागरिकशास्त्र की प्रयोगशाला का यह एक मुख्य तथा महत्वपूर्ण उपकरण है। नागरिकशास्त्र के शिक्षण को इसके द्वारा रोचक तथा ग्राह्य बनाया जा सकता है। नागरिकशास्त्र का शिक्षक सूचना-पट का उपयोग निम्नलिखित बातों के लिये कर सकता है—

- (१) सूचनाओं को अङ्कित करने के लिये।
- (२) पुस्तकों के मलट प्रदर्शित करने के लिये।
- (३) कारटून चिपकाने के लिये।
- (४) चार्ट।
- (५) ड्राइंग।
- (६) इकाइयों की रूपरेखाएँ।
- (७) समस्याओं की रूपरेखाएँ।
- (८) चित्र आदि चिपकाने के लिये।

(स) श्रव्य-दृश्य सामग्री

माइकेलिस (Michaelis) का विचार है कि श्रव्य-दृश्य सामग्री के उपयोग से छात्रों में विचारधाराएँ (concepts), अभिरुचियाँ, अनुभूतियाँ तथा रुचियाँ विकसित की जा सकती हैं। उन्होंने आगे कहा है कि इनके द्वारा छात्रों को

वर्ग योजना बनाने, स्वस्थ चिन्तन तथा विचार-प्रक्रिया वाद-विवाद तथा तर्क-शक्ति के प्रयोग के लिये स्थूल आधार प्रदान किये जाते हैं ।^१ अमेरिका की राष्ट्रीय सोसायटी का विचार है कि श्रव्य-दृश्य सामग्री के द्वारा सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित किया जाता है तथा छात्रों की रुचियों को पाठ्य-विषय के प्रति जागृत किया जाता है । इस प्रकार प्राप्त किया हुआ ज्ञान स्थायी होता है । इनके द्वारा छात्रों की रुचि को विषय में स्थायी कर दिया जाता है जो स्वाध्ययन की आदत का निर्माण करने में बहुत ही सहायक है । दृश्य सामग्री के द्वारा छात्रों को नवीन अनुभव प्रदान किये जाते हैं । ये उनकी कल्पना शक्ति को भी विकसित करने में सहायक होती हैं । इसका सबसे प्रमुख लाभ यह है कि इसके द्वारा ऐसा प्रभावोत्पादक वातावरण उत्पन्न किया जाता है जिसमें छात्र ज्ञानेन्द्रिय अनुभव प्राप्त करता है और नवीन बातों को सीखता है । इसके अतिरिक्त यह प्रत्यक्ष अनुभव के लिये पूरक का कार्य करती है । इनके द्वारा छात्रों को सीखने के लिये उत्प्रेरित किया जाता है । मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि श्रव्य-दृश्य सामग्री प्रारम्भिक कक्षाओं के छात्रों के लिये बहुत ही उपयोगी है क्योंकि इसके द्वारा उनकी ज्ञानेन्द्रियों को सक्रिय बनाया जाता है । इसके अतिरिक्त ये मन्द बुद्धि के बालकों के लिये बहुत ही उपयोगी हैं । मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि जब इसका उपयोग किया जाता है तब बालक बड़ी शीघ्रता और रुचि के साथ अपनी पाठ्य-वस्तु को ग्रहण करता है । दूसरे, इनके द्वारा अर्जित किये हुए तथ्य बालक सरलता से प्रस्तुत कर देते हैं और वे उनके मस्तिष्क में पर्याप्त समय तक स्थायी रहते हैं । श्रव्य-दृश्य सामग्री छात्रों के सम्मुख पदार्थों को वास्तविक रूप में प्रस्तुत करती है जिससे उन्हें बहुत लाभ प्राप्त होता है ।

(क) चल-चित्र तथा फिल्म खण्ड—विभिन्न विषयों के शिक्षण में चल-चित्रों का प्रयोग प्रथम महायुद्ध के पश्चात् से होने लगा था, परन्तु इनका पर्याप्त मात्रा में उपयोग १९३१ ई० के बाद से हुआ । पच्छिमी देशों में इनका उपयोग प्रत्येक विषय के शिक्षण के लिये होने लगा है । मनोवैज्ञानिकों के परीक्षणों ने इनके उपयोग को और भी प्रोत्साहन दिया है । इनके उपयोग से शिक्षण तथा सीखने की प्रक्रिया को बहुत योगदान दिया गया । नागरिकशास्त्र के शिक्षण में इनका उपयोग बहुत ही लाभदायक है तथा इनके उपयोग के लिये नागरिकशास्त्र में बहुत से अवसर भी मिलते हैं—उदाहरणार्थ—नागरिकता की शिक्षा प्रदान करने के लिये यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण उपादान है ।

1. John U. Michaelis—Social studies for children in a Democracy p. 232.

स्वदेश प्रेम की भावना को उत्पन्न करने के लिए विभिन्न राजनैतिक नेताओं की फिल्म दिखायी जा सकती हैं तथा स्वतन्त्रता संग्राम की फिल्म बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगी। इसके द्वारा छात्रों को स्वतन्त्रता-युद्ध के इतिहास का ज्ञान भी हो जायगा तथा उनमें स्वदेश प्रेम की भावना का विकास भी किया जा सकेगा। हमारे देश में भी शैक्षिक फिल्म बनाने पर ध्यान दिया जा रहा है। डाक्युमेन्ट्री फिल्म छात्रों के लिये शैक्षिक दृष्टि से परम उपयोगी हैं। इन चल-चित्रों तथा फिल्मों के निम्नलिखित लाभ हैं :—

- (१) इनके द्वारा छात्रों को सीखने के लिये प्रेरणा दी जाती है।
- (२) छात्रों को अनुभव करने के लिये स्थितियाँ प्रस्तुत की जाती हैं।
- (३) छात्रों की ग्राह्यशक्ति को विस्तृत तथा विकसित करती हैं।
- (४) इनके द्वारा वाद-विवाद के लिये भी अवसर प्रदान किये जाते हैं।
- (५) छात्रों को स्वाध्ययन करने के लिये प्रोत्साहन मिलता है।
- (६) नवीन पाठ के प्रारम्भ करने के लिये बहुत ही लाभदायक हैं।
- (७) इनके द्वारा छात्रों की समझने की शक्ति तथा विचारधारा को विकसित किया जाता है।

(८) मन्द-बुद्धि बालकों की शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उपादान है; अर्थात् इनके द्वारा उनको सरलता तथा सुगमता से शिक्षा प्रदान की जा सकती है जो उनको सुगमता से ग्राह्य होगी।

उपर्युक्त उपलब्धियों को तभी प्राप्त किया जा सकता है जब शिक्षक छात्रों से चल-चित्र देखने के पश्चात् तत्सम्बन्धी प्रश्न करे जिससे उसे यह मालूम हो जाय कि छात्रों ने क्या ग्रहण किया है। इसके अतिरिक्त वह अपने कथन द्वारा उनके ज्ञान को विकसित तथा रिक्त स्थानों की पूर्ति करके तारतम्य स्थापित कर दे। अध्यापक उस अर्जित ज्ञान पर एक छोटा-सा वाद-विवाद करवा दे जिससे छात्र अपने अर्जित ज्ञान को अभिव्यक्त कर सकें। इसके पश्चात् उस पर वह एक छोटा-सा लेख लिखने के लिये छात्रों को आदेश दे।

नागरिकशास्त्र के शिक्षक को अपने शिक्षण में फिल्म प्रयोग करने से पूर्व एक अच्छी फिल्म में निम्नलिखित गुण देखने चाहिये—

- (१) फिल्म पाठ के विकास में सहायक होनी चाहिये।
- (२) फिल्म की फोटोग्राफी स्पष्ट तथा कलात्मक होनी चाहिये।
- (३) आवाज स्पष्ट तथा समझने योग्य होनी चाहिये।
- (४) फिल्म प्रामाणिक होनी चाहिये।
- (५) फिल्म छात्रों की अवस्था, रुचि तथा योग्यता के अनुकूल हो।
- (६) फिल्म में प्रयुक्त भाषा छात्रों के स्तर के अनुसार हो।

(७) फिल्म की कथावस्तु मनोरंजक एवं शिक्षाप्रद होनी चाहिये, उसमें किया गया अभिनय भी आकर्षक एवं सुन्दर होना चाहिये ।

(ख) रेडियो :—रेडियो शिक्षा और मनोरंजन का महत्वपूर्ण उपकरण है । आधुनिक शिक्षा मनोविज्ञान में खेल द्वारा शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है । इसलिये रेडियो की और शिक्षा-विशारदों तथा मनोवैज्ञानिकों का ध्यान गया और उन्होंने इस उपकरण की शैक्षिक महत्ता पर विचार किया । आजकल अखिल भारतीय रेडियो द्वारा भी छात्रों तथा बालकों की शिक्षा और मनोरंजन के लिये कार्य-क्रम प्रसारित किये जाने लगे हैं । नागरिकशास्त्र के शिक्षण में इसका महत्वपूर्ण स्थान है । नागरिकता की शिक्षा, नागरिक के अधिकार तथा कर्तव्य, राज्य के उद्देश्य, राज्य के नागरिकों के प्रति कर्तव्य आदि ऐसे विषय हैं जिनको रेडियो द्वारा बड़े रोचक ढंग से पढ़ाया जा सकता है । नागरिकशास्त्र के छात्र के लिये देश-विदेशों के समाचारों का ज्ञान होना भी अत्यन्त आवश्यक है । आदर्श नागरिकता की प्राप्ति में इस उपादान के द्वारा बहुत सहायता प्रदान की जा सकती है । रेडियो की उपादेयता के विषय में उत्तर प्रदेश के वित्त मन्त्री श्री सैयद अलीजहीर ने कहा है कि—“रेडियो ने शिक्षण तथा सीखने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण सहायता प्रदान किया है और जैसे-जैसे हमारे साधन बढ़ते जायेंगे वैसे ही हम प्रत्येक स्तर पर शिक्षक के लिए इस सहायक सामग्री को उपलब्ध बना देंगे ।” (“Radio”, says the Minister of Finance of U. P., “has made possible some of the most exciting experiments in learning and teaching and as our resources grow we will make this ‘aid’ available to teachers at all levels.”) उन्होंने आगे कहा कि हमारे प्रदेश के १४०० माध्यमिक शिक्षालयों पर रेडियो हैं । इस उपादान के प्रयोग में शिक्षक का महत्वपूर्ण स्थान है । इसका लाभ तभी उठाया जा सकता है जब शिक्षक प्रोग्राम के पश्चात् छात्रों के अर्जित ज्ञान को प्रश्नों द्वारा जाँचे तथा उसके पश्चात् उनके ज्ञान को अपने कथन द्वारा समृद्ध बनाए । इसके पश्चात् उनसे उस विषय पर वाद-विवाद कराये तथा लेखबद्ध करने के लिए आदेश दे । ऐसा करने से छात्रों में तर्कसम्मत चिन्तन करने की वृत्ति का विकास होगा तथा इस प्रकार का ज्ञान-जन्म स्थायी होगा । इससे छात्रों को बोलने की कला तथा अपने विचारों को क्रमबद्ध करना आ जाएगा ।

प्रश्न

1. Define Visual Aids and give the main reasons for their use.
2. What kind of material aid would you use in the teaching of Civics to inculcate civic ideals among the students and why ?
3. "Radio is an educational and recreational tool." Discuss fully. Give the importance of Radio in the teaching of Civics.
4. Discuss the importance of the following in the teaching of Civics:—(a) Chart, (b) Motion Pictures, (c) Diagrams, (d) Pictures.
5. What should be the qualities of Civics Text-Book. Discuss fully.

अध्याय १५

नागरिकशास्त्र का शिक्षक

(Civics Teacher)

शैक्षिक प्रक्रिया के तीन मुख्य बिन्दु होते हैं—शिक्षक, बालक और विषय वस्तु । अध्यापन की सफलता इन तीनों की सुसम्बद्धता पर ही निर्भर होती है । इनमें शिक्षक एक चेतनशील तथा क्रियाशील बिन्दु है । इसका शैक्षिक प्रक्रिया में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है । चाहे हमारा पाठ्य-क्रम, पाठशाला भवन, फर्नीचर सहायक सामग्री आदि कितनी ही अच्छी क्यों न हो, तब तक वे सभी निरर्थक हैं जब तक एक योग्य शिक्षक द्वारा संचारित न की जाय । शिक्षा-विशारदों ने शिक्षण-प्रक्रिया में विभिन्न तत्वों को महत्वपूर्ण स्थान दिया है उदाहरणार्थ—सीखने के नियम, श्रव्य-दृश्य सामग्री, पाठ्य-वस्तु, वैयक्तिक विभिन्नताओं, निदर्शन आन्दोलन (Guidance Movement) मूल्यांकन, व्यक्तित्व विकास आदि । वस्तुतः ये सब वस्तुएँ प्रभावोत्पादक हैं और इन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में कुछ न कुछ योगदान अवश्य दिया है । परन्तु इनकी प्रभावोत्पादकता तभी है जब इनका संचालन योग्य शिक्षक के द्वारा किया जाय । जब शिक्षक को इतना महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है तो स्वतः ही यह प्रश्न उठता है कि शिक्षक के वे कौन से गुण हैं जिन्होंने उसको इतना महत्वपूर्ण स्थान प्रदान

किया। परन्तु हमारा मन्तव्य यहाँ नागरिकशास्त्र के शिक्षक के गुणों की व्याख्या करने से है। इसके उत्तर में हम कह सकते हैं कि नागरिकशास्त्र के शिक्षक में उन सभी सामान्य गुणों का होना आवश्यक है जो प्रत्येक विषय के शिक्षक में पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त उसे कुछ मुख्य गुणों का अपने में समावेश करना चाहिये तभी वह सफल शिक्षक कहलाने का अधिकारी होगा। इन गुणों का विवेचन हम अगले पृष्ठों में करेंगे। नीचे हम उसके मुख्य कर्तव्यों का विवेचन प्रस्तुत कर रहे हैं :—

(१) नागरिकशास्त्र के शिक्षक का मुख्य कर्तव्य यह है कि वह बालकों का विद्यार्थी हो; अर्थात् वह बालकों की प्रकृति, योग्यताओं, आवश्यकताओं, रुचियों, विकास तथा सीमाओं का ज्ञान प्राप्त करे। इसके साथ ही वह इस बात का भी ज्ञान प्राप्त करे कि बालक किस प्रकार ज्ञानार्जन प्राप्त करते हैं या सीखते हैं। इस प्रमुख कार्य का वह तभी सफलता के साथ पूर्ण निर्वाह कर सकता है जब वह शिक्षा में हुए विकास तथा प्रगतिशील विचारों, बाल-मनोविज्ञान तथा बाल विकास का अध्ययन करे।

(२) इस शास्त्र के शिक्षक का दूसरा मुख्य कर्तव्य यह है कि वह नागरिकशास्त्र तथा नवीनतम प्रचलित घटनाओं का जानकार हो। यह इसलिये आवश्यक है कि नागरिकशास्त्र हमें सुखद जीवन की कला प्रदान करता है। इसके साथ ही हमें यह प्रजातान्त्रिक मूल्यों को प्राप्त करने की कला भी सिखाता है। यदि इसके शिक्षक को प्रचलित घटनाओं का ज्ञान न होगा तो वह अपने छात्रों को व्यावहारिक जीवन की यथार्थ परिस्थितियों से परिचित नहीं करा सकेगा।

(३) नागरिकशास्त्र के शिक्षक का तीसरा मुख्य कार्य यह है कि वह पाठ्यक्रम निर्माणकर्ता हो। इस कर्तव्य का वह पूर्णतया तभी निर्वाह कर सकता है जब उसको पाठ्य-वस्तु के चयन तथा संगठन सम्बन्धी सिद्धान्तों का ज्ञान हो।

(४) इस शास्त्र के शिक्षक का अन्तिम तथा मुख्य कर्तव्य यह है कि वह विभिन्न वर्गों, समुदायों, समाजों तथा तत्वों के बीच एक कड़ी का कार्य करे। वह स्कूल को समाज के सम्पर्क में ले जाये और समाज को स्कूल के सम्पर्क में लाये। बालकों के अभिभावकों को स्कूल के सम्पर्क में लाये और स्कूल का अभिभावकों से सम्बन्ध स्थापित करे। यह इसलिये आवश्यक है कि शिक्षक समाज का नेता होता है, उसके नेतृत्व के द्वारा ही बालक आदर्श समाज की स्थापना में सफल होंगे। नागरिकशास्त्र हमें सामाजिक संघर्षों को दूर करने में सहायता देता है। इसलिये नागरिकशास्त्र के शिक्षक का यह प्रमुख कर्तव्य हो जाता है कि वह अपने छात्रों तथा समाज का नेतृत्व ग्रहण करके समस्त सामाजिक

संघर्षों, कलह तथा विद्वेषों को दूर करे तथा आदर्श समाज की स्थापना करे जिससे भावी नागरिक तथा सन्तति सुखद जीवन व्यतीत कर सकें ।

नागरिकशास्त्र के शिक्षक में निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक है :—

(१) व्यावसायिक निष्ठा :—बालक बहुत कुछ शिक्षक के कार्यों, दर्शन आदि से सीखता है । जैसा शिक्षक का दर्शन होगा वैसा ही बालक अपना जीवन दर्शन बनाने की चेष्टा करता है । इसी कारण शिक्षक को आशावादी बनने के लिये कहा गया है । शिक्षक का जो दृष्टिकोण शिक्षण कार्य के प्रति होगा वैसा ही उसके बालकों पर उसका प्रभाव पड़ेगा । निष्ठा सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करती है । इसलिये उसे अपने व्यवसाय तथा विषय दोनों में पूर्ण निष्ठा रखनी चाहिये । यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो बालकों के व्यक्तित्वों को विकसित नहीं कर पायेगा जो कि शिक्षा का मुख्य लक्ष्य है । इसलिये नागरिकशास्त्र के शिक्षक को अपने कार्य को उत्साह तथा तत्परता के साथ करना चाहिये । यदि वह ऐसा करेगा तो अपने छात्रों में विद्या के लिये अनुराग उत्पन्न कर सकता है । भारतीय शिक्षकों में इसी निष्ठा की कमी है, तभी हमारी शिक्षा का स्तर प्रतिदिन गिरता जा रहा है । यह सत्य है कि हमारे शिक्षकों को पेट भरने योग्य वेतन भी नहीं मिलता परन्तु फिर भी जब उन्होंने इस व्यवसाय को ग्रहण कर लिया है तब उनके लिये यह अनिवार्य है कि वे सत्यनिष्ठ होकर अपने कार्य को रुचि, तत्परता तथा उत्साह के साथ करें क्योंकि वे ही राष्ट्र के निर्माता हैं ।

(२) विषय का ज्ञान —जैसा कि हम उसके कर्त्तव्यों के विषय में कह चुके हैं कि वह अपने विषय का विद्यार्थी हो । नागरिकशास्त्र के शिक्षक को अपने विषय का पूर्ण ज्ञान होना चाहिये तभी वह अपने छात्रों के साथ पूर्ण न्याय कर सकता है । विषय के ज्ञान के साथ ही उसे राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक दशाओं का विस्तृत ज्ञान होना चाहिये । वह जीवन पर्यन्त विद्यार्थी जीवन ही व्यतीत करे । यदि वह इस जीवन का त्याग करता है तो राष्ट्र, छात्र तथा अपने स्वयं के हित में कुठाराघात करेगा । नागरिकशास्त्र के शिक्षक से यह भी आशा की जाती है कि वह तात्कालीन घटनाओं से भी परिचय रखे । इनके ज्ञान के अभाव में वह अपने छात्रों को उनके कर्त्तव्यों तथा अधिकारों का ज्ञान सफलता के साथ नहीं दे सकता है । क्योंकि जब तक उसे राष्ट्रीय निर्णायक एवं कठिन क्षणों (Crisis) का ज्ञान नहीं होगा तब तक वह उनको भावी जीवन में आने वाले ऐसे क्षणों के लिये तैयार नहीं कर सकता है और उनके कर्त्तव्यों को नहीं बता सकता कि ऐसे समय पर तुम्हारा क्या कर्त्तव्य है ? इस प्रकार हम कह सकते हैं कि नागरिकशास्त्र के शिक्षक को विषय के

पूर्ण ज्ञान के साथ-साथ सफल सामाजिक जीवन व्यतीत करने में जिन बातों की आवश्यकता है उनका भी ज्ञान होना चाहिये। नागरिकशास्त्र हमें सफल सामाजिक जीवन व्यतीत करने की कला सिखाता है। इसके लिये जो बातें अनिवार्य हैं उनका ज्ञान उसको अवश्य होना चाहिये।

(३) वैज्ञानिक तथा उदार दृष्टिकोण :—आधुनिक युग की वैज्ञानिक प्रवृत्ति का यह तकाजा है कि उसी तथ्य या बात को ग्रहण किया जाय जो प्रमाण युक्त तथा तर्कसम्मत है। इस कारण नागरिकशास्त्र के शिक्षक में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का होना भी परम आवश्यक है। यदि उसका वैज्ञानिक दृष्टिकोण नहीं होगा तो वह अपने छात्रों में इस दृष्टिकोण को उत्पन्न नहीं कर सकेगा जोकि उनके लिये अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि वे ही भावी नागरिक हैं और उन्हीं के कंधों पर आदर्श समाज की स्थापना का भार है। यदि उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास नहीं किया जायेगा तो वे सफल सामाजिक जीवन व्यतीत करने में असमर्थ रहेंगे और समाज के विद्वेषों, संघर्षों, अहितों तथा कलह को दूर नहीं कर सकेंगे। इसके साथ ही नागरिकशास्त्र के शिक्षक में उदार दृष्टिकोण का होना भी अनिवार्य है। इसी दृष्टिकोण से वह अपने छात्रों में विनम्रता, सत्यता, सहानुभूति, प्रेम आदि गुणों का विकास कर सकता है। यदि उसमें इस दृष्टिकोण का अभाव रहेगा तो वह मानव समाज का कल्याण करने में असमर्थ रहेगा तथा अपने छात्रों में विश्वबन्धुत्व की भावना नहीं उत्पन्न कर सकेगा जो नागरिकशास्त्र के शिक्षण का प्रमुख लक्ष्य और विश्व की एक प्रबल माँग है। इसके बिना वैज्ञानिक आविष्कारों का उपयोग मानव समाज के कल्याण के लिये नहीं किया जा सकेगा। नागरिकशास्त्र के शिक्षक में उदार दृष्टिकोण का होना अति अनिवार्य है।

(४) आदर्श नागरिक :—नागरिकशास्त्र का शिक्षक एक आदर्श नागरिक हो अर्थात् उसमें आदर्श नागरिकता के समस्त गुणों का समावेश हो और वह उनके अनुसार आचरण करता हो। उसे नागरिक के कर्तव्यों तथा अधिकारों का पूर्ण ज्ञान हो। इसके साथ ही वह इनके अनुसार आचरण करके अपने छात्रों तथा समाज के समक्ष एक आदर्श प्रस्तुत करे। दूसरे मनुष्यों के अधिकारों को सम्मान की दृष्टि से देखे तथा समाज में सहयोग, सहकारिता, प्रेम, सत्यनिष्ठा तथा उत्साह के साथ कार्य करे।

(५) सामाजिक सक्रियता :—जैसा कि हम उसके कर्तव्यों के विषय में कह चुके हैं कि नागरिकशास्त्र का शिक्षक पाठ्य-क्रम निर्माणकर्त्ता होना चाहिये। उसे इस कर्तव्य को पूर्ण करने से लिये समाज की ओर ध्यान देना पड़ता है। उसे अपनी पाठ्य-सामग्री तथा उद्देश्य समाज से लेने पड़ते हैं। इस

कारण उसका यह मुख्य कर्तव्य हो जाता है कि वह इन उद्देश्यों की प्राप्ति करे। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उसमें सामाजिक सक्रियता का गुण होना चाहिए। उसे समाज की सेवा करनी चाहिए। इसलिए उसे स्थानीय तथा प्रादेशिक सामाजिक कार्यों में पूर्ण सक्रियता के साथ भाग लेना चाहिए और उनका नेतृत्व ग्रहण करके सफल करने का प्रयत्न करना चाहिए। भारतीय गणतन्त्र अभी अपने शैशवकाल में ही है। उसका स्थायित्व तथा उन्नति नागरिकशास्त्र के शिक्षक पर ही निर्भर है। उसको सामाजिक तथा नैतिक कार्यों में पूर्णतया क्रियाशील रह कर भाग लेना चाहिए और समाज के समक्ष सहयोग सहकारिता, न्याय, प्रेम, सहानुभूति आदि गुणों को अपने व्यवहार में लाकर आदर्श प्रस्तुत करना चाहिए जिससे वे भी उसी के अनुसार आचरण करना सीख जायें। हमारे कुछ राजनीतिज्ञों का विचार है कि शिक्षक को वोट देने के कर्तव्य के अतिरिक्त अन्य किसी कर्तव्य को नहीं निभाना चाहिए अर्थात् वह नागरिकों द्वारा निर्वाचित होने के अधिकार का उपभोग न करे क्योंकि यदि वह किसी सदन की सदस्यता के लिए खड़ा होता है तो वह छात्रों के अभिभावकों को अपने प्रभाव में लाकर उनका समर्थन अनुचित ढंग से प्राप्त कर लेगा। परन्तु इस तर्क के विपक्ष में हम कह सकते हैं कि शिक्षक जब तक स्वयं सक्रिय होकर छात्रों तथा समाज के समक्ष अपने आदर्शों को प्रस्तुत नहीं करेगा तब तक समाज के सदस्य नागरिक के कर्तव्यों तथा अधिकारों का उपभोग ठीक प्रकार से नहीं कर सकेंगे क्योंकि उनमें अभी शिक्षा की कमी है। शिक्षक उनके समक्ष अपने आदर्श प्रस्तुत करके उनको सम्यक् उपयोग के लिए प्रयत्नशील तथा क्रियाशील बना सकता है। परन्तु बहुत ही खेद के साथ कहना पड़ता है कि जब मूलाधिकार समान रूप से सब मनुष्यों के लिए उपभोग्य हैं तो इस गरीब शिक्षक को इस अधिकार से वंचित करना उचित नहीं है। इसी के आदर्शों पर भारतीय गणतन्त्र की सफलता निर्भर है।

(६) शिक्षक का व्यक्तित्व—शिक्षक का व्यक्तित्व सफल शिक्षण की आधारशिला है। नागरिकशास्त्र के शिक्षक के व्यक्तित्व में निम्नलिखित गुणों का होना अनिवार्य है—

- | | |
|---------------------|--|
| (१) जीवन शक्ति | (१०) सहनशीलता |
| (२) अच्छा स्वास्थ्य | (११) प्रेम |
| (३) सत्य आचरण | (१२) आत्मनियंत्रण |
| (४) शुभचिन्तन | (१३) प्रजातंत्रीय प्रक्रियाओं के प्रयोग की शक्ति |
| (५) आशावादिता | (१४) विशाल हृदयता |

(६) निष्पक्षता	(१५) नेतृत्वक्षमता
(७) धैर्य	(१६) उत्साह
(८) मौलिकता	(१७) तत्परता
(९) सहयोग	(१८) निष्ठा तथा चातुर्य

नागरिकशास्त्र के शिक्षक में किसी वस्तु या तथ्य को रोचक ढंग से वर्णन करने की शक्ति होनी चाहिये। जो शिक्षक अपने तथ्यों को अपने कथन या वर्णन द्वारा सफलता के साथ अपने छात्रों के समक्ष क्रमबद्धता से रख सकता है वह अपने छात्रों के मस्तिष्क पर अच्छा प्रभाव डाल सकता है। नागरिकशास्त्र के शिक्षक में इस कला का होना बहुत ही आवश्यक और उपयोगी है।

(७) नागरिकशास्त्र के शिक्षण का ज्ञान :—नागरिकशास्त्र के शिक्षक के लिये प्रशिक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है। यदि उसको प्रशिक्षण नहीं मिलेगा तो वह आधुनिक शैक्षिक विचारधारा तथा विविध नवीन शिक्षण-पद्धतियों से अपने को परिचित नहीं कर सकेगा। किस स्तर पर किस शिक्षण-विधि का प्रयोग करना उचित होगा, ऐसी बातों का जानना उसके लिए आवश्यक है। शिक्षण एक कला है। इसके सामान्य सिद्धान्त तथा नियम हैं जिनको प्रत्येक शिक्षक को जानना आवश्यक है। इन सिद्धान्तों तथा नियमों का ज्ञान देने के लिये शिक्षक को प्रशिक्षित करना चाहिये। नागरिकशास्त्र के शिक्षक को निम्नलिखित बातों में प्रशिक्षण मिलना चाहिये।

(१) नागरिकशास्त्र का व्यावहारिक शिक्षण।

(२) सामान्य तथा मुख्य शिक्षण विधियों का ज्ञान (नागरिकशास्त्र के शिक्षण में प्रयुक्त होने वाली शिक्षण-विधियों का विशेष ज्ञान)।

(३) निम्नलिखित व्यावसायिक विषयों का ज्ञान :—

(१) शिक्षा का इतिहास तथा उसके सिद्धान्त, (२) शिक्षा मनोविज्ञान (विशेषतः बालमनोविज्ञान तथा बालविकास के सिद्धान्त, (३) शिक्षा के दार्शनिक सिद्धान्त, (४) शिक्षा का सामाजिक आधार, (५) शिक्षालय व्यवस्था, (६) स्वास्थ्य शिक्षा, (७) शिक्षा में मूल्यांकन, (८) प्रारम्भिक शिक्षकों की समस्या का ज्ञान।

इन उपर्युक्त बातों में प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिये पश्चात् उसको समय-समय पर अभिनवन पाठ्य-क्रम प्रदान किया जाय। इसके अतिरिक्त उसे व्यावसायिक साहित्य पढ़ने के लिये प्रदान किया जाय जिससे वह अपने प्रशिक्षण को नवीन बनाता रहे तथा अपने शिक्षण को रोचक तथा आकर्षक बना सके।

(८) शिक्षण की स्वतन्त्रता :—नागरिकशास्त्र के शिक्षक को विभिन्न समस्याओं, वाद-विवादपूर्ण प्रकरणों तथा विषयों का शिक्षण करना पड़ता है। इसके लिये उसे शिक्षण की स्वतन्त्रता की आवश्यकता है। उसे छात्रों को सत्य वस्तुओं तथा तथ्यों को ग्रहण करना ही सिखाना है। इसके लिये उसे अपने तथ्यों का विश्लेषण तथा संश्लेषण निष्पक्षता से करना पड़ेगा। यह तभी हो सकेगा जब उसको किसी भेद, स्वार्थ, नीति आदि से ग्रसित नहीं किया जाय। शिक्षण की स्वतन्त्रता से ही वह अपने छात्रों के समक्ष सत्यता को प्रकट कर सकता है। शिक्षण की स्वतन्त्रता व्यावहारिक योग्यता से ही प्राप्त की जा सकती है। स्कूल ही एक ऐसा स्थान है जहाँ छात्र निष्पक्ष रूप से सत्य की खोज कर सकता है।

—: ० :—

प्रश्न

1. What are the main functions of a Civics Teacher ? Discuss.
2. Write an short essay on the qualities of 'Civics Teacher.
3. "Teacher can foster the qualities of ideal citizenship. Examine the above statement and Comment.

अध्याय १६

नागरिकशास्त्र का अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध

(Correlation of Civics with other Subjects)

शिक्षा में सह-सम्बन्ध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :—शिक्षा में समन्वय प्राचीनकाल से चला आ रहा है। प्राचीन काल में शिक्षा जीवन-केन्द्रित थी परंतु समन्वय का आधुनिक रूप १५० वर्ष पूर्व यूरोप में विकसित हुआ। यह रूप प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री हरबार्ट के दार्शनिक सिद्धान्तों से प्रारम्भ हुआ। हरबार्ट महोदय के अनुसार शिक्षा का मुख्य ध्येय चरित्र निर्माण करना है। उसने कहा कि यह उद्देश्य निर्देशात्मक शिक्षण के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। निर्देश के द्वारा विचार-चक्र (Circle of Thought) निर्मित किया जायगा, और शिक्षा चरित्र निर्माण करेगी। वह शिक्षा द्वारा रुचियों की वृद्धि, विकास तथा प्रयोग पर बल देता है। रुचियों का विकास ज्ञान के द्वारा किया जा सकता है। इसलिये उसने ज्ञान की प्राप्ति पर अधिक बल दिया। इसके लिये उसने विभिन्न विषयों का ज्ञान देने के लिये कहा जिससे छात्र के विचारों में वृद्धि हो और विचारों से रुचियों में। जैसी हमारी रुचि होती है वैसे ही हमारे कार्य होते हैं। इस प्रकार उसका विचार-चक्र पूर्ण होता है जो कि चरित्र निर्माण करने में सहायक है। हरबार्ट ने सर्वप्रथम स्कूल के पाठ्य-विषयों में समन्वय स्थापित करने के लिये कहा। उसका कथन है कि पाठ्य-

क्रम के विषयों को इस प्रकार व्यवस्थित करना चाहिये जिससे एक विषय के शिक्षण में दूसरे विषयों का ज्ञान सहायक हो सके। इसको उसने सह-सम्बन्ध का सिद्धान्त (Principle of Correlation) के नाम से पुकारा। इसका आधार उसका पूर्वानुवर्ती ज्ञान का सिद्धान्त (Doctrine of Apperception) था। इस सिद्धान्त के अनुसार समस्त नवीन विचार तभी ग्राह्य हो सकते हैं जब उनका सम्बन्ध हमारी चेतना में विद्यमान विचारों से स्थापित किया जाता है अर्थात् हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि जब हमारे पूर्वानुवर्ती विचारों से नवीन विचारों को सम्बन्धित कर दिया जायगा तभी नवीन ज्ञान की प्राप्ति होगी। इसी पूर्व ज्ञान के सहारे शिक्षक को नवीन ज्ञान में छात्रों की रुचि तथा ध्यान को केन्द्रित करना चाहिये, तभी नवीन ज्ञान स्थायी हो सकेगा। उसकी पंचपद प्रणाली में प्रथम पद प्रस्तावना है जो पूर्व ज्ञान पर आधारित होती है तथा जिसका मुख्य ध्येय नवीन ज्ञान के लिये छात्रों को उनके पूर्व ज्ञान के आधार पर तैयार करना है। उसका कथन है कि पाठ्य-क्रम के विभिन्न विषयों को इस प्रकार सम्बन्धित करके पढ़ाया जाय जिससे बालकों के मस्तिष्क पर उनका समवेत प्रभाव पड़े।

हरबार्ट के शिष्य जिलर (Ziller) ने इस सिद्धान्त को और विस्तृत करके केन्द्रीकरण (Concentration) का सिद्धान्त निरूपित किया। इस सिद्धान्त के अनुसार किसी एक विषय को शिक्षा का केन्द्र बिन्दु बनाकर अन्य विषयों का उसी के आधार पर शिक्षण दिया जाय। उसने समस्त विषयों की शिक्षा देने के लिये 'इतिहास' को केन्द्रीय विषय माना। परन्तु कर्नल पार्कर ने 'प्राकृतिक विज्ञान अध्ययन' को केन्द्रीय विषय बनाया जिसके माध्यम से अन्य विषयों का ज्ञान प्रदान किया जाय। डी० गार्मो (De Garmo) ने शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यावहारिक कुशलता बतलाया। इसको प्राप्त करने के उद्देश्य से उन्होंने भूगोल तथा अर्थशास्त्र को केन्द्रीय विषय माना। ड्यूवी (Dewey) के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य सामाजिक कुशलता (Social Efficiency) प्राप्त करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये उसने शिक्षालय को जीवन की ठोस परिस्थितियों से सम्बन्धित करने के लिये कहा अर्थात् शिक्षालय में उन क्रियाओं को व्यवस्थित किया जाय जो जीवन से सम्बन्धित हैं। हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि उसके द्वारा 'शिक्षालय व समाज के जीवन' को केन्द्रीय विषय माना गया है। गान्धीजी की बेसिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य उसके व्यक्तिगत विकास तथा आत्मनिर्भरता उत्पन्न करना था। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये उन्होंने 'हस्तकला' (Craft) को केन्द्रीय विषय माना।

ड्यूवी ने इस प्रकार की सम्बद्धता को सामंजस्यीकरण (Integration) के नाम से पुकारा। ड्यूवी के सामंजस्यीकरण में बालक स्वयं अनुभवों में सम्बन्ध स्थापित करता है। परन्तु हरबार्ट के सह-सम्बन्ध के सिद्धान्त में शिक्षक द्वारा सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। इस सह-सम्बन्ध को शिक्षा-शास्त्रियों ने और विस्तृत करके केन्द्रीय-पाठ्य-क्रम, (Core-Curriculum) सायुज्यन (Fusion) तथा व्यापक क्षेत्रीय पाठ्यक्रम (Broad Field Curriculum) के सिद्धान्त बनाये।

सह-सम्बन्ध के प्रकार (Types of Correlation) :—

- (१) शीर्षात्मक सह-सम्बन्ध (Vertical Correlation)
- (२) अनुप्रस्थीय सह-सम्बन्ध (Horizontal Correlation)
- (३) व्यावहारिक जीवन से सह-सम्बन्ध (Correlation with Practical Life)।

(१) शीर्षात्मक सह-सम्बन्ध :—इसके अन्तर्गत एक ही विषय के विभिन्न अङ्गों में सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। एक कक्षा में प्राप्त किया हुआ ज्ञान दूसरी कक्षा की उपलब्धि में सहायक हो। इस प्रकार व्यवस्थित सामग्री में शीर्षात्मक सह-सम्बन्ध सरलता से स्थापित किया जा सकता है।

(२) अनुप्रस्थीय सह-सम्बन्ध :—इसके अनुसार विभिन्न विषयों का एक दूसरे से सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। इस प्रकार का सह-सम्बन्ध दो रीतियों से स्थापित किया जा सकता है—प्रथम, आकस्मिक रूप से, द्वितीय व्यवस्थित रूप से। प्रथम ढंग के अनुसार शिक्षक इसकी कोई व्यवस्था नहीं करता बल्कि वह अचानक ही हो जाता है। दूसरे ढंग के अनुसार शिक्षक समन्वय स्थापित करने के लिये योजना बनाता है और विभिन्न विषयों में व्यवस्थित रूप से सम्बन्ध स्थापित करना शिक्षक का ध्येय होता है। वह जानकर सम्बन्ध स्थापित करता है परन्तु प्रथम प्रकार के सह-सम्बन्ध में वह जानकर नहीं करता बल्कि अनायास ही कर बैठता है।

(३) व्यावहारिक जीवन से सह-सम्बन्ध:—हरबर्ट स्पेन्सर (Herbert Spencer) महोदय के अनुसार शिक्षा का मुख्य अभिप्राय छात्रों को भावी जीवन के लिये तैयार करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हम तभी कर सकते हैं जब शिक्षालय की शिक्षा का बाह्य जगत के क्रियाकलापों से सम्बन्ध स्थापित किया जायगा। इस सम्बन्ध को हम घर तथा समाज से सम्बन्ध स्थापित करके उपलब्ध कर सकते हैं तथा दूसरे समाज की व्यावसायिक, आर्थिक तथा राजनीतिक क्रियाओं से स्कूल का सम्बन्ध स्थापित किया जाय।

जैसा कि हम अध्याय १० में कह चुके हैं कि नागरिक शास्त्र के तथ्यों

का संगठन इस प्रकार किया जाय कि उनमें शीर्षात्मक तथा अनुप्रस्थीय सम्बन्ध स्थापित हो सके। नागरिक शास्त्र का स्कूल के अन्य विषयों के साथ क्या सम्बन्ध है ? इसी को देखना हमारा यहाँ मुख्य ध्येय है।

नागरिक शास्त्र मानव के सामाजिक-जीवन से सम्बन्ध रखता है। इसी-लिये इसमें जीवन के प्रत्येक अंग पर विचार किया जाता है। प्रत्येक शास्त्र का अध्ययन नागरिक के जीवन पर एक विशेष प्रभाव डालता है। अतः सामाजिक जीवन में एक संगठित तथा दृढ़ एकता है। इसी एकीकरण को जानने के लिये हम विभिन्न सामाजिक शास्त्रों का अध्ययन करते हैं। नागरिक शास्त्र के शिक्षण का मुख्य उद्देश्य आदर्श चरित्र निर्माण तथा नागरिकता उत्पन्न करना है। इसकी प्राप्ति हम तभी कर सकते हैं जब नागरिक-शास्त्र के शिक्षण का दूसरे विषयों से समन्वय स्थापित किया जाय क्योंकि सामाजिक जीवन के अनेक पहलू हैं; उदाहरणार्थ—नैतिक, आर्थिक, भौगोलिक, राजनैतिक, सामाजिक आदि। जब इन सब पहलुओं की शिक्षा समवेत रूप से दी जायगी तभी हम अपने छात्रों का चरित्र निर्माण कर सकते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि नागरिक शास्त्र का शिक्षण दूसरे विषयों के साथ समन्वय करके ही किया जाना चाहिये।

नागरिकशास्त्र तथा इतिहास (Civics and History)

इतिहास को मानव सभ्यता का कोष कहा गया है, जिसमें सामाजिक आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक उन्नति का विश्लेषण प्राप्त होता है। इतिहास भूतकाल का विश्लेषण करके वर्तमान को स्पष्ट करता है तथा इसके साथ ही भविष्य के लिये मार्ग प्रदर्शित करता है। नागरिक शास्त्र केवल वर्तमान की सामाजिक व राजनीतिक समस्याओं का विवेचन करता है। परन्तु इस शास्त्र को इनकी विवेचना करने के लिये इतिहास का सहारा लेना पड़ता है, क्योंकि वर्तमान अतीत की देन है। वर्तमान को समझने के लिये हमें इतिहास के पृष्ठों को टटोलना पड़ेगा। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जिन विषयों का वर्णन हमें इतिहास में मिलता है उन्हीं के आधार पर नागरिक शास्त्र के विषय बनाये जाते हैं क्योंकि इतिहास राजनैतिक स्वतंत्रता का संग्राम है। इस संग्राम में हमें नागरिक की वीरता, उत्साह, तत्परता, त्याग, सेवा, उसकी विजय तथा पराजय का वर्णन मिलता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि इतिहास नागरिक के कर्तव्यों की सूची है। इससे हमें यह ज्ञात होता है कि हम अपनी वर्तमान अवस्था में किस प्रकार और क्यों अवतरित हुए हैं।

नागरिकशास्त्र के शिक्षण का एक मुख्य उद्देश्य सामाजिक संघर्षों तथा कलह को दूर करके आदर्श समाज की स्थापना करना है। यदि ध्यान पूर्वक देखा जाय तो आदर्श समाज तथा सामाजिक जीवन की स्थापना तभी की जा सकती है जब हमें प्राचीन समाज तथा उसके आदर्शों का ज्ञान हो। इनका ज्ञान प्राप्त करने के लिये हमें इतिहास का सहारा लेना पड़ेगा। पूर्वजों के आदर्शों, उदाहरणों, सफलताओं, असफलताओं तथा त्रुटियों से हमें आदर्श समाज की स्थापना करने में बहुत सहायता मिलेगी, क्योंकि मानव को उनकी गलतियों को नहीं दुहराना पड़ेगा। यदि वह इतिहास का सहारा नहीं लेगा तो उसे जन्म से अपने अस्तित्व के लिये लड़ना पड़ेगा। उन्हीं दशाओं और त्रुटियों को दुहराना पड़ेगा जो कि मानव अपनी आदि अवस्था में अपना चुका है। इस पुनरावृत्ति से बचने तथा उदाहरणों से लाभ उठाने के लिये मानव को इतिहास का सहारा लेना पड़ेगा। इससे यह स्पष्ट होता है कि नागरिक शास्त्र का शिक्षक इतिहास की सहायता के बिना इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकेगा।

इतिहास को एक प्रयोगशाला के समान माना गया है जिसमें मानव ने भिन्न-भिन्न युगों में अनेक प्रयोग किये और इन प्रयोगों के द्वारा जो परिणाम निकले उनका नागरिक शास्त्र द्वारा उपयोग किया जाता है। दोनों ही शास्त्र सामाजिक जीवन से सम्बन्धित हैं परन्तु इन दोनों में अन्तर केवल इस बात का है कि इतिहास अतीत की घटनाओं का वर्णन करता है इस कारण उसे वर्णनात्मक शास्त्र कहा जाता है। नागरिकशास्त्र समाज में नागरिक तथा उसकी समस्याओं की मुख्य रूप से विवेचना करता है। इस विवेचना को वह आदर्शात्मक रूप में ही प्रस्तुत करता है। इस आदर्शात्मक रूप को वह इतिहास से ग्रहण करता है। इस कारण इसे आदर्शात्मक शास्त्र (Normative Science) कहा जाता है।

नागरिकशास्त्र का शिक्षक इतिहास का सहारा लेकर अपने छात्रों में आदर्श नागरिकता के गुणों को विकसित कर सकता है। उदाहरणार्थ स्वदेश प्रेम, त्याग, सेवा, सहयोग, न्यायप्रियता, सत्यता, विनम्रता, कर्तव्यपरायणता आदि गुणों को इतिहास के तथ्यों की सहायता से उत्पन्न कर सकता है। शिवाजी, राणा प्रताप आदि की कहानियाँ सुनाकर वह उनमें स्वदेश प्रेम तथा भक्ति की भावना विकसित कर सकता है। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, पं० जवाहरलाल नेहरू आदि की जीवन गाथाओं की कहानियाँ बताकर वह अपने छात्रों में त्याग तथा सेवा की भावना विकसित कर सकता है। अन्त में हम कह सकते हैं कि

इतिहास से पृथक करके यदि नागरिकशास्त्र का अध्यापन किया गया तो वह निरर्थक सिद्ध होगा ।

नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र

(Civics and Sociology)

समाजशास्त्र के अन्तर्गत सम्पूर्ण समाज आता है । समाज का किस प्रकार उद्गम हुआ, इसका किस प्रकार विकास हुआ आदि बातों का विवेचन समाजशास्त्र के द्वारा किया जाता है । समाजशास्त्र समाज के समस्त पहलुओं का अध्ययन करता है—सामाजिक रीति-रिवाज, नैतिक, आर्थिक, राजनैतिक, सभ्यता, संस्कृति, संघों की उत्पत्ति, उनका विकास आदि । संक्षेप में हम कह सकते हैं कि यह शास्त्र सभ्यता तथा संस्कृति की उत्पत्ति तथा उनके विकास का वर्णन करता है । रॉस (Ross) महोदय का कथन है—“सामाजिक तथ्यों का विज्ञान समाजशास्त्र है ।” हिलर (Hiller) ने समाजशास्त्र की परिभाषा इस प्रकार दी है, ‘मनुष्यों के आपसी सम्बन्धों का अध्ययन, एक दूसरे के प्रति उनका व्यवहार, उनके मानदंड, जिनसे कि वे अपने व्यवहार को नियन्त्रित करते हैं, समाज का विषय है’ इस प्रकार हम कह सकते हैं कि समाजशास्त्र सामाजिक जीवन के विभिन्न अंगों की व्याख्या करता है । उसमें अशुद्ध तथा शुद्ध दोनों ही बातों का वर्णन मिलता है । इसके अतिरिक्त यह शास्त्र समाज का अविकसित, अर्धविकसित, तथा पूर्ण विकसित सभी रूपों में वर्णन करता है । परन्तु नागरिकशास्त्र समाज के एक अंग अर्थात् राजनीतिक अंग की पूर्ण व्याख्या करता है तथा दूसरे अंगों का गौण वर्णन करता है । यह शास्त्र समाज की उन्हीं बातों का विवेचन करता है जो आदर्श समाज के निर्माण में सहायक होती हैं । यह गलत बातों का वर्णन नहीं करता, यदि करता भी है तो उनको ऐसे दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है जो आदर्श समाज तथा जीवन में सहायक हो । नागरिकशास्त्र विकसित समाज के नागरिक के कर्तव्यों तथा अधिकारों की व्याख्या करता है, वह अविकसित समाज को अपना विषय नहीं बनाता । इस प्रकार देखने से हम कह सकते हैं कि समाजशास्त्र तथा नागरिकशास्त्र दोनों ही सामाजिक जीवन की व्याख्या करते हैं परन्तु अन्तर केवल उनके क्षेत्र तथा आदर्श का है । समाजशास्त्र का क्षेत्र विस्तृत है, नागरिकशास्त्र का अपेक्षाकृत संकीर्ण । समाजशास्त्र किसी आदर्श को लेकर समाज का वर्णन नहीं करता जब कि नागरिकशास्त्र विकसित समाज या वर्तमान समाज को आदर्श स्वरूप प्रस्तुत करता है । इस प्रकार समाजशास्त्र वर्णनात्मक शास्त्र है जिसमें समाज के सभी अङ्गों का वर्णन बिना किसी आदर्श के किया जाता है । नागरिकशास्त्र अपनी

विषय वस्तु समाजशास्त्र से ही प्राप्त करता है परन्तु यह उसी सामग्रो को ग्रहण करता है जो आदर्श समाज के स्थापित करने में सहायक होती हैं। इसके अतिरिक्त नागरिकशास्त्र नागरिकता का वर्णन करता है चाहे वह भूत, वर्तमान, भविष्य, स्थानीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय हो। अन्त में हम कह सकते हैं कि इन दोनों विषयों में आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है। नागरिकशास्त्र के शिक्षक को इन दोनों में समन्वय स्थापित करना चाहिये। यदि वह संघों, बगों, समुदायों आदि के विषय में पढ़ा रहा है तो उसे उनकी उत्पत्ति तथा विकास का ज्ञान देना चाहिये, इसके लिये उसे समाजशास्त्र का सहारा लेना पड़ेगा। समुदाय, समाज, वर्ग, संघ के प्रति नागरिक अथवा व्यक्ति का क्या कर्तव्य है इनका ज्ञान देने के लिये उसे उन संस्थाओं की अतीत की दशा का भी ज्ञान देना चाहिये जिससे नागरिक आदर्श समुदाय अथवा समाज स्थापित करने में समर्थ हो सकें। इसके अतिरिक्त उनको यह भी बताये कि उनके प्रति प्राचीनकाल के नागरिकों के तथा उनके प्रति इन संस्थाओं के क्या कर्तव्य थे ?

नागरिकशास्त्र तथा अर्थशास्त्र

(Civics and Economics)

अर्थशास्त्र मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन करता है। यह शास्त्र समाज के उस अङ्ग का वर्णन करता है जिसमें धन की उत्पत्ति, वितरण, उपभोग तथा विनिमय सम्बन्धी क्रियाएँ निहित रहती हैं। नागरिकशास्त्र सुखद सामाजिक जीवन की कला तथा नागरिकों के कर्तव्यों तथा अधिकारों का ज्ञान प्रदान करता है। दोनों ही शास्त्र मानव का अध्ययन करते हैं परन्तु उनके क्षेत्र भिन्न-भिन्न हैं। एक केवल मनुष्य के अर्थ सम्बन्धी क्रिया-कलापों, तथा दूसरा नागरिकता से सम्बन्धित विषयों की व्याख्या करता है। इस विभिन्नता के होते हुए भी दोनों शास्त्र एक-दूसरे के सहयोगी हैं। जब अर्थशास्त्र धन की उत्पत्ति तथा वितरण का विवेचन करता है तो उसे नागरिकशास्त्र की आवश्यकता पड़ती है। नागरिकशास्त्र इस बात के लिये कानून बनाता है कि नागरिक पर कौन-कौन से कर लगाये जायँ तथा उनको किस विधि से वसूल किया जाय ? इसके साथ ही नागरिकशास्त्र यह भी बतलाता है कि इन करों को देना नागरिकों का मुख्य कर्तव्य है। इसके अतिरिक्त यह शास्त्र हमें यह भी सिखाता है कि कर-प्रणाली जनता के हित में होनी चाहिये। इस प्रकार नागरिकशास्त्र जनहित का सिद्धान्त अर्थशास्त्र को प्रदान करता है। प्रत्येक मनुष्य की कुछ मौलिक आवश्यकताएँ होती हैं, उदाहरणार्थ—रोटी, कपड़ा तथा मकान।

जिस समाज में मानव की इन आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं की जायगी वहाँ सफल नागरिकता असम्भव है। इतिहास हमारे समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करता है कि जब आर्थिक विषमता होगी तब समाज दो वर्गों में बँट जायगा और इस असमान वितरण के कारण गृह-युद्ध छिड़ने की सदैव सम्भावना रहेगी। १७८९ की फ्रांस तथा १९१७ की रूसी क्रान्तियों के मुख्यतः कारण आर्थिक ही थे। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि नागरिकता की सफलता के लिये समाज में उत्पादन के साधनों पर अधिकार किसी एक वर्ग विशेष का नहीं होना चाहिये बल्कि उनका उपयोग समस्त जनता के हित के लिये एवं जनता द्वारा होना चाहिये। गरीबी नागरिक धर्म का नाश करती है अर्थात् दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि गरीबी मानव को कर्तव्य विमुख कर देती है। जब नागरिकों की मौलिक आवश्यकताएँ पूर्ण नहीं की जायेंगी तो उनके कर्तव्य विमुख होने की सम्भावना बनी रहेगी। नागरिकशास्त्र का आदर्श तभी सफल हो सकता है जब समाज की आर्थिक स्थिति अच्छी होगी। इसलिये नागरिकशास्त्र के शिक्षक का यह परम कर्तव्य है कि वह इन दोनों में समन्वय स्थापित करे जिससे नागरिकशास्त्र का मुख्य लक्ष्य आदर्श समाज की स्थापना प्राप्त हो सके। आदर्श समाज तभी स्थापित हो सकता है जब मनुष्यों की मौलिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिये धन-उत्पत्ति के साधनों का उपयोग करने का समान अवसर प्राप्त हो।

नागरिकशास्त्र तथा भूगोल (Civics and Geography)

भूगोल पृथ्वी का अध्ययन करता है अर्थात् विश्व की प्राकृतिक दशाओं का विवेचन करता है। किसी राष्ट्र की आर्थिक स्थिति उसकी भौगोलिक स्थितियों पर निर्भर होती है; उदाहरणार्थ—इंग्लैंड को उसकी भौगोलिक स्थितियों ने एक व्यापारिक राष्ट्र बनाया। इसके अतिरिक्त कुछ विद्वानों का मत है कि प्राकृतिक वातावरण मनुष्य के रहन-सहन, रीति-रिवाज, भाषा, शारीरिक गठन, आदि को निर्धारित करता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि शिवाजी की विजय का मुख्य कारण उसकी भौगोलिक स्थितियाँ थी। आधुनिक काल के कुछ भूगोल शास्त्री इस बात से पूर्णतया सहमत नहीं हैं। उनका विचार है कि भूगोल मानव का अध्ययन करता है। यह सत्य है कि वह अपने प्राकृतिक वातावरण से भी कुछ न कुछ सीखता है परन्तु वह उसके ऊपर पूर्णतया निर्भर नहीं है। आज के युग में मानव ने प्रकृति पर विजय प्राप्त करली है। वह जो कुछ भी सीखता है वह मानवीय; अर्थात् सामाजिक

तथा प्राकृतिक वातावरण के परस्पर सहयोग से सीखता है। नागरिकशास्त्र भी मानव का अध्ययन करता है। भूगोल से सम्बन्ध इनी बात में है कि मानव प्राकृतिक वातावरण के सहयोग से किस प्रकार सीखता है और यह प्राप्त किया हुआ अनुभव मानव समाज के कल्याण में कहाँ तक सहायक है। भूगोल अप्रत्यक्ष रूप से मानव को प्रभावित करता है। जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं कि किसी देश की आर्थिक दशा उसकी भौगोलिक स्थिति पर निर्भर रहती है। यदि किसी राष्ट्र की भौगोलिक स्थिति, अर्थात् भूमि, जलवायु, खनिज पदार्थ आदि साधन, अच्छे हैं। तो उस राष्ट्र की आर्थिक दशा अच्छी होगी। जब आर्थिक दशा अच्छी होगी तो नागरिकशास्त्र की सहायता से मनुष्यों को कर्तव्यपरायण नागरिक बनाया जा सकता है तथा आदर्श सामाजिक जीवन की स्थापना की जा सकती है। ये भौगोलिक स्थितियाँ मानव समाज के कल्याण में भी सहायक होती हैं। इस प्रकार नागरिकशास्त्र का शिक्षक भूगोल का यथा-स्थान समन्वय स्थापित करके विश्वबन्धुत्व की भावना अपने छात्रों में विकसित कर सकता है जिसको उत्पन्न करना उसका मुख्य लक्ष्य है।

नागरिकशास्त्र तथा साधारण विज्ञान

(Civics and General Science)

शिक्षा में समन्वय की विचारधारा ने पाठ्य-क्रम को हल्का बनाने में बहुत सहायता प्रदान की है। इस विचारधारा से पूर्व स्कूल में विभिन्न विषयों को पृथक-पृथक रूप से पढ़ाया जाता था और पाठ्य-क्रम में बहुत से विषयों का समावेश हो गया था। प्रत्येक विषय को पृथकता देने का मुख्य कारण सरकार से वृत्ति (Grant) प्राप्त करना था। परन्तु इस समन्वय की विचारधारा ने बहुत से पृथक विषयों का एकीकरण कर दिया। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इतिहास, भूगोल तथा नागरिकशास्त्र को समन्वित करके एक विषय "सामाजिक अध्ययन" बना दिया, इससे पूर्व ये तीनों पृथक विषय थे। दूसरे, भौतिक-शास्त्र, रसायनशास्त्र, जीवविज्ञान तथा जन्तुविज्ञान की पाठ्य-वस्तु को समवेत रूप से रखकर एक नवीन विषय का निर्माण किया जो 'साधारण विज्ञान' के नाम से प्रख्यात है। जूनियर हाई-स्कूल स्तर तक ये सभी विषय पृथक रूप से पढ़ाये जाते थे, अब इनके समन्वित पाठ्य-क्रम को पढ़ाया जाता है। साधारण विज्ञान से नागरिकशास्त्र का कोई भी प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है परन्तु फिर भी यह विज्ञान अप्रत्यक्ष रूप से नागरिकशास्त्र से सम्बन्धित है। नागरिकशास्त्र में हम छात्रों को सफाई की महत्ता पर बल देते हैं। इसमें हम शारीरिक, घर, पड़ोस, ग्राम या नगर की सफाई के विषय में चर्चा करते हैं और नागरिक का

यह एक कर्त्तव्य भी है कि वह अपने घर, मुहल्ले तथा ग्राम या नगर की सफाई पर ध्यान दे। साधारण विज्ञान की एक शाखा जीव विज्ञान हमें शारीरिक अंगों उनकी बनावट, क्रिया तथा उनकी सुरक्षा के विषय में ज्ञान देती है। जब तक बालकों को अपने शरीर के अंगों, उनकी बनावट तथा क्रिया का ज्ञान न होगा तब तक वे अपना स्वास्थ्य ठीक प्रकार से स्थिर नहीं रख सकेंगे। जीवविज्ञान द्वारा संतुलित भोजन के विषय में भी ज्ञान दिया जाता है। जब नागरिक शरीर से स्वस्थ नहीं होगा तो वह समाज के लिये एक भार बन जायेगा। शरीर को रोगों से बचाने के लिये साधारण विज्ञान हमें बहुत से नियमों का ज्ञान देता है।

साधारण विज्ञान वैज्ञानिक आविष्कारों के विषय में भी जानकारी प्रदान करता है। नागरिक का यह परम कर्त्तव्य है कि वह इन आविष्कारों का उपयोग मानव समाज के कल्याण के लिये करे और इन आविष्कारों की सहायता से मानव जीवन सुखमय बनाये।

साधारण विज्ञान हमें यह भी बतलाता है कि सभी पेड़, पौधों में जीव-आत्मा होती है। नागरिकशास्त्र का शिक्षक साधारण विज्ञान से समन्वय स्था-करके अपने छात्रों में दया तथा सहानुभूति की भावना उत्पन्न कर सकता है। हमें सभी जीवों के साथ दया तथा प्रेम का व्यवहार करना चाहिए न केवल मनुष्यों तथा जानवरों के साथ। इस प्रकार नागरिकशास्त्र का शिक्षक साधारण विज्ञान से इस शास्त्र का समन्वय स्थापित कर सकता है।

अन्त में हम कह सकते हैं कि यदि नागरिकशास्त्र के शिक्षक को इस शास्त्र के शिक्षण के लक्ष्यों की प्राप्ति करनी है तो उसे नागरिक शास्त्र का शिक्षण अन्य विषयों से सम्बन्ध स्थापित करके करना चाहिये। दूसरे विषयों से समन्वय स्थापित करना उसके लिये इन लक्ष्यों की प्राप्ति के कारण ही आवश्यक नहीं है बल्कि उसे शिक्षा के उद्देश्यों की भी प्राप्ति करनी है। शिक्षा का मुख्य लक्ष्य बालक के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास करना है। इसकी प्राप्ति तभी की जा सकती है जब शिक्षक अपने विषय का शिक्षण दूसरे विषयों से सम्बन्ध स्थापित करके करेगा।

—: ० :—

प्रश्न

1. Indicate how would you Correlate Civics with
(a) Economics and (b) General Science. —(B. T., 1958)
2. How would you correlate the teaching of Civics with the other subjects of the School Curriculum. —(B. T., 1959)

परिशिष्ट

नागरिकशास्त्र में पाठ-योजना बनाने के लिये कुछ संकेत

पाठ-योजना के द्वारा निम्नलिखित बातों को प्रदर्शित किया जाता है—

(१) छात्रों ने जो ज्ञान अर्जित कर लिया है ।

(२) छात्रों को जिस दिशा के लिये निर्देशित करना है तथा जिस नवीन पाठ के सम्बन्ध में उनको ज्ञान देना है ।

(३) यह विषय के सामान्य तथा मुख्य उद्देश्यों की व्याख्या करती है जिनको कि शिक्षण द्वारा प्राप्त करना है ।

(४) यह शिक्षक के अनुभवों का कथन है ।

(५) यह विषय के क्रमबद्ध ज्ञान का परिचय देती है ।

पाठ-योजना के आधारों के लिये विश्व को हरबार्ट की सामान्य विधि का सहारा लेना पड़ता है । हरबार्ट एक आदर्शवादी दार्शनिक था, उसके अनुसार शिक्षा का मुख्य उद्देश्य चरित्र निर्माण करना है । उसने इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये शिक्षक को महत्वपूर्ण स्थान दिया । शिक्षक को शिक्षा प्रदान करने के लिये सामान्य विधि प्रदान की । इस विधि के द्वारा वह शिक्षण करके इस उद्देश्य की प्राप्ति करे । उसने इस सामान्य विधि में चार सोपान अर्थात् 'स्पष्टता' (Clearness), 'सम्बन्ध' (Association), 'व्यवस्था', (System) तथा 'प्रयोग' (Method) रखे । उसके शिष्य जिलर (Ziller) ने 'स्पष्टता' नामक सोपान को दो भागों में विभाजित किया—प्रथम 'प्रस्तावना' (Intro-

ducious) तथा द्वितीय 'प्रस्तुतीकरण' अथवा 'विषय प्रवेश' (Presentation) । हरबाट के नाम से ही यह पंचपद प्रणाली प्रख्यात है । वस्तुतः ये पंचपद विज्ञान तथा गणित के शिक्षण के लिये बहुत ही उपयुक्त है । परन्तु इनका उपयोग ज्ञानात्मक पाठों में थोड़े बहुत परिवर्तन के साथ किया जाता है । नीचे हम 'नागरिक शास्त्र के पाठ-सूत्र को किस प्रकार लिखा जाता है', इसके विषय में कुछ संकेत दे रहे हैं—

सर्वप्रथम पाठ-सूत्र पुस्तिका में निम्नलिखित बातों को लिखना चाहिये—

पाठ-सूत्र संख्या

दिनाङ्क	कक्षा
विषय	समयचक्र
प्रकरण	अवधि
विद्यालय का नाम	श्रीसत आयु

छात्राध्यापक का नाम

इन सबको लिखने से पश्चात् सामान्य उद्देश्य लिखे जाने चाहिये । ये उद्देश्य सभी पाठों में एक से रहते हैं । इनको विषय के शिक्षण द्वारा प्राप्त करना नागरिकशास्त्र के शिक्षक का मुख्य ध्येय है । ये सामान्य उद्देश्य इस प्रकार हैं—

१—सामान्य उद्देश्य—(१) छात्रों में आदर्श नागरिकता की भावना उत्पन्न करना ।

(२) छात्रों को नागरिक तथा राज्य के कर्तव्य तथा अधिकारों से परिचित कराना ।

(३) उनमें विश्व-बन्धुत्व की भावना का विकास करना ।

(४) उन्हें आत्म-नियन्त्रण की शिक्षा देना ।

(५) छात्रों में नागरिकशास्त्र के लिये रुचि उत्पन्न करना ।

(६) उन्हें समाजोपयोगी सदस्य बनने की शिक्षा देना ।

(७) छात्रों में प्रेम, सहानुभूति, त्याग और सहयोग की भावना द्वारा चरित्र का विकास करना ।

(८) उनमें तर्क, कल्पना, विचार-शक्ति तथा निर्णय-शक्ति का विकास करके वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करना ।

२ - मुख्य उद्देश्य— यह प्रकरण से सम्बन्धित होता है । यह सरल तथा संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिये ।

३—**सहायक सामग्री**—यह वह साधन है जिसके द्वारा पाठ के शिक्षण में प्रभावोत्पादकता उत्पन्न की जा सकती है। इसका प्रत्येक पाठ में उपयोग करना आवश्यक नहीं है। जहाँ इसके उपयोग की आवश्यकता हो वहाँ ही इसका प्रयोग करना चाहिये। दूसरे, एक पाठ में अधिक सहायक सामग्री अर्थात् चित्र आदि प्रयुक्त नहीं करना चाहिये। तीसरे, यह अधिक व्ययी न हो। इसको ठीक स्थल पर ही प्रयुक्त करना चाहिये।

(४) **पूर्वज्ञान**—यह प्रस्तावना की आधारशिला है। इसको मानने में शिक्षक को सतर्क रहना चाहिये। इसी के आधार पर हमारे पाठ का प्रारम्भ होता है।

(५) **प्रस्तावना**—इससे हमारा पाठ प्रारम्भ होता है। इसके मुख्य उद्देश्य नीचे दिये जा रहे हैं—

(१) पूर्वज्ञान की जाँच करना।

(२) नवीन ज्ञान के लिये प्रभावोत्पादक वातावरण उत्पन्न करना।

(३) नवीन ज्ञान को ग्रहण करने के लिये छात्रों को तैयार करना।

प्रस्तावना के लिये कोई निश्चित नियम नहीं है कि वह प्रश्नों के द्वारा ही प्रस्तावित की जाय। शिक्षक किसी चित्र, मॉडल तथा कहानी सुनाकर भी अपने पाठ का प्रारम्भ कर सकता है। यदि प्रश्नों को प्रस्तावना में स्थान दिया गया तो उस समय शिक्षक को यह ध्यान देना चाहिये कि प्रस्तावना के अधिक प्रश्न तो नहीं हो गये हैं। इसमें अधिक से अधिक ३ या ४ प्रश्न रखने चाहिये। दूसरे इन प्रश्नों में एक मनोवैज्ञानिक क्रम हो। वे एक दूसरे से पृथक् नहीं होने चाहिये बल्कि सम्बन्धित हों। ये प्रश्न निर्धारित पूर्वज्ञान पर आधारित होने चाहिये।

६—**उद्देश्य कथन** :—प्रस्तावना के पश्चात् शिक्षक अपने पाठ के मुख्य उद्देश्य को छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत करे। यह सरल भाषा में संक्षिप्त रूप से प्रस्तुत किया जाना चाहिए। इसके द्वारा हम की भावना उत्पन्न की जानी चाहिए।

७—**प्रस्तुतीकरण** :—इस पद में नवीन पाठ को प्रस्तुत किया जाता है। इसमें पाठ का दूसरे विषयों से यथास्थान समन्वय स्थापित करना चाहिए। पाठ को प्रस्तुत करने के लिए छात्राध्यापक विभिन्न विधियों तथा सहायक सामग्री को उपयुक्त स्थान पर प्रयुक्त

कर सकता है। प्रशिक्षण महाविद्यालयों में अधिकतर प्रश्नोत्तर रीति तथा कथन प्रणाली का उपयोग किया जाता है। उसको उत्तर सूचक, प्रत्यक्ष, प्रतिध्वानात्मक, स्वीकारात्मक आदि प्रश्नों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

८--**श्यामपट सारांश** :—पाठ को सुविधानुसार दो या तीन अन्वितियों में बाँटा जा सकता है। प्रत्येक अन्विति की समाप्ति पर श्यामपट सारांश दिया जाना चाहिए। श्यामपट सारांश के विषय में विभिन्न प्रशिक्षण महाविद्यालयों में विभिन्न रीतियाँ प्रचलित हैं। कुछ तो पुनरावृत्ति के प्रश्नों के उत्तरों को ही श्यामपट सारांश के रूप में ही दे देते हैं। कुछ विद्यालयों में श्यामपट सारांश पाठ के विकास के साथ-साथ विकसित किया जाता है। उसको छात्रों को साथ-साथ लिखने नहीं दिया जाता है और प्रस्तुतीकरण के बाद में उनको लिखने के लिए कहा जाता है तब शिक्षक निरीक्षण भी करता है। यह दूसरे प्रकार की रीति ही उपयुक्त प्रतीत होती है।

(६) **पुनरावृत्ति**—इसका मुख्य ध्येय छात्रों द्वारा अर्जित किये हुए ज्ञान की जाँच करना है। यह स्तर शिक्षक के कार्य की भी परीक्षा लेता है। इसमें अधिक समय नहीं लगाना चाहिये। अधिक से अधिक ३ या ४ प्रश्न किये जाँय।

(१०) **गृहकार्य**—गृहकार्य का मुख्य उद्देश्य छात्रों में स्वाध्ययन की आदत का निर्माण करना है तथा अर्जित किये हुए ज्ञान को स्थिर तथा विस्तृत भी करना है। इसको निर्धारित करते समय शिक्षक को छात्रों की रुचि, योग्यता, वैयक्तिक विभिन्नताओं आदि का ध्यान रखना चाहिये। शिक्षक को दिये हुए गृहकार्य को प्रतिदिन जाँचना चाहिये।

इन संकेतों को और अधिक सरल बनाने के लिये कुछ पाठ्य-सूत्र अगले पृष्ठों में दिये जा रहे हैं।

पाठ्य सूत्र १

दिनांक ६-३-६०

कक्षा—६

विषय—नागरिक शास्त्र

समय चक्र—प्रथम

प्रकरण—नगरपालिका के कार्य

अवधि—४० मिनट

विद्यालय—आर० ई० आई० हाई स्कूल

औसत आयु ११

आगरा।

वर्ष

छात्राध्यापक— नटेशकुमार शुक्ला

सामान्य उद्देश्य—(१) छात्रों को नागरिक शास्त्र के अध्ययन द्वारा योग्य नागरिक बनने की प्रेरणा देना ।

(२) छात्रों को देश प्रेम, राजनैतिक, सामाजिक व्यवस्था का ज्ञान कराना ।

(३) छात्रों को अपने अधिकार, कर्तव्यों का ज्ञान कराना ।

(४) छात्रों में सामाजिक कल्याण, विश्वबन्धुत्व और नैतिकता के भाव जाग्रत करना ।

(५) छात्रों में प्रेम, सहानुभूति, त्याग और सहयोग की भावना द्वारा चरित्र का विकास करना ।

मुख्य उद्देश्य—छात्रों को नगरपालिका के कार्यों से अवगत कराना ।

सहायक सामग्री—नगरपालिका के अनिवार्य और ऐच्छिक कार्यों का चित्र ।

शिक्षा उपयोगी सामान्य उपकरण

पूर्व ज्ञान—छात्रों को जिला बोर्ड तथा ग्राम पंचायत व नगरपालिका के संगठन के विषय में ज्ञान है ।

पूर्व ज्ञान के आधार पर छात्रों से निम्नलिखित प्रश्न पूछे जायेंगे ।

प्रस्तावना—प्रश्न :—नगर का प्रबन्ध कौन-सी स्थानीय संस्था करती है ?

प्रश्न :—नगरपालिका के सदस्यों को कौन चुनता है ?

प्रश्न :—जनता इन सदस्यों को क्यों चुनती है ?

उद्देश्य कथन—आज हम नगरपालिका के कार्यों के विषय में पढ़ेंगे और देखेंगे कि इन कार्यों से नागरिकों को क्या-क्या लाभ हैं ।

प्रस्तुतीकरण —प्रश्न :—जिला बोर्ड के कार्यों को मोटे रूप से कितने भागों में बाँट सकते हैं ?

प्रश्न :—जिला बोर्ड के अनिवार्य कार्य कौन-कौन से हैं ?

प्रश्न :—जिला बोर्ड के ऐच्छिक कार्य कौन-कौन से हैं ?

अध्यापक कथन—ठीक इसी प्रकार नगरपालिका के कार्य भी अनिवार्य और ऐच्छिक होते हैं । जो कार्य नगरपालिका को आवश्यक रूप से करने पड़ते हैं, उन्हें अनिवार्य कार्य कहते हैं और यह कार्य बड़े ही महत्वपूर्ण होते हैं । इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी कार्य होते हैं जिन्हें करने के लिये वह कानून द्वारा बाध्य नहीं होती । ये ऐच्छिक कार्य उसकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर होते हैं ।

प्रश्न :—देहातों में शिक्षा का क्या प्रबन्ध होता है ?

प्रश्न :—गाँव में ये कार्य कौन-सी संस्था करती है ?

अध्यापक कथन—इसी प्रकार नगरों में शिक्षा का प्रबन्ध करना नगरपालिका का अनिवार्य कार्य होता है। नगरपालिका जन-शिक्षा के लिये प्राइमरी, मिडिल स्कूल तथा छोटे-छोटे बच्चों के लिये किंडर गार्टन, मान्टेसरी, नर्सरी आदि स्कूल खोलने का प्रबन्ध करती है तथा प्राइमरी शिक्षा निःशुल्क तथा अनिवार्य होती है क्योंकि शिक्षित नागरिक ही समाज तथा देश का हित कर सकते हैं। इस कार्य को ठीक रूप से चलाने के लिये नगरपालिका शिक्षा कमिटी भी नियुक्त करती है।

प्रश्न :—हमारे स्कूल के अध्यापक पढ़ाते समय कैसा व्यवहार करते हैं ?

प्रश्न :—हमारे स्कूल का निरीक्षण कौन करता है ?

अध्यापक कथन—जिस प्रकार हमारे स्कूल में अध्यापक प्रेम, सहानुभूति का व्यवहार करते हैं, उसी प्रकार नगरपालिका द्वारा खोले गये स्कूलों में भी अध्यापक, अध्यापिकायें बच्चों के साथ प्रेम पूर्ण व्यवहार करते हैं तथा इसके साथ ही साथ नगरपालिका इन स्कूलों के कार्यों की देख-भाल आदि का कार्य भी करती है।

प्रश्न :—देहातों में सफाई का कार्य कौन-सी संस्था करती है ?

प्रश्न :—यदि सफाई का प्रबन्ध न किया जाये तो क्या जन-हानि होगी ?

अध्यापक कथन—इसी कारण से नगरपालिका जन-स्वास्थ्य के लिये नगर की सभी सड़कों, गलियों तथा नालियों आदि की ठीक प्रकार से सफाई का प्रबन्ध करती है। मल-मूत्रालय आदि की भी नित्य सफाई करवाती है जिससे कि नगर में किसी प्रकार की गंदगी और बीमारियाँ न फैल सकें। इस प्रकार हम देखते हैं कि वह सफाई का पूरा-पूरा ध्यान रखती है।

प्रश्न :—अगर हमारे घर या मुहल्ले में बीमारी फैलती है तो हमें क्या करना चाहिये ?

प्रश्न :—दवा लेने हम कहाँ जाते हैं ?

अध्यापक कथन—जिस प्रकार हम बीमारियों को रोकने का प्रबन्ध करते हैं उसी प्रकार नगर में नगरपालिका भी ये प्रयत्न करती है। जिससे नगर में कोई संक्रामक रोग न फैले, अन्य बीमारियाँ नागरिकों को न हों, वह टीके लगवाने का भी प्रबन्ध करती है। तथा स्थान-स्थान पर चिकित्सालय, औषधालय आदिखोलने का भी प्रबन्ध करती है। यह नगरपालिका का अनिवार्य कार्य है।

प्रश्न :—अगर कहीं आग लग जाय तो हमें क्या करना चाहिए ?

प्रश्न :—हमें आग क्यों बुझा देनी चाहिये ?

अध्यापक कथन—जहाँ कहीं आग लग जाती है तो हम लोग उसे बुझाने की कोशिश करते हैं, जिससे कि जनता को नुकसान न हो। ठीक इसी प्रकार नगरपालिका भी जनता की सुरक्षा के लिये अपने पास आग बुझाने की संस्था (फायर ब्रिगेड) रखती है और इसका प्रयोग वह आग बुझाने के लिये करती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वह जनता की सुरक्षा का पूरा-पूरा ध्यान रखती है ?

प्रश्न :—चित्र नं० १ में तुम क्या देखते हो ?

प्रश्न :—तुम्हारे मकान में रोशनी का प्रबन्ध कौन करता ?

प्रश्न—नगरों में प्रकाश का प्रबन्ध कौन करता है ?

अध्यापक कथन—इसी प्रकार मकान के साथ ही साथ अन्य स्थानों, सड़कों, गलियों तथा सार्वजनिक बगीचों, पार्कों आदि में बिजली का प्रबन्ध करती है जिससे कि रात में मुसाफिरों को आने जाने में परेशानी न हो।

प्रश्न—चित्र नं० २ में क्या दिखाया गया है ?

प्रश्न—पानी हमारे किस-किस काम में आता है ?

प्रश्न—नगरों में पीने का पानी किन-किन साधनों द्वारा प्राप्त होता है ?

अध्यापक कथन—इस कार्य का संचालन करना भी नगरपालिका का अनिवार्य कार्य है। वह इस कार्य के लिये एक अलग संस्था का निर्माण करती है। गंदे पानी को वह वैज्ञानिक विधियों द्वारा साफ करके नलों के द्वारा सम्पूर्ण नगर में भेजने का

प्रबन्ध करती है तथा साथ ही पशुओं के लिये हौदियाँ, स्थान-स्थान पर प्याऊ तथा सार्वजनिक स्थानों पर छिड़-काव का भी प्रबन्ध करती है ।

प्रश्न—चित्र नं० ३ में तुम क्या देखते हो ?

प्रश्न—यदि तुम सारे दिन कोई कार्य करते रहो तो क्या दशा होगी ?

प्रश्न—विद्यालय में थकान दूर करने के क्या-क्या साधन होते हैं ?

अध्यापक कथन—ठीक इसी प्रकार नगरों में नगरपालिका नागरिकों के लिये मनोरंजन के अनेकों साधन जुटाने का प्रबन्ध करती है ! बच्चों के खेलने के लिये क्रीड़ा स्थलों का प्रबन्ध तथा भिन्न प्रकार के मन बहलाव के साधनों का प्रबन्ध करती है ।

प्रश्न—आपके नगर में मनोरंजन के क्या-क्या साधन हैं ?

प्रश्न—नगरों में इन मनोरंजन का प्रबन्ध कौन-सी स्थानीय संस्था करती है ?

अध्यापक कथन—हम देखते हैं कि नगरपालिका जनता के मनोरंजन का पूरा पूरा ध्यान रखती है । वह स्थान-स्थान पर हाट, मेले, प्रदर्शनी, थियेटर्स आदि का प्रबन्ध करती है जहाँ व्यक्ति मनोरंजन कर सकता है और अपनी आवश्यकताओं की वस्तुयें भी खरीद सकता है । इसके अतिरिक्त वह स्थान-स्थान पर चित्रशाला, का भी प्रबन्ध करती है । इस प्रकार हम देखते हैं कि वह मनोरंजन का पूरा-पूरा ध्यान रखती है !

प्रश्न—हम एक स्थान से दूसरे स्थान पर किन-किन साधनों द्वारा जाते हैं ?

अध्यापक कथन—नगरपालिका इसी प्रकार एक स्थान से दूसरे स्थान पर आने जाने के लिये सस्ते किराये पर बस, टांगा, ट्रामगाड़ियाँ, आदि का भी प्रबन्ध करती है, जिससे कि जनता को किसी प्रकार की आने-जाने में परेशानियाँ न हों ।

प्रश्न—हम लोग अखबार, पत्रिकाएँ पढ़ने कहाँ जाते हैं ?

प्रश्न—स्कूल में पुस्तकालय, वाचनालय, का प्रबन्ध कौन करता है ?

अध्यापक कथन—जिस प्रकार हमारे स्कूल में पुस्तकालय, वाचनालय होता

है और उसका प्रबन्ध प्रधान अध्यापक करता है, उसी प्रकार नगर में नगरपालिका जनता के ज्ञान वृद्धि के लिये तथा संसार की प्रमुख घटनाओं से परिचित कराने के लिये पुस्तकालयों, वाचनालयों का प्रबन्ध करती है।

प्रश्न—तुम्हारे घर की मरम्मत कौन कराता है ?

प्रश्न—तुम अपने मकान को क्यों ठीक कराते हो ?

अध्यापक कथन—इसी प्रकार नगरपालिका जनता की सुविधा के लिये नई-नई सड़कों, पुल, पुलियाओं का निर्माण कराती है तथा हूटी-फूटी सड़कों की मरम्मत, सार्वजनिक पेशाब घर इत्यादि बनवाती है।

श्यामपट सारांश

(१) नगरपालिका के दो प्रकार के कार्य होते हैं :—

१—अनिवार्य कार्य

२—ऐच्छिक कार्य

(२) नगरपालिका नगरों में शिक्षा के लिये स्कूल खोलने का प्रबन्ध करती है।

(३) सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिये चिकित्सालयों, औषधालयों का प्रबन्ध करती है।

(४) नगरों में पानी, बिजली का प्रबन्ध करती है।

(५) नगरपालिका नगर में मनोरंजन के साधनों का प्रबन्ध करती है।

मनोरंजन के साधन

चित्रशाला, मेले, हाट प्रदर्शनी आदि !

पुनरावृत्ति—

प्रश्न १—नगरपालिका नगरों में शिक्षा का क्या प्रबन्ध करती है ?

प्रश्न २—जनस्वास्थ्य, सफाई का नगरपालिका क्या प्रबन्ध करती है ?

प्रश्न ३—नगरपालिका के ऐच्छिक कार्य कौन-कौन से हैं ?

प्रश्न ४—नगर में आग लगने पर नगरपालिका क्या करती है ?

प्रश्न ५—नगरपालिका सार्वजनिक सुविधा के लिये क्या-क्या कार्य करती है ?

गृह कार्य— प्रश्न १—तुम्हारे नगर की नगरपालिका कौन-कौन से से अनिवार्य कार्य कर रही है ? संक्षेप में लिखकर लाइये ।

पाठ सूत्र—२

दिनांक ६—३—६०

कक्षा ८

विषय—नागरिक शास्त्र

समय चक्र ४

प्रकरण—विद्यालय में नागरिकता की शिक्षा

अवधि ४० मिनट

विद्यालय—आर० ई० आई० हाई स्कूल

औसत आयु १२ वर्ष

दयाल बाग आगरा ।

छात्राध्यापक लक्ष्मीनारायण दीक्षित

सामान्य उद्देश्य— (१) छात्रों को सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक पक्ष का ज्ञान कराते हुए योग्य नागरिक बनने के लिये तैयार करना !

(२) छात्रों में यथाशक्ति सत्यशोध, न्याय, समानता, भ्रातृत्व सहकारिता तथा सेवा की भावना को जाग्रत करना ।

(३) छात्र पार्श्ववर्ती वस्तुओं तथा घटनाओं के निरीक्षण से विचार कर निर्णय शक्ति बढ़ा सकें और स्वस्थ राष्ट्रीयता के भाव जाग्रत कर सकें किन्तु वह राष्ट्रीयता अन्तर्राष्ट्रीयता एवं मानव हितों की अवरोधिनी हो !

(४) छात्रों में स्वतन्त्र अभिव्यंजना शक्ति एवं तार्किक शक्तियों को प्रोत्साहन देना जिससे वे आदर्श नागरिक बन सकें !

(५) छात्रों में सुन्दर चारित्रिक गुणों की वृद्धि करना !

विशिष्ट उद्देश्य— छात्रों को इस बात से परिचित कराना कि उन्हें विद्यालय में नागरिकता की शिक्षा किस प्रकार प्राप्त होती है !

पूर्व ज्ञान— छात्र नागरिक, नागरिकता, तथा विद्यालय की सहगामी क्रियाओं का ज्ञान रखते हैं ।

सहायक सामग्री— (१) स्काउट एक व्यक्ति के पैर में लगी चोट पर स्काफ़ से पट्टी बाँधता हुआ ।

(२) विद्यार्थी विद्यालय में सभापति के चुनाव के लिये वोट देते हुए ।

प्रस्तावना— प्रश्न—नागरिक किसे कहते हैं ?

प्रश्न—नागरिक में क्या-क्या गुण होते हैं ।

प्रश्न—विद्यार्थी इन गुणों की शिक्षा कहाँ पाता है ?

उद्देश्य कथन—आज हम पढ़ेंगे कि हमको विद्यालय में नागरिकता की शिक्षा किस प्रकार मिलती है।

प्रस्तुतीकरण—प्रश्न—जीवन में शिक्षा प्राप्त करना क्यों आवश्यक है ?

प्रश्न—तुम शिक्षा कहाँ प्राप्त करते हो ?

उचित शिक्षा

अध्यापक कथन—शिक्षा प्राप्त करने से विद्यार्थी का मानसिक विकास होता है ! वह अपने कर्तव्य को जान लेता है जिससे उसमें उत्तरदायित्व की भावना आ जाती है ! जो एक प्रजातन्त्र के नागरिक के लिये आवश्यक है !

प्रश्न—विद्यालय में समाज सेवा सम्बन्धी शिक्षा कौन-सी संस्था देती है ?

अध्यापक कक्षा में समाज-सेवा सम्बन्धी चित्र दिखाकर उससे सम्बन्धित प्रश्न पूछेगा !

प्रश्न—इस चित्र में तुम क्या देखते हो ?

प्रश्न—बैठा हुआ स्काउट अपने स्कार्फ से क्या कर रहा है ?

(सेवा का भाव)

अध्यापक कथन—इस प्रकार स्कूल में स्कार्टिंग की शिक्षा देकर छात्रों के हृदय में समाज सेवा के लिये उत्साह पैदा किया जाता है ! इससे परोपकार की भावना जाग्रत होती है जो उनको भविष्य में आदर्श नागरिक बनाती है !

प्रश्न—तुम स्कूल यूनियन के सभापति को किस प्रकार चुनते हो ?

अध्यापक कक्षा में वोट देते हुए विद्यार्थियों को चित्र दिखाकर उससे सम्बन्धित प्रश्न पूछेगा !

प्रश्न—इस चित्र में विद्यार्थी क्या कर रहे हैं ?

प्रश्न—वे वोट क्यों डाल रहे हैं ?

मताधिकार का उचित प्रयोग

अध्यापक कथन—जिस प्रकार विद्यार्थीगण किसी योग्य विद्यार्थी को अपना मत देकर यूनियन का सभापति चुनते हैं उसी प्रकार नागरिक भी

अपना मत किसी योग्य व्यक्ति को देकर प्रजातन्त्र में लोक-सभा आदि के सदस्यों को चुनते हैं ! इस प्रकार स्कूल में ही विद्यार्थी मताधिकार के प्रयोग करने की कला को सीख जाते हैं ।

प्रश्न—तुम्हारी स्कूल यूनियन क्या-क्या कार्य करती है ?

प्रश्न—इन कार्यों से क्या लाभ होता है ?

आत्म-निर्भरता तथा सहयोग की भावना

अध्यापक कथन—खेल-कूद की व्यवस्था, साहित्य गोष्ठी, उत्सव, अन्ताक्षरी, वाचनालय कार्य आदि यूनियन द्वारा करते हैं ! इससे विद्यार्थियों में आत्मनिर्भरता तथा सहयोग की भावना आ जाती है ! इस प्रकार विद्यार्थी विद्यालय में ही आदर्श नागरिकों के गुणों की शिक्षा प्राप्त करते हैं ।

प्रश्न—तुम्हारे स्कूल में कौन-कौन से खेल खिलाये जाते हैं ?

प्रश्न—इन खेलों से क्या लाभ है ?

प्रश्न—अच्छा स्वास्थ्य क्यों आवश्यक है ?

प्रश्न—खेलों के अतिरिक्त विद्यालय में स्वास्थ्य रक्षा के लिये क्या किया जाता है ?

(शारीरिक बल)

अध्यापक कथन—विद्यालय में अनेक प्रकार के खेलों द्वारा बालक का शारीरिक व्यायाम हो जाता है और उसका शरीर स्वस्थ तथा बलशाली हो जाता है ! स्वास्थ्य समितियों द्वारा स्वास्थ्य के नियमों तथा शारीरिक बल बढ़ाने पर जोर दिया जाता है । इस प्रकार विद्यालय में ही बल बढ़ाने का प्रोत्साहन दिया जाता है जोकि प्रत्येक नागरिक के लिये आवश्यक है ।

प्रश्न—गरीब विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त क्यों नहीं कर पाते ?

प्रश्न—गरीब विद्यार्थी किस प्रकार से अपना जीवन व्यतीत करते हैं ?

प्रश्न—गरीब विद्यार्थियों धनी विद्यार्थी की अपेक्षा कितना पैसा खर्च करते हैं ?

प्रश्न—अन्य विद्यार्थियों पर गरीब विद्यार्थी का क्या प्रभाव पड़ता है ?

प्रश्न—गरीब विद्यार्थियों की स्कूल में क्या सहायता की जाती है ?

प्रश्न—गरीब विद्यार्थियों की सहायता करने से अन्य विद्यार्थियों के अन्दर कैसी भावना जाग्रत होती है ?

(दीनों की सहायता)

अध्यापक कथन—प्रायः प्रत्येक स्कूल में एक गरीब विद्यार्थी दान-कोष होता है, जिसमें सभी विद्यार्थी कुछ दान देते हैं ! इससे गरीब विद्यार्थियों की फीस तथा पुस्तकों का प्रबन्ध हो जाता है ! विद्यालय में आने वाले कुछ गरीबों की सहायता भी चंदा एकत्रित करके विद्यार्थी कर देते हैं ! गरीब विद्यार्थियों के सम्पर्क में रहकर अन्य विद्यार्थी मितव्ययता भी सीख जाते हैं । इस प्रकार भविष्य में दीनों की सहायता करने का गुण उनमें विद्यालय में ही आ जाता है !

प्रश्न—विद्यालयों में तुम नियमों का पालन क्यों करते हो ?

प्रश्न—विद्यालयों में शान्ति व्यवस्था क्यों आवश्यक है ?

(कानून का पालन तथा सहनशीलता)

अध्यापक कथन—विद्यार्थी विद्यालय में नियमों का पालन करते हैं जिससे विद्यालय में शान्ति, सुव्यवस्था तथा अनुशासन रहता है ! इस प्रकार वे नियम पालन से प्रेम करने लगते हैं । भविष्य में राज्य के कानूनों का पालन करके आदर्श नागरिक बनते हैं ।

प्रश्न—व्यक्ति अपने विचारों को किस प्रकार प्रकट कर सकता है ?

प्रश्न—विद्यार्थी अपने विचारों को विद्यालय में किस प्रकार प्रकट करते हैं ?

प्रश्न—विद्यालय में विद्यार्थियों द्वारा भाषण देने से उनको क्या लाभ प्राप्त होता है ?

(विचारों की दृढ़ता एवं उनका आदान-प्रदान)

अध्यापक कथन—भाषण द्वारा विद्यार्थी अपने विचार प्रकट करता है तथा दूसरों के विचारों को जान लेता है, जिससे उसके विचारों में दृढ़ता और आत्मविश्वास में वृद्धि होती है ! आजकल प्रजातंत्र

राज्य में भाषण के द्वारा ही एक सफल नागरिक अपना प्रभाव जनता पर डालकर उसे चाहे जिघर मोड़ सकता है ! इस प्रकार भाषण के प्रभाव को विद्यार्थी विद्यालय में जान लेता है !

श्यामपट सारांश

- (१) विद्यालय में सेवा-भाव की शिक्षा स्कार्टिंग द्वारा मिलती है ।
- (२) विद्यार्थी विद्यालय में यूनियन के सभापति को चुनकर मताधिकार का उचित प्रयोग सीखते हैं ।
- (३) गरीब विद्यार्थियों की सहायता से उनमें गरीबों की सहायता करने की भावना जाग्रत होती है ।
- (४) विद्यालय में नियमों का पालन करने से विद्यार्थियों में कानून पालन करने की आदत पड़ती है ।
- (५) भाषण से विद्यार्थियों के विचारों में दृढ़ता एवं आत्म-विश्वास में वृद्धि होती है ।

पुनरावृत्ति :—प्रश्न—विद्यार्थियों को विद्यालय से सेवा-भाव की शिक्षा किस प्रकार मिलती है ?

प्रश्न—विद्यालयों में विद्यार्थी वोट देने का उचित प्रयोग कैसे सीखते हैं ?

प्रश्न—गरीब विद्यार्थियों की सहायता से अन्य विद्यार्थियों में कौन-सी भावना जाग्रत होती है ?

प्रश्न—कानून पालन करने की आदत विद्यालय में कैसे पड़ती है ।

प्रश्न—विद्यार्थी विद्यालय में भाषण देकर नागरिकता के किस गुण की प्राप्ति करते हैं ?

गृहकार्य :—विद्यालय में नागरिकता की शिक्षा पर एक संक्षिप्त लेख लिखो !

पाठ-सूत्र ३

दिनांक—५-३-१९६०

कक्षा—नवम्

विषय—नागरिक शास्त्र

समय-चक्र—षष्टम्

प्रकरण—नागरिक के कर्तव्य

अवधि—४० मिनट

विद्यालय—आर० ई० आई०

हाईस्कूल दयालबाग

औसत आयु—१५ वर्ष

छात्राध्यापक—सूरजमल वर्मा

सामान्य उद्देश्य—(१) छात्रों को नागरिकशास्त्र के अध्ययन के द्वारा आदर्श नागरिक बनने के लिये प्रोत्साहित करना ।

(२) छात्रों में विश्वबन्धुत्व के भाव जाग्रत करना जिससे वे मानव समाज की प्रगति में अपना सहयोग प्रदान कर सकें ।

(३) छात्रों में यथाशक्ति सत्यशोध, न्याय, समानता, भ्रातृत्व सहाकारिता तथा सेवा की भावनाओं को जाग्रत करना ।

(४) छात्रों को आधुनिक शासन प्रणाली का ज्ञान कराना ।

(५) छात्रों को सामाजिक तथा राजनैतिक व्यवस्था से परिचित कराना ।

(६) उनको एक आदर्श नागरिक के अधिकारों और कर्तव्यों का ज्ञान कराना जिससे वे उनका पालन करना सीख सकें ।

विशिष्ट उद्देश्य—छात्रों को नागरिक के कर्तव्यों का पूर्ण ज्ञान करना ।

सहायक सामग्री—(१) प्रजातन्त्रीय भारत का मानचित्र ।

(२) पं० जवाहरलाल नेहरू, महात्मा गान्धी तथा नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के चित्र ।

पूर्व ज्ञान—(१) छात्रों को अपने स्वयं, अपने परिवार, पड़ोस, मुहल्ला तथा अपने नगर या ग्राम का सामान्य ज्ञान है ।

(२) छात्र अपने समाज, राज्य तथा देश की स्थिति से भी परिचित हैं ।

(३) छात्र देश के समाज सेवकों तथा महात्मा नेतागणों के विषयों में भी ज्ञान प्राप्त कर चुके हैं ।

प्रस्तावना—प्रश्न—आजकल भारत में किस प्रकार की शासन प्रणाली प्रचलित है ?

प्रश्न—प्रजातन्त्र सरकार का चुनाव कौन लोग करते हैं ?

प्रश्न—सरकार के चुनाव में नागरिकों को किस प्रकार के उम्मीदवारों को मतदान करना चाहिये ?

प्रश्न—देश अथवा राज्य की उन्नति किनके कर्तव्यों पर निर्भर है ?

उद्देश्य कथन—आज हम नागरिकों के कर्तव्यों के विषय में अध्ययन करेंगे और देखेंगे कि उनका किस प्रकार पालन करना चाहिये ।

प्रस्तुतीकरण:—छात्राध्यापक प्रश्नोत्तर विधि द्वारा छात्रों से ही नागरिकों के कर्त्तव्यों को निकलवायेगा और स्वयं अपने कथन द्वारा उनका स्पष्टीकरण करेगा ।

प्रश्न—रोगों के फैलने का मुख्य कारण क्या है ?

प्रश्न—गन्दगी को किस प्रकार दूर किया जा सकता है ?

प्रश्न—निरोग तथा स्वस्थ शरीर का मनुष्य के जीवन में क्या महत्व है ?

अध्यापक कथन :—इस प्रकार प्रत्येक नागरिक का सर्वप्रथम कर्त्तव्य अपने स्वयं के प्रति है । उसे सदैव अपने शरीर को स्वस्थ, निरोग और शक्तिशाली बनाना चाहिये । रोगों से बचने के लिये सदैव अपने शरीर, घर, मुहल्ले तथा नगर को स्वच्छ रखना चाहिये जिससे कि जीवन सुखमय बन सके ।

प्रश्न—जन्म से ही बच्चों का पालन-पोषण कौन करता है ?

प्रश्न—माता-पिता अपने बच्चों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं ?

प्रश्न—बच्चों का बड़े होकर अपने माता-पिता के प्रति क्या कर्त्तव्य होना चाहिये ?

प्रश्न—उनको अपने छोटे भाई तथा बहन के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए ?

अध्यापक कथन :—इस प्रकार प्रत्येक नागरिक का दूसरा कर्त्तव्य अपने परिवार के प्रति है । उसको अपने माता-पिता तथा बड़ों की सेवा करनी चाहिये, उनकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिये तथा अपने से छोटों के साथ प्रेम का व्यवहार करना चाहिये ।

प्रश्न—तुम अपने मकान के पास तथा मुहल्ले में रहने वालों को क्या कहते हो ?

प्रश्न—पड़ोसियों के पास रहने से क्या-क्या लाभ हैं ?

प्रश्न—जो पड़ोसी आपस में प्रेम और सहयोग से नहीं रहते हैं तो उसका क्या परिणाम होता है ?

प्रश्न—सुखी और शान्त जीवन व्यतीत करने के लिये उनको आपस में किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए ?

अध्यापक कथन :—इस प्रकार प्रत्येक नागरिक का तीसरा कर्त्तव्य अपने पड़ोसी के प्रति है । उसे अपने साथ रहने वाले पड़ोसियों के प्रति

सदैव प्रेम, सहानुभूति तथा सहयोग का व्यवहार करना चाहिये जिससे आपस में सबका जीवन सुखमय बन सके ।

प्रश्न—तुमको किस ग्राम या नगर से प्रेम है ?

प्रश्न—तुम्हारा आगरा शहर से ही अधिक प्रेम क्यों है ?

प्रश्न—ऐसे स्थान के प्रति तुम्हारा क्या कर्त्तव्य होना चाहिए ?

अध्यापक कथन :—इसलिये नागरिक का चौथा कर्त्तव्य अपने ग्राम तथा नगर के प्रति है । उसे अपने जन्म स्थान की, चाहे वह ग्राम हो या नगर, सदैव उन्नति करनी चाहिये ।

प्रश्न—नागरिकों के अधिकारों की रक्षा कौन करता है ?

प्रश्न—राज्य नागरिकों की रक्षा के लिये क्या उपाय करता है ?

प्रश्न—जो व्यक्ति राज्य के नियमों को भंग करते हैं तो राज्य उनका क्या प्रबन्ध करता है ?

प्रश्न—यदि राज्य नियम और कानून न बनावे तो क्या दशा होगी ?

प्रश्न—इस प्रकार राज्य के नियम तथा कानूनों का क्या महत्व हुआ ?

अध्यापक कथन :—इस प्रकार प्रत्येक नागरिक का पाँचवाँ कर्त्तव्य राज्य के प्रति है । उसे राज्य के बनाये हुए सभी नियम तथा कानूनों का पालन करना चाहिये जिससे राज्य की व्यवस्था ठीक रह सके तथा नागरिकों के अधिकारों की भी सुरक्षा हो सके ।

(अध्यापक भारत के सच्चे सेवकों का चित्र प्रस्तुत करके निम्नलिखित प्रश्न करेगा) ।

प्रश्न—इस चित्र के मध्य में तुम किसका चित्र देखते हो ?

प्रश्न—महात्मा गान्धी ने देश की क्या सेवायें की थीं ?

प्रश्न—पं० जवाहरलाल नेहरू ने धनी परिवार में जन्म लेकर भी जेलों में कष्ट क्यों सहे ?

प्रश्न—सुभाषचन्द्र बोस ने देश के प्रति क्या त्याग किया ?

प्रश्न—इन महान् पुरुषों की सेवा तथा त्याग का क्या परिणाम निकला ?

प्रश्न—इस प्रकार देश की स्वतन्त्रता किन-किन बातों पर निर्भर रहती है ?

अध्यापक कथन :—इसी प्रकार प्रत्येक नागरिक का छठवाँ कर्त्तव्य अपने देश के प्रति है। उसे अपने देश की स्वतन्त्रता को स्थिर रखने के लिए सदैव सत्य सेवा, भक्ति और त्याग की भावना रखनी चाहिए जिससे देश की स्वतन्त्रता स्थिर रह सके।

(छात्राध्यापक प्रजातन्त्रीय भारत का मानचित्र प्रस्तुत करके छात्रों से निम्नलिखित प्रश्न करेगा) ।

प्रश्न—तुम्हारे सम्मुख किस देश का मानचित्र है ?

प्रश्न—भारत को जनतन्त्रीय राज्य क्यों कहते हैं ?

प्रश्न—भारत में यह जनता का राज्य कब से स्थापित हुआ है ?

प्रश्न—इससे पहले भारत की क्या दशा थी ?

प्रश्न—भारत को कितने दिनों बाद स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है ?

प्रश्न—यदि अब कोई अन्य राष्ट्र भारत पर आक्रमण करता है तो हम किसकी सहायता से उसकी रक्षा करेंगे ।

प्रश्न—फौज के संगठन के लिए किन-किन वस्तुओं की आवश्यकता होती है ?

प्रश्न—भारत के मानचित्र में कुल कितने प्रान्त प्रदर्शित किये गए हैं ?

प्रश्न—यदि इन प्रान्तों में किसी प्रकार अशान्ति फैल जाय तो उसे किस प्रकार शान्त किया जायगा ?

प्रश्न—पुलिस के संगठन के लिए किन वस्तुओं की आवश्यकता है ?

प्रश्न—इसी प्रकार शासन के अन्य सभी कार्यों के संचालन के लिए किन वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है ?

प्रश्न—इन सब कार्यों के लिये राज्य धन कहाँ से प्राप्त करता है ?

अध्यापक कथन :—इस प्रकार नागरिक का सातवाँ कर्त्तव्य यह हो जाता है कि उसे राज्य द्वारा लगाए करों को अवश्य देना चाहिए और आवश्यकता पड़ने पर देश की रक्षा तथा उन्नति के लिए तन, मन तथा धन न्योछावर करने के लिए तैयार रहना चाहिए ।

प्रश्न—समाज में किस-किस प्रकार के समुदाय होते हैं ?

प्रश्न—मनुष्य का इन समुदायों से क्या सम्बन्ध होता है ?

प्रश्न—मनुष्य इन समुदायों का संगठन क्यों करते हैं ?

प्रश्न—जिस समाज से मनुष्य का हित होता है उस समाज के प्रति मनुष्य का क्या-क्या कर्त्तव्य होना चाहिए ?

अध्यापक कथन :—इस प्रकार प्रत्येक नागरिक का आठवाँ कर्त्तव्य समाज के प्रति है । उसे अपने समाज को शक्तिशाली बनाने का प्रयत्न करना चाहिए । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है इसलिए समाज की उन्नति करना उसका मुख्य कर्त्तव्य हो जाता है ।

प्रश्न—प्रजातन्त्र सरकार का चुनाव कौन करता है ?

प्रश्न—जनता द्वारा प्रजातन्त्र सरकार का चुनाव किस प्रकार किया जाता है ?

प्रश्न—जनता को किस प्रकार के उन्मीदवारों को मत देना चाहिए ?

प्रश्न—यदि जनता अयोग्य व्यक्तियों को मतदान करे तो क्या परिणाम होगा ?

प्रश्न—इसलिए प्रजातन्त्र शासन में मतदान का क्या महत्त्व हुआ ?

अध्यापक कथन :—इसलिए नागरिकों का नवाँ कर्त्तव्य यह है कि उसे प्रजातन्त्र शासन को सफल बनाने के लिए योग्य, सच्चे, ईमानदार तथा समाज सेवा व्यक्तियों को मतदान करना चाहिए और उसे अपने मत का सदैव सदुपयोग करना चाहिए ।

प्रश्न—राष्ट्रीयता किसे कहते हैं ?

प्रश्न—संकीर्ण राष्ट्रीयता से तुम क्या समझते हो ?

प्रश्न—इस प्रकार की संकीर्ण राष्ट्रीयता से क्या परिणाम निकलता है ?

प्रश्न—विश्व युद्ध से क्या हानियाँ होती हैं ?

प्रश्न—विश्व में शान्ति किस प्रकार स्थापित की जा सकती है ?

अध्यापक कथन—इस प्रकार नागरिक का दसवाँ कर्त्तव्य विश्व के प्रति है । उसे अपने को विश्व का नागरिक समझना चाहिये । संकीर्ण राष्ट्रीयता की भावना से मुक्त रहना आवश्यक है । संसार में मानव मात्र को समान समझकर विश्व के कल्याण के कार्यों को अपनाना चाहिये ।

श्यामपट सारांश

- (१) प्रत्येक नागरिक अपने माता-पिता की सेवा करे तथा उनकी आज्ञाओं का पालन करे ।
- (२) नागरिक अपने पड़ोसियों से प्रेम का व्यवहार करे तथा उनके कार्यों में सहयोग तथा सहायता प्रदान करे ।
- (३) नागरिकों को चाहिये कि वे सदैव योग्य व्यक्तियों को मतदान करें ।
- (४) वे राज्य के नियमों का पालन करें तथा राज्य द्वारा निर्धारित करों को ठीक समय पर देने को तत्पर रहें ।

पुनरावृत्ति—(१) नागरिक को अपने माता-पिता तथा बड़ों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये ?

(२) नागरिक का अपने पड़ोसियों के प्रति क्या कर्तव्य होना चाहिए ?

(३) नागरिकों को अपने मतदान का किस प्रकार उपयोग करना चाहिए ?

(४) राज्य के प्रति नागरिक का क्या कर्तव्य है ?

गृहकार्य—आप सभी स्कूल तथा परिवार के प्रति कर्तव्यों के विषय में एक संक्षिप्त नोट लिखकर लाइये ?

विशेष अध्ययन योग्य पुस्तकें

लेखक	पुस्तक	प्रकाशक
Bining and Bining	:-“Teaching the Social Studies in Secondary Schools.”	McGraw—Hill Book Company New York, Toronto,
Hemming	:-“The Teaching of Social Studies in Secondary Schools”	Longmans, Green and Co. London, New York.
Highet, G,	:-“The Art of Teaching”	Methuen and Co. Ltd. London, 1951.
Horn, E.	:-“Methods of Instruction in the Social Studies.”	Charles Scribner's Sons, New York, 1937.
Harliokar	:-“The Teaching of Civics in India.”	
Harolika, L. B.	:-“The Teaching of Civics”	Padma Publications Ltd, Bombay.
Michaelis, John, U.	:-“Social Studies for Children in a Democracy.”	Prentice-Hall Inc, Englewood Cliffs, N. J. 1956.

-
- | | | |
|---------------------|--|--|
| Moffatt, M. P. | :—"Social Studies Instruction" | Prentice-Hall Inc.
New York. |
| Nesiah, K. | :—"Social Studies in the School." | Geoffrey Cumberlege Oxford University Press, 1954. |
| Mac Nee, E. A. | :—"Instruction in Indian Secondary Schools" | Oxford University Press, 1950. |
| Wesley, E. B. | :—"Teaching Social Studies in Elementary Schools." | D. C. Heath and Company Boston 1952. |
| Wesley, E. B. | :—"Teaching Social Studies in High Schools" | D. C. Heath and Company, Boston. |
| Government of India | :—"The Secondary Education Commission Report." | Ministry of Education, Publication Division, 1953. |
| Ford Foundation: | :—"Report of International Team." | Ministry of Education, Publication Division 1954. |

